ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, शृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -**शृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१ माता एवं माता वसुन्धरा ०४ ०४ १९८३---------- 10

वसुन्धरा रूप माता---------- 10

आदर्श माता मल्दालसा ---------- 11

वसुन्धरा रूप पृथ्वी---------- 11

महर्षि भारद्वाज का विज्ञान---------- 12

यत्र निर्माण ---------- 12

महर्षि वशिष्ठ मुनि द्वारा भगवान राम को अहिल्या ज्ञान---------- 13

अनुसन्धान की आवश्यकता ---------- 13

अहिल्या-प्रतिभा-यत्र---------- 13

वनस्पतियों की आयुर्वेदाचार्यों से वार्ता---------- 14

बन्धया दोष निवारक औषधि---------- 14

औषधियों द्वारा यज्ञ ---------- 15

२ संकल्पमयी संसार ०५ ०४ १९८३ ---------- 15

संसार एक माला---------- 15

माला का सूत्र ---------- 16

यजमान के रथ का द्यौ लोक को गमन---------- 16

याग द्वारा विचारों का भवन और साक्षात्कार---------- 17

आनन्द रुप परमात्मा ---------- 18

वसुन्धरा रुप परमात्मा ---------- 19

संकल्प ---------- 20

माता कौशल्या का संकल्प---------- 20

ऋषि परम्परा एवं गोत्र प्रणाली ---------- 21

ब्रह्माण्ड की विशालता ---------- 22

परम लक्ष्य ---------- 22

उपसंहार---------- 23

३ मृत्यु का स्वरूप ०६ ०४ १९८३---------- 24

मृत्यु---------- 24

मृत्यु के विषय में ऋषियों के विचार ---------- 24

मृत्यु कोई वस्तु नहीं---------- 25

मृत्यु की विवेचना ---------- 25

ब्रह्माण्ड की विशालता ---------- 26

परमाणुवाद ---------- 26

ऊर्ध्ववेता ---------- 26

मन की स्थिरता का उपाय ---------- 27

प्राणायाम ---------- 27

कुण्डलिनी शक्ति ---------- 27

प्राण और मन ---------- 28

वेदगान की महिमा ---------- 28

ब्रह्मचर्य ही जीवन ---------- 28

अन्न का महत्व ---------- 29

यज्ञ द्वारा सृष्टि का सन्तुलन ---------- 29

वाणी, मन और शब्द ---------- 30

मृत्यु की वास्तविकता ---------- 30

मृत्यु की मृत्यु ---------- 30

४ दीक्षा ०८ ०४ १९८३ ---------- 32

मानव का परम कर्तव्य ---------- 32

वेद का स्वाध्याय ---------- 32

आत्म-चिन्तन ---------- 33

दैनिक-याग ---------- 33

ज्ञान कर्म उपासना ---------- 33

कर्म की पाँच गतियाँ ---------- 33

ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर की दीक्षा ---------- 34

विद्यालय के प्रति कर्तव्य ---------- 34

५ यज्ञशाला का द्यौ-गामी रथ १० ०४ १९८३ ---------- 36

वेदोच्चारण के विभिन्न पाठ ---------- 36

''ओ३म'' माला रूप संसार का सूत्र ---------- 36

याज्ञिकता ---------- 37

राजा रावण के यहाँ अश्वमेध याग ---------- 37

यजमान के रथ का द्यौ-लोक को गमन ---------- 37

ऋषियों का अयोध्या गमन ---------- 38

भगवान् राम का उपदेश ---------- 38
विष्णु राष्ट्र का स्वरूप ---------- 39
राष्ट्र की चार धाराएँ ---------- 39
महर्षि भारद्वाज की यन्त्रावली ---------- 41
यन्त्र द्वारा द्यौ-गामी चित्र दर्शन ---------- 41
यज्ञ से राष्ट्र की पवित्रता ---------- 42
६ महर्षि भारद्वाज का विज्ञान दर्शन १२ ०५ १९८३ ---------- 44
माता की प्रतिभा ---------- 44
वेद मन्त्रों का स्वाध्याय ---------- 44
ब्रह्माण्ड की विशालता ---------- 45
स्वाहा की गति का दर्शन ---------- 45
पृथ्वी के खाद्य खनिजों का रहस्य ---------- 46
चन्द्रमा का दिवस ---------- 46
सूर्य उदय का प्रभाव ---------- 46
मण्डलों की माला ---------- 47
महर्षि विश्वामित्र का धनुर्याग ---------- 48
शिष्यों सहित महर्षि भारद्वाज का आगमन ---------- 48
अहिल्या-कृतिमा-यंत्र ---------- 49
आध्यात्मिक विज्ञान से ही भौतिक विज्ञान की सार्थकता ---------- 49
विनाश का द्योतक अभिमान ---------- 50
प्राणों की प्रतिष्ठा ---------- 50
प्राणेश्वर ---------- 51
७ अध्यात्म-चर्चा १३ ०५ १९८३ ---------- 53
वेद रूपी सूर्य ---------- 53
माला ---------- 53
शब्द की प्रतिभा ---------- 54
दण्डक वनों में धनुर्याग ---------- 54
भौतिकता विज्ञान के लिए अध्यात्म की अनिवार्यता ---------- 55
आत्मा और परमात्मा की छाया रूप प्राण ---------- 55
जीवन शक्ति का आधार ---------- 56

उद्बुद्धता ---------- 57
आध्यात्मिकवाद ---------- 57
ब्रह्मवर्चोसि ---------- 58
भौतिक विज्ञान ---------- 58
अज्ञानता ---------- 59
अन्धकार ---------- 59
मन और प्राण की एकरूपता ---------- 59
ज्ञानेन्द्रिय-विज्ञान ---------- 60
८ मानव उत्थान की दिशा १५ ०५ १९८३ ---------- 61
महर्षि नारद का भ्रमण-यन्त्र ---------- 61
चित्त ---------- 61
चित मण्डल के विभाग ---------- 62
याग द्वारा विज्ञान का प्रादुर्भाव ---------- 63
वैज्ञानिकों को याग की महता का संज्ञान ---------- 63
तरंगवाद ---------- 64
आधुनिक वैज्ञानिकों की अज्ञानता ---------- 64
दूषित चित्रों का प्रभाव ---------- 64
धर्म के नाम पर रूढियाँ ---------- 65
रामायणकालीन पुरुषों का वास्तविक स्वरूप ---------- 65
रूढ़ियों से धर्म परम्परा का हृस ---------- 66
धर्म का स्वरूप ---------- 66
समाज की एक सूत्रता का आधार ---------- 67
विद्यालयों में निर्वाचन ---------- 67
मानव की चार संज्ञायें ---------- 67
तप में जीवन ---------- 68
९ आहार शुद्धता की प्रभा ३१ ०३ १९८५ ---------- 70
अनुष्ठान में जीवन ---------- 70
परमात्मा का शिवमयी रूप ---------- 70
देवासुर संग्राम ---------- 71
राष्ट्र की भव्यता का आधार ---------- 72

राम राज्य ---------- 72
आधुनिक क्रिया कलाप ---------- 72
पवित्र आहार का प्रभाव ---------- 72
अनुशासन के लिए राष्ट्र निर्वाचन ---------- 72
सुगन्ध का अभिप्राय ---------- 73
शुद्धिकरण की अनिवार्यता ---------- 73
याज्ञिक भगवान् राम ---------- 73
विज्ञान की महानता ---------- 74
दूषित वायुमण्डल से रावण का विनाश ---------- 74
भस्मासुर के विनाश का अलंकार ---------- 74
विज्ञान के दुरुपयोग से विनाश ---------- 74
आधुनिक विज्ञान का भस्मासुर स्वरूप ---------- 75
विज्ञान, प्रभु की वैदिक देन ---------- 75
वर्तमानकाल की आहार अशुद्धता ---------- 76
कर्तव्यवाद में प्रविष्ट ---------- 76
आहार की पवित्रता प्रथम ---------- 77
भौतिक विज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान में पिरोया हो ---------- 77
रूढ़िवाद के कारण रक्तभरी क्रान्ति ---------- 77
आधुनिक धर्म निरपेक्षता ---------- 78
१० राजा ज्ञानश्रुति एवं गाड़ीवान रेवक मुनि का उपाख्यान ०८ ०४ १९८५ ---------- 79
अनुपम जगत् ---------- 79
राजा ज्ञानश्रुति की जिज्ञासा ---------- 79
गौ-उपाख्यान ---------- 80
सेवा का अभिप्राय ---------- 80
ब्रह्म एवं चरी ---------- 80
ऊर्ध्ववेता सम्बन्धी उपाख्यान ---------- 81
इन्द्रिय निग्रह उपाख्यान ---------- 81
याग से मृत्यु की उपरामता ---------- 82
मृत्युंजयी ---------- 82
नेत्रों का प्रकाश सूर्य ---------- 82

वनस्पतियों द्वारा गुणों का प्रकटीकरण ---------- 83

हृदय का स्थान ---------- 83

निष्पक्ष वाणी का प्रभाव ---------- 83

औषधियों का प्रभाव---------- 84

शरीर-निर्माता---------- 84

मस्तिष्क के प्रकार ---------- 85

प्राणों का समावेश---------- 85

योगी के द्वारा क्षुधा, पिपासा की पूर्ति ---------- 85

योगियों की प्रतिभा---------- 86

चन्द्रमा के कार्य---------- 86

११ राष्ट्रीय क्रियाकलाप याग ०९ ०४ १९८५---------- 89

गृह की पवित्रता का आधार ---------- 89

मानव जीवन की पवित्रता---------- 89

यज्ञोमयी विष्णु---------- 89

याग से वायुमण्डल का शोधन---------- 90

वैदिक काल की गरिमा ---------- 90

रूढ़ियाँ---------- 91

विज्ञान की त्रासदी---------- 91

विज्ञान की दिशाहीनता ---------- 91

चित्रावलियों की दुरुपयोगिता ---------- 92

महर्षि भारद्वाज का विज्ञान---------- 92

ऋषियों के तपे हुए परमाणुओं का प्रभाव ---------- 92

तरंगवाद ---------- 92

महाराजा हनुमान एवम् गणेश का विज्ञान---------- 93

राष्ट्रोन्नति के लिए पवित्र आहार ---------- 93

राजा सोमतीति द्वारा कृषि उद्यम ---------- 93

प्रत्येक गृह में याग---------- 94

यथा राजा तथा प्रजा ---------- 94

राष्ट्र विनाशक कारण---------- 94

कर्तव्यवाद ---------- 95

१२ महर्षि वशिष्ठ एवम् महर्षि सोमकेतु का सम्वाद ११ ०४ १९८५--- 96
ब्रह्मवेता ही मृत्युंजयी --- 96
मृत्युंजयी बनने की पात्रता --- 96
मृत्युंजयी बनने का सहज उपाय --- 97
इन्द्रियों के विषयों का साकल्य--- 97
ब्रह्म की प्रतिष्ठा --- 98
चन्द्रमा की व्यापकता -- 99
अमृतदाता चन्द्रमा -- 99
सोमलता -- 99
चाक्राणी-गार्गी का ब्रह्मचर्य पर उद्बोधन -- 100
नाभि व हृदय के मध्य अमृत --- 101
आदित्य की बृहद् विवेचना --- 102
लोक-लोकान्तरों की विशालता -- 102
इन्द्र की विशद व्याख्या--- 103
अनुपम ब्रह्माण्ड--- 103
अश्वमेघ याग--- 103

१ माता एवं माता वसुन्धरा ०४ ०४ १९८३

जीते रहो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमाका गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वेद का प्रत्येक मन्त्र ब्रह्म की गाथा गाता रहता है। जैसे माता का पुत्र माता का वर्णन करता रहता है और उसका उद्गीत गाता रहता है, उसी प्रकार यह पृथ्वी इस ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। क्योंकि जो पृथ्वी के विज्ञान को जान लेता है, वह ब्रह्माण्ड की गाथा में रत हो जाता हैं जो पुत्र माता को जान लेता है वह माता का उद्गीत गाता ही रहता है। जो वेद मन्त्रों की प्रतिभा को जानता है वह उस मन्त्र के ऊपर अनुसन्धान करता हैं, कि ये वेद मन्त्र क्या कहता है? वेद क्या कह रहा है ? यह प्रकाश में प्राणों की चर्चा कर रहा है, ज्ञान विज्ञान की चर्चा करता रहता है। वेद मन्त्र के ऊपर अध्ययन किया जाता है, क्योंकि वह ज्ञान और विज्ञान की भी चर्चा कर रहा हैं परमात्मा की जो प्रतिभा है अथवा उसकी जो महिमा है, उसका गुणगान गा रहा है।

वसुन्धरा रूप माता

बेटा! हमने बहुत पुरातन काल मैं तुम्हें यह निर्णय देते हुए कहा था कि वेद का मन्त्र उस परमपिता परमात्मा को वसुन्धरा के रूप में परिणत का रहा है, इसे वसुन्धरा कह रहा है। आज का भी वेद मन्त्र कह रहा था, ''वसुन्धरा ब्रह्मे लोकं यथा'' क्योंकि हमारे यहाँ वसुन्धरा के बहुत से पर्यायवाची शब्द आते हैं जैसे वसुन्धरा नाम माता का है। माता का नाम प्रायः सर्व प्रथम आता हैं जैसे गऊ माता है। वह शिशु को अपने गर्भ में धारण करती है परन्तु वह नहीं जानती है कि शिशु उसके गर्भ में केसे पलते रहते है? परमपिता परमात्मा ने इस संसार का प्रजनन किया अथवा निर्माण किया। तो ''स्वान्ततः ब्रह्म वस्तुतः सुखः'' यह विचारा गया कि वह विन्दु कहाँ रहता है, मानों वह ब्रह्म कहाँ रहता है? तो विचारा गया कि वह बिन्दु तो सृष्टि में देखा है। बिन्दु मानो प्रत्येक की आभा में विद्यमान है। एक बिन्दु कहा जाता है, परमपिता परमात्मा ने बेटा उस बिन्दु को महतत्व से लाकर के अन्तरिक्ष में गति प्रवेश कराना चाहा तो वह रत हो गया, वह बिन्दु बाहृय प्रदेश में गमन करने लगा तो वहाँ भी रत हो गया, वह बिन्दु बेटा! जब अग्नि में प्रवेश किया तो अग्नि में भी रहने लगा। वही बिन्दु जब आपो में प्रवेश किया तो आपो में रत हो गया। आपो में जब वह बिन्दु रत हो गया तो माता के भी आँगन में बेटा! वह बिन्दु प्रवेश कर गया। माता के आँगन में जब वह आपो में बिन्दु प्रवेश कर गया तो आपो में आपो का मिलान हो गया।

मेरे प्यारे! जब मैं अपनी माता से प्रश्न करता रहता था कि मातेश्वरी! जब यह बिन्दु तेरे गर्भ में प्रवेश हुआ तो उसका आशय क्या है, उसका उद्देश्य क्या है, उसका प्राप्तु क्या है। तो माता मौन हो गयी क्योंकि उसे ज्ञान नहीं है। विचारा गया कि कौन विद्युत दे रहा है ? कौन वेग दे रहा है? कौन उसे तपा रहा है? कोई प्रकाश दे रहा है, कोई विद्युत दे रहा है परन्तु उसका उतर नहीं प्राप्त हुआ। तो विचार विनिमय से वेदमन्त्र के ऊपर बेटा पहुँचे, अध्ययन किया गया तो ''मनत्वां देवाः दिव्यां जगत प्रह्रे असतुः''मेरे प्यारे वेद मन्त्र यह कह रहा है : ''तनु बिहन्तां देवा ब्रह्म'' विचार यह प्रतीत होता है कि यही बिन्दु है जो वहाँ माता के गर्भस्थल में विद्यमान है आपो उसका आसन बना हुआ है आपो ही उसका ओढ़न है ही मानो गान बना है आपो का अभिप्राय है जल, अमृत, देखो वही उसमें ओत प्रोत हो रहा है ''बिन्दुवाः त्वे ब्रह्मे देवा'' मेरे पुत्रो आगे चिन्तन करने से प्रतीत हुआ कि उस माता के पुत्र को बताने वाला यह ब्रह्म है। अग्नि तपा रही है सूर्य प्रकाश दे रहा है चन्द्रमा अपनी शीतलता दे रहा है, वशिष्ठ उसे विवेक दे रहा है, अरुन्धती बुद्धि दे रही है, नाना तारा मण्डलों की प्रकाशमयी ज्योति बना करके माता की

पुरातत नाम की नाड़ी से समन्वय करके नाभि के द्वारा वह प्रकाश देता है उस काल में उस माता का नाम वसुन्धरा कहलाता है। वेद कह रहा है जिसके गर्भ में बेटा! वह बिन्दु हैं, वहाँ पनप रहा है ''वातस् चन्द्रमे प्रह्वाः देवा'' मेरे पुत्रो! शिशु पनप रहा है परन्तु माता को ज्ञान नहीं है वह केवल वसुन्धरा के रूप में है। वेद बेटा! उसे वसुन्धरा कह रहा है, वसुन्धरा उच्चारण कर रहा है क्योंकि उसके गर्भ में हम बस रहे हैं, वसुन्धरा का हम पर उपकार है। नाना प्रकार की धातु का प्रपात बन करके अमृत को प्रदान किया जा रहा है। बालक पनप रहा है, माता को कोई प्रतीत नहीं हो रहा है, नस नाड़ियों का निर्माण हो रहा है, निर्माणवेता निर्माण कर रहा है, वैज्ञानिक बन करके ''यन्मं ब्रह्मे सुखः'' उसका निर्माण कर रहा है परन्तु मेरी भोली माँ, उसको ज्ञान नहीं है, कौन निर्माण कर रहा है ? केसे निर्माण हो रहा है।

आदर्श माता मल्दालसा

एक समय बेटा! माता मल्दालसा के गर्भस्थल में जब आत्मा का प्रवेश हुआ तो महर्षि प्रस्केतु मुनि उस समय उनके पूज्यपाद गुरु थे, वे वहाँ पहुँचे। मल्दालसा ने आसन को मुक्त किया, आइये, भगवन! उन्होंने मल्दालसा से कहा हे पुत्री! मैंने जाना है कि आत्मा से तू चर्चा करती रहती है, यह श्रवण किया है। माता मल्दालसा ने कहा प्रभु! हे पूज्यपाद! मैं आत्मा से वार्ता तो कर लेती हूँ परन्तु आत्मा की जो प्रतिभा है, मेरे से दूरी रहती है। मैं निर्माणवेता को जानना चाहती हूँ। एक महतत्व की प्रतिभा आकर के बिन्दु-रूप में एक निर्माण की धारा वृत होती रहती है, मैं उसे जानना अवश्य चाहती हूँ। मेरे प्यारे! माता मल्दालसा को ऋषिवर ने कहा हे पुत्री! इसके ऊपर और चिन्तन करो, गम्भीर चिन्तन करो। बेटा! देखो, नवधा में से कुछ मन्त्रों को लिया। नवधा में से सूत्रों को लेकर के उन्होंने अध्ययन करना प्रारम्भ किया। बेटा मुझे स्मरण ऐसा आता रहता है कि ऋषियों ने ऐसे बहुत से स्पष्टीकरणकराते हुए कहा है कि आत्मा से यदि तुम्हें वार्ता प्रगट करनी है तो तुम अन्तर्मुखी हो जाओ। अन्तर्मुखी होकर के तुम आत्मा से चर्चा करने का प्रयास करो।

तो मेरे पुत्रो! ऐसा मुझे कुछ स्मरण है कि माता मल्दालसा ब्रह्माण्ड विद्या में चली जाती और अपने अन्तर्हृदय में आत्मा की जो किरणें उत्पन्न होती, उन किरणों को जानती रहती। माता अपना भाव दे रही है, बुद्धिमता दे रही है, संसार का शाकल्य भी परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की चर्चा कर रहा है। मेरे प्यारे! माता उसे एक नवीन प्रमाण दे रही है। मुझे स्मरण है माता मल्दालसा ने तीन सन्तानों वफो जन्म दिया, महर्षि प्रवाहण महर्षि शिलक और महर्षि दालभ्य। ये तीनों ही पुत्र माता मल्दालसा के जो पाँच वर्ष की आयु होते ही माता के सहयोग से ब्रह्मवेता बन गये, ब्रह्मा की चर्चाएँ करते, और ब्रह्म के नाम से देखो ''प्राणं ब्रह्मः मनस्वतम्'' प्राणों की चर्चा करते रहते थे। विचार विनिमय क्या है मेरी पवित्र माता! तू अपनी सन्तान से वार्ता प्रगट कर, तू उस आत्मा से चर्चा कर, जो आत्मा तेरा पुत्र बन कर, जो उपाधि में तेरे समीप आने वाला है, तेरा महत्वपूर्ण गान गाने वाला है। क्योंकि पुत्र ही एक ऐसा है जो माता का गान गाता है कोई और संसार में माता का गान नहीं गाता है। मेरे प्यारे! देखो, यह महतत्व को धारण करने वाली कर्तव्यदावृ बन करके एक महान मानव बनाती है।वसुन्धरा का अभिप्राय है जिसके गर्भस्थल में हम वशीभूत रहते हैं जिसके आँगन में हम वशीभूत रहते हैं उस माता का नाम वसुन्धरा कहलाता है।

वसुन्धरा रूप पृथ्वी

अब मुनिवरो! देखो, द्वितीय वसुन्धरा का वर्णन आता है। वसुन्धरा का द्वितीय पर्यायवाची शब्द पृथ्वी है। मेरे प्यारे! देखो, माता के गर्भस्थल से जब मानो शिशु पृथक् हो जाता है, संसार के क्षेत्र में आ जाता है तो उस समय

बेटा! कौन माता बन रही है? उसका लालन पालन तो गर्भस्थल में मानो पुरातत नाड़ियों से हो रहा था, पंचम नाड़ियों से हो रहा था, परन्तु यहाँ कौन पालन करेगा? मेरे पुत्रो! जब हम माता पृथ्वी के गर्भस्थल से पृथक् हो जाते हैं तो बेटा! यह पृथ्वी वसुन्धरा बन जाती है हम अपनों में बस जाते हैं। अपने नाना गृहों का निर्माण कर लेते हैं। यह माता पृथ्वी कहीं मानव को खनिज दे रही है, कहीं मानव को खाद्य प्रदान कर रही है। मेरे पुत्रो देखो! इस महान माता पृथ्वी के गर्भ में, इस वसुन्धरा के गर्भ में, कौन-सी ऐसी वस्तु नहीं है? कौन-सा ऐसा प्रकाश पिण्ड नहीं है जो वसुन्धरा के गर्भ में न हो? मुझे बहुत-सा काल स्मरण आता रहता है जब वैज्ञानिकों ने, गम्भीर पुरूषों ने माता वसुन्धरा के सम्बन्ध में बेटा! अपनी विवेचनाएँ प्रगट कीं। परन्तु देखो, आज मैं तुम्हें एक वाक्य प्रगट कराने जा रहा हूँ।

महर्षि भारद्वाज का विज्ञान

मेरे पुत्रो! देखो, हमारे यहाँ महर्षि भारद्वाज मुनि हुए हैं भारद्वाज मुनि विज्ञान के ।केत थे। मेरे प्यारे! देखो! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज भगवान् राम और नाना ब्रह्मचारी जब अध्ययन करते रहते थे विद्यालय में, तो बेटा! वे वसुन्धरा की चर्चा करते रहते थे। वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मचारियों के मध्य में मानो के शिशु की चर्चाएँ, कभी वसुन्धरा की चर्चाएँ, तो वसुन्धरा में पृथ्वी को ग्रहण करते रहते थे क्योंकि अहिल्या नाम की पृथ्वी का वर्णन होता रहता है। वेद के ऋषि ने यह कहा कि 'सम्ब्रहन्ताः ब्रह्म लोकां मूलतः' कि हे राम! हे ब्रह्मचारियो! वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकार के धातु का प्रपात बनता रहता है। मानो धातु-प्रपात का निर्माण हो रहा है तो इसके ऊपर हमें चिन्तन करना चाहिए। जैसे हमारे यहाँ प्रातःकालीन याग होता है और याग भी वसुन्धरा कहलाता है क्योंकि समस्त ब्रह्माण्ड इस याग में परिणत रहता है उसी प्रकार, जैसे पृथ्वी में आधारित रहने वाला वसुन्धरत्व कहलाता है। इसी प्रकार ऋषि कहता है हे राम! तुम्हें भी अहिल्या के गर्भ को जानना चाहिये। इस गर्भ में, जिसमें हम विद्यमान हैं, विद्यालय बनाये हुए हैं, गृहों का निर्माण किये हुए हैं, उस माता के लिये हमें सदैव याज्ञिक रहना चाहिए। क्या यह मानव इतनी जानकारी करता है, अपनी माता के गर्भ की? बेटा! आयुर्वेद वाला प्राणी, आयुर्वेद का अध्ययन करके नाना प्रकार की वनस्पतियों को जान लेता है। उस माता के गर्भ में वैज्ञानिक-जन आ करके नाना प्रकार के रत्नों को जानने लगते हैं जो इसके गर्भ में निर्माणित हो रहे हैं। सूर्य बेटा! वसुन्धरा को तपायमान कर रहा है, जल से प्रताप लेकर के इस पृथ्वी को तपा रहा है, पृथ्वी के गर्भ का निर्माण कर रहा है। उसके गर्भ में कहीं खनिज उत्पन्न हो रहा है, कहीं खाद्य उत्पन्न हो रहा है। उस खनिज के ऊपर विचार विनिमय करने लगो तो बेटा! एक अनन्तता दृष्टिपात आयेगी। चारों प्रकार की सृष्टि का निर्माण मानो उस माता के गर्भस्थल में स्वतः ही हो रहा है। सबसे प्रथम स्थावर, अण्डज, उद्भिज और जद्दम चारों प्रकार की सृष्टि का निर्माण हो रहा है। मेरे प्यारे! यह माता के गर्भ में ही तो हो रहा है परन्तु चारों प्रकार की सृष्टि के निर्माण में उस परमपिता परमात्मा का विशाल विज्ञान है।

यन्त्र निर्माण

वैज्ञानिकों ने कहा कि तुम यन्त्रों का निर्माण करो तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज, ब्रह्मचारी सुकेता, भगवान् राम, एक श्वेतकेतु ऋषि थे वे चतुर्थ विद्यमान होकर के भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया जिसको ''अहिल्य प्रतिभा वसुन्धरकेतु'' यन्त्र कहते हैं, उस यन्त्र में यह विशेषता थी कि पृथ्वी के गर्भ में बेटा! द्वि ;दोद्ध योजन की उसकी तराई में जितना भी खनिज इस प्रकार से गति कर रहा था उसका चित्र उस यन्त्र में आ जाता था। उसमें चित्रण होता रहा और जो चित्रण होता रहा उसको दृष्टिपात करके उस माता पृथ्वी के गर्भ को, वसुन्धरा के गर्भ को, बेटा जानने के लिये मानव ने बहुत प्रयास कियाँ वैज्ञानिकों ने इसके ऊपर

अनुसन्धान किया।

महर्षि वशिष्ठ मुनि द्वारा भगवान राम को अहिल्या ज्ञान

मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आता रहता है कि भगवान् राम को महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने नाना प्रकार की आभाएँ प्रगट की, नाना प्रकार की आभा में यह जानते हुए कि बेटा! पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की धातुओं का प्रपात पनप रहा है कहीं जल को सूर्य तपा करके उसका रसायन बनाता है, जो वाहनों के कार्य में आता है। कहीं सूर्य की किरणों से स्वर्ण का निर्माण हो रहा है, रश्मियों का निर्माण हो रहा है। वह सूर्य ही तपाने वाला है। कहीं नाना प्रकार के खनिजों का निर्माण हो रहा है, जिनसे बेटा! यन्त्रों का निर्माण होता है, यन्त्रों की आभा का उपयोग किया जाता है। मेरे प्यारे! देखो, यह माता वसुन्धरा कहलाती है जब शिशु माता के गर्भ से पृथक् होकर पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करता है, केसा अन्नाद प्रदान कर देती है। मैं इससे पूर्व बेटा! अन्नों की चर्चा कर रहा था। एक अन्न है बेटा! जो पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न होता है। एक ही पौधा है और पौधे पर दो प्रकार का अन्न है, एक को पशु पान कर रहा है, एक को मानव पान कर रहा है। वाह रे देव! तू कितना विचित्र है। हे माता वसुन्धरा! तेरे गर्भ में से क्या उत्पन्न हो रहा है? मेरे प्यारे! एक ही पौधा है एक अन्न को मेरी माता भोजनालय में तपा रही है, एक पौधे के निचले भाग वफो पशु पान कर रहा है। जो पान कर रहा है वह यन्त्रों में तप करके दुग्ध के रूप में परिणत हो जाता है। मेरे प्यारे प्रभु! ये माता केसी वसुन्धरा है माता की जैसे लोरियों से दुग्ध की स्थापना होती है।

अनुसन्धान की आवश्यकता

मेरे प्यारे! देखो, माता पृथ्वी के गर्भ में क्या वस्तु नहीं है जिसके ऊपर मानव अनुसन्धान नहीं कर सकता। प्रत्येक वस्तु अनुसन्धान चाहती है, विचार चाहती है, चिन्तन मनन चाहती है। हे वसुन्धरा! तुझे वेद अहिल्या कहता है तुझे वसुन्धाणी भी कहता है, अहिल्या भी कहता है। जब तू चन्द्रमा रूपी गौतम से मानो प्रकाश में आती है उससे तू रत्नादि को दे सकती थी परन्तु उस काल में तू अहिल्या बन गयी थी।

अहिल्या-प्रतिभा-यन्त्र

मेरे प्यारे! देखो, उसी प्रकार अहिल्या-प्रतिभा यन्त्रों का निर्माण करने वाले महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ एक यन्त्र निर्माण किया था किसी काल में, वह ब्रह्मचारी श्वेतकेतु की देन थी उनके विद्यालय में। उनके यहाँ एक यन्त्र का निर्माण हुआ था जिसको पूर्वीय दृष्टि का यन्त्र कहते थे। पूर्वीय दृष्टि के यन्त्र का अभिप्राय यह था कि सूर्य से जो किरणें आती हैं और उन किरणों में जो परमाणुवाद था। उस परमाणु के यन्त्र में चित्र बन जाते थे और वो चित्र कौन से, जो सूर्य की किरणें, पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में, जा करके एक दूसरी धातु का समन्वय करती रहती थीं। एक से परमाणु लेती थी, समन्वय होकर उनके चित्र परमाणु यन्त्र में आ जाना और उन चित्रों से वैज्ञानिक यन्त्रों का निर्माण करते रहते थे।

तो मेरे पुत्रो! देखो, इस प्रकार के यन्त्र यहाँ थे परन्तु मैं देखो, अहिल्या की चर्चा नहीं कर रहा हूँ, विचार यह देने जा रहा हूँ कि हमारे यहाँ विद्यालयों में आचार्य जन आत्मचर्चा करते हुए, आत्म-अध्ययन को ले जाते हुए अपने में महान और पवित्र बनाना उनका महान उपकार कहलाता था। विचार विनिमय क्या? हे माता वसुन्धरा! तेरे गर्भस्थल में आये हैं। कहीं याग के रूप में परिणत होते हुए प्रभावित कर रही है, कहीं तू अपने में मिलाती हुई, कहीं महान बनाती हुई। अपने जीवन को महानता में मानव ले जा करके तेरे गर्भस्थल की वार्ता को विचार और चिन्तन में लाता रहता है।

आत्म उत्थान

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, ना मैं यह व्याख्यान देने आया हूँ मैं यह निर्णय देने आया हूँ कि हमारे यहाँ वसुन्धरा नाम माता का है, तो माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है, यह जो पृथ्वी है, यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। मानो देखो, याग पृथ्वी है जो सूर्य की किरणों के साथ गति करती रहती है। सूर्य का इतना विशाल मण्डल है कि मैंने पुरातन काल में तुम्हें निर्णय दिया था कि तीस लाख पृथ्वी इसमें ओत-प्रोत हो जाती हैं नाना पृथ्वियाँ नाना देखो, सूर्य की परिक्रमा कर रही है। देखो, मुनिवरो! रेनकेतु परमाणु है उस परमाणु के अन्तर्गत मुनिवरो! देखो, अब वे परमाणु गति करते रहते हैं। देखो, मानव का शब्द जाता है, शब्द के साथ में जब परमाणु जाते हैं, तो एक सुनीत नाम का परमाणु है, उसके अन्तर्गत ऋषियों का जो आकार बना हुआ है, उस शरीर को, उतने आकार में मानो वो परमाणु परिक्रमा करते हैं, उसमें आकार का चित्र बन करके शब्द के साथ गति करता रहता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! नाना पृथ्वियाँ नाना देखो, सूर्य की परिक्रमा कर रही हैं, सूर्य में प्रमाणित हो रही हैं। सूर्य उन पृथ्वियों को अपने में प्रमाणित कर रहा है।

वनस्पतियों की आयुर्वेदाचार्यों से वार्ता

तो मुनिवरो! देखो, यह जो नाना पृथ्वियाँ है इनमें मानो देखो, नृत्य हो रहा है वैज्ञानिक-जन का, आयुर्वेदाचार्यों का। मुनिवरो! देखो, नाना प्रकार की बनस्पतियों के विज्ञान को जान करके वैद्यराज बनते हैं उनके सुप्तावस्था में वनस्पतियाँ आ करके अपने गुणों को मुक्त करती रहती थीं। वनस्पतियाँ अपने गुणों का गुणवादन करती रहती थीं। महात्मा भुंजु के द्विगुण ;दोनों गुणवानद्ध पुत्र अश्वनि-कुमारों ने एक सौ बारह वर्ष तक आयुर्वेद के ऊपर अध्ययन किया और अध्ययन करके उन्होंने ''पृथ्वी पुरातन सम्प्रद्वा देवं ब्रह्मं लोकाः'' कहा कि यह तो भयंकर विषय है। किसी वनस्पति में चन्द्रमा प्रधान है, किसी में सूर्य प्रधान है तो किसी में पृथ्वी। नक्षत्र अवृत होते रहते हैं। हमारे यहाँ कुछ नक्षत्र है, उस नक्षत्र में बहुत सी वनस्पतियों को, औषधियों को, उस नक्षत्र में पृथ्वी से अपने में ग्रहण करते हैं उनको सफल बनाते हैं उसी में उस औषधि का धर्म है रेनकेतु का मिलान कर देते हैं तो मानो बेटा! जीवन शक्ति प्रदान की जाती है इसी प्रकार अश्वनि कुमारों ने एक समय महात्मा दधीचि के संरक्षण में उनके यहाँ एक वैद्यराज थे जिनका नाम सोनुधय ऋषि था। जिनका 300 वर्ष का अध्ययन था आयुर्वेद के विज्ञान के ऊपर, यह जो विज्ञान है यह औषधि-विज्ञान।

बन्धया दोष निवारक औषधि

हमारे यहाँ एक कृतिका नाम की औषधि होती है। यह कृतिका नामक, औषधि केवल कृतिका नक्षत्र में जब रोहिणी नक्षत्र का मिलान होता है तभी उस औषधि को पृथ्वी से लिया जाता है, ले करके पीपल का पंचाध् में मिला करके, जिस माता के गर्भस्थल में पुत्र की स्थापना नहीं हो, उसको रोहिणी नक्षत्र में प्रदान करने से, पिलाने से माता को देखो! गौ दुग्ध के साथ में पिलाने से उस माता को पुत्र की प्राप्ति हो जाती है। इस प्रकार का विज्ञान आयुर्वेद आचार्यों ने बहुत-सी प्रतिभा में कृत किया है, उसको जानने का प्रयास किया है। विचार-वेताओं ने यह कहा है कि एक औषधि ऐसी है मानो उसके निचले भाग को लिया जाता है तो उसके लगाने से जिह्वा मौन हो गयी है तो उसके ऊपर के औषधि को लेकर के उसको मानो पात बनाकर आहार किया गया तो देखो, रसना वाचिक हो गयी है। तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या? मैं बहुत भयंकर बन में नहीं जाना चाहता हूँ विचार यह है पुत्रो! पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में उस माता के गर्भ में ऐसी कौन-सी वस्तु नहीं जिसवफो मानो जानने लगे तो बेटा! उसके लिये समय मिलना तब उसे संसार की विलासता की आवश्यकता नहीं रहेगी, वह उसी चिन्तन में लगा रहता है तो मानव को संसार को उर्ध्वगति में लाने वाला विज्ञान चाहिए।

औषधियों द्वारा यज्ञ

मुनिवरो! देखो, वह उसी में रत रहने लगता है। बहुत सी उन औषधियों को एकत्रित करके शाकल्य बनाया जाता है। यजमान अपने यहाँ याग कर रहा है, कोई पुत्रेष्टि ट याग कर रहा है, कोई वाजपेयी याग कर रहा है, कोई अग्निष्टोम याग कर रहा है कोई रुद्रयाग कर रहा है, कोई विष्णु याग कर रहा है, कोई ब्रह्म याग कर रहा है, कोई देवी याग कर रहा है। भिन्न-2 प्रकार के याग उन औषधियों को जानने से उनका शाकल्य बनाने से बेटा! अग्नि में प्रदान किये जाते हैं। तो विचार विनिमय क्या? विशेष विवेचना नहीं देता हुआ तुम्हें यह वाक्य प्रगट कर रहा हूँ कि माता वसुन्धरा के गर्भ में क्या वस्तु नहीं है बेटा! कौन सी ऐसी वस्तु है जो नहीं रहती। इसके गर्भ से नाना प्रकार की औषधियाँ उत्पन्न होती रहती है। हे मानव! तू पृथ्वी के गर्भ में वास कर, यह पृथ्वी का तुझ पर वरद्हस्त है तू इसमें वास कर रहा है, तू इस वसुन्धरा का पुण्य अर्जित कर रहा है। मानो तेरी तो संसार में परम्परा रही है, तू तो उसी में रत रहने वाला है, जहाँ से तेरा यह निर्माण हुआ है। मानो देखो, माता के गर्भ में तेरा निर्माण हुआ और उन्हीं तत्वों से तेरा निर्माण हुआ, पंच महाभूतों से, वसुन्धरा पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश होकर के उसी से पालना कर रहा है। नाना प्रकार के कार्य करता हुआ, अपने जीवन को व्यतीत कर रहा है, उसी के गर्भ में गृहों का निर्माण कर रहा है, उसी में आनन्दित होकर के अपने को धन्य कर रहा है।

यह है बेटा! आज का वाक्। आज के वाक् का उच्चारण करने का अभिप्राय क्या है बेटा! हमारा? कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, प्रभु के विज्ञान में संसार को जानने में तत्पर हो जायें। माता वसुन्धरा के गर्भ में पहुँचने का प्रयास करें। बेटा! यह माता, जननी माता, पृथ्वी माता इस वसुन्धरा के सन्म्बन्ध में कुछ रहस्य ग्रहण कर रहा था। बेटा! कल समय मिलेगा तो कल मैं देखो सूर्य देव है, मानो वसुन्धरा है जो इस ब्रह्माण्ड को प्रमाणित कर रही है, वह ब्रह्माण्ड उसकी आभा दे रहा है, यह उसी का हूत चाहता है, जैसे माता का पुत्र माता का उद्गीत गा रहा था, यह पृथ्वी भी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है और यह ब्रह्माण्ड ब्रह्म की गाथा गायेगा उस समय ये प्रभु मानो वसुन्धरा बन करके सबका पालन करेगा। बेटा! यह मैं कल प्रगट करूँगा आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन पाठन होगा। दिनांक, 4-4-83

लूम्ब जिला बागपत

२ संकल्पमयी संसार ०५ ०४ १९८३

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में वैदिक-मन्त्रों के पठन-पाठन के नाना प्रकार माने गये, जैसे हमारे यहाँ वेदों का पठन पाठन जब होता है तो उसके भिन्न-भिन्न प्रकार माने गये हैं जैसे जटा पाठ, घनपाठ, माला पाठ, ह्रस्व उदात और अनुदात। भिन्न-भिन्न प्रकार के पठन पाठन का जो कारण है वह प्रायः परम्परागतों से ही ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है। शब्दों की अभिव्यक्ति से यह मानो विचित्र माना गया है।

संसार एक माला

माला पाठ का पठन करते हुए महर्षियों ने कहा है कि यह संसार एक माला की तरह दृश्य है। प्रत्येक वेद-

मन्त्र में विज्ञान विद्यमान है। कुछ इसी परिभाषा में ज्ञान है कुछ इसी परिभाषा में मानो विज्ञान की प्रतिभा है, मानो वेद भी इसी में ओत-प्रोत हो रहा है। परन्तु वे जो प्रत्येक के विषय हैं उसके पश्चात् ब्रह्म की प्रतिभा आती है। उसी के सूत्र में संसार का ज्ञान और विज्ञान पिरोया हुआ है। बेटा! माला में मनके होते हैं और प्रत्येक मनका एक धागे से पिरोया हुआ है। तो मुनिवरो! उस सूत्र में पिरोये हुए होने से यह माला बन जाती है उसी प्रकार प्रत्येक वेद मन्त्र एक माला की तरह वृत है और एकोकी धागे में वेद-रूपी मन्त्र मनके की भाँति पिरोया हुआ है। जितना भी संसार का ज्ञान और विज्ञान हमें दृष्टिपात आ रहा है, जितना भी यह ब्रह्माण्ड है यह ब्रह्माण्ड भी इसी में पिरोया हुआ है। तो विचार विनिमय क्या, वेद का ऋषि कहता है कि यह संसार एक माला के सदृश है। प्रत्येक मानव प्राणी-प्राणी में पिरोया हुआ है, लोक लोक में पिरोया हुआ है। एक दूसरे को सहायता दे रहा है। एक दूसरे की शक्ति से शक्तिवान हो रहा है। तो इसी प्रकार यह जो ब्रह्माण्ड है अथवा परमात्मा का जो अमूल्य जगत् है मानो यह एक सूत्र में पिरोया हुआ है।

माला का सूत्र

बेटा! यह सूत्र क्या है जिसके ऊपर ऋषि मुनि परम्परागतों से बेटा! विचार विनिमय करते रहते हैं। मुझे विचार आता है एक याज्ञिक पुरुष याग कर रहा है परन्तु वह शाकल्य को अग्नि में हूत कर रहा है। अग्नि में हूत करता हुआ अग्नि उन परमाणुओं का भेदन कर देती है। परन्तु वैज्ञानिक-जन वे इसी के ऊपर बहुत गम्भीर मनन करते हैं। और गम्भीर मनन करते हुए विचारते हैं, कि यह परमाणुवाद कहाँ चला गया? इस परमाणु की क्या गति बन गयी है? तो मुनिवरो! देखो, याग करते हैं, अग्निहोत्र करते हैं, उन परमाणुओं की तरंगो के ऊपर अनुसन्धान करते, ऐसा मुझे स्मरण है पुत्रो! कि इन अनुसन्धानवेताओं ने देखा कि अन्तरिक्ष में यह परमाणु एक दूसरे में पिरोया हुआ है। उसके ऊपर विचारने लगे, उसकी प्रतिभा को लेकर यन्त्रों का निर्माण किया। बेटा! वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में ऋषि मुनि अपनी स्थलियों पर विद्यमान होकर के और विचार विनिमय करते हुए नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते रहते थे। हमारे यहाँ एक एक यन्त्र बड़ा अद्वितीय माना गया है।

मुझे स्मरण आता रहता है बहुत पुरातन काल की वार्ता है पुत्रो! महाराजा अश्वपति के यहाँ एक वृष्टि याग हुआ था। महाराजा अश्वपति के यहाँ जब वृष्टि याग हुआ तो वैशम्पायन ऋषि महाराज उस याग के उद्गाता बने थे। उद्गाता उसे कहते हैं? जो उद्गान गाता है जो वेद का गान गाने वाला है, हव्यज्ञान होने से गाता है। वह गाता है जब अपनी इन्द्रियों के विषयों से शाकल्य बना करके हृदय रूपी यज्ञशाला में शाकल्य प्रदान करके यह गान गाता है, तो परमात्मा के निकट चला जाता है। वह गान केसे गाता है? मुनिवरो! प्रत्येक इन्द्रियों का जो विषय है उसका वह शाकल्य बनाना जानता है। तो शाकल्य केसे बनाया जाता है? बेटा! प्रत्येक इन्द्रियों के विषय को त्यक्त करता हुआ वह हृदय रूपी यज्ञशाला में प्रेम रूपी जो महानता है, उसमें मानो ओत-प्रोत कर देता है। वैशम्पायन ऋषि उस याग में उद्गाता बने। उद्गीत गाने वाला गाता ही रहता है परन्तु उसकी प्रतिभा बड़ी विचित्र मानी गयी है।

यजमान के रथ का द्यौ लोक को गमन

मेरे प्यारे! वैशम्पायन ऋषि महाराज जब उस याग से अपने आश्रम में आ पहुँचे तो मुनिवरो! देखो, सायंकाल को जब वे निद्रा की गोद में जाने लगे तो न्यौदा में से उन्होंने कुछ मन्त्रों का अध्ययन किया। वे मन्त्र उन्हें बहुत विशिष्ठ और प्रिय लगे। परन्तु वे निद्रा की गोद में चले गये, उसी आभा में चले गये। मध्य रात्रि का काल समाप्त हुआ तो जागरूक हो गये। जागरूक होकर के एक वेद मन्त्र स्मरण आया। ''अरस्तनं ब्रह्मः सुते अस्तकां अन्तरिक्षं भगं तत्गच्छतः'' वेद का मन्त्र यह कह रहा था कि अन्तरिक्ष में नाना प्रकार के सूक्त गतियाँ करते

रहते हैं। वेद का मन्त्र यह कह रहा था। परन्तु ''यागां ब्रह्मे वशिष्ठत प्रह्रे'' याग का मन्त्र याग के सन्बन्ध में, याग में जो आहुति देने वाला यजमान है, उसका रथ बन करके द्यौ-लोक को जाता है। ऐसा बेटा मेरे चिन्तन के भाव में जब स्मरण आने लगा तो ऋषि मुनियों की इच्छा शान्त नहीं हुई। जब ज्ञान के क्षेत्र में चले जाते हैं तो मन उस समय तक शान्त नहीं होता। जब तक उसकी मानो प्रतिभा को अच्छी तरह नहीं जानें तो वैशम्पायन ऋषि महाराज इसी चिन्तन में लग गये, मनन करते रहे समय व्यतीत हो गया। प्रातः कालीन हो गया, अपने आसन को त्याग नहीं रहे तो मेरे प्यारे! मुझे ऐसा स्मरण है कि निकटतम महर्षि विभाण्डक का आश्रम था। महर्षि ने विचारा कि महर्षि वैशम्पायन ने अपने आसन को नहीं त्यागा है। तो वैशम्पायन ऋषि के द्वार पर ऋषि विभाण्डक आ गये। विभाण्डक ऋषि ने कहा-कहो, किस लिये आसन को नहीं त्याग रहे हो? उन्होंने कहा-प्रभु! मुझे यह वेद मन्त्र स्मरण आ गया। अतः वह वेद मन्त्र यह कहता है ''यदं ब्रह्मः सम्भवः वाचं ब्रह्मब्रहे सुकृतं सुताः ब्रहे'' मानो अन्तरिक्ष में देखो, कितने चित्र विद्यमान रहते हैं। मैं इनका दिग्दर्शन करना चाहता हूँ ?

मेरे प्यारे! देखो! महर्षि विभाण्डक चिन्तन में लग गये, प्रभात हुआ, ऋषि मुनियों को यह प्रतीत हो गया था, कि महर्षि वैशम्पायन, महाराजा अश्वपति के याग में से आये हैं। तो महर्षि प्रवाहण, शिलक दालभ्य और ब्रह्मचारी कवन्धि और गार्हपत्थ भी गमन करके बेटा! उनके आश्रम पर आ गये। आश्रम में आ जाने के पश्चात् उन्होंने कहा भगवन! आप शान्त मुद्रा में क्यों विद्यमान हैं? उन्होंने कहा-प्रभु! यह वेदमन्त्र है, मैं इसके ऊपर चिन्तन कर रहा हूँ परन्तु अपने में कोई निमटारा नहीं हो रहा है, मैं निमटारा करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा-प्रियतम विचारने लगे, वे भी चिन्तन में लग गये। मेरे प्यारे कहीं से महर्षि पारत्वकेतु मुनि महाराज आ पहुँचे। पारत्वकेतु मुनि ने कहा-हे ऋषियों! ये क्या चिन्तन हो रहा है? उन्होंने बेटा! उन्हें विभिन्न प्रकार स्मरण कराया। मेरे प्यारे! जब स्मरण कराया तो उन्होंने कहा-कि ये वेद मन्त्र के ऊपर तुम चिन्तन, मनन नहीं कर सकोगे। क्योंकि प्रगट में तुम यह जानना चाहते हो, तो यहाँ से गमन करो कदली-वनों में, भयंकर वनों में, महर्षि शिकामकेतु ऋषि रहते हैं शिकामन्तकेतु ऋषि महाराज मेरे प्यारे! महर्षि उद्दालक गोत्र के ऋषि है और वे दोनों पति पत्नी इसके ऊपर चिन्तन और मनन कर रहे हैं। यह वाक्य उन्होंने श्रवण किया तो ऋषि मुनियों का वह समाज पारत्वकेतु ऋषि महाराज की अध्यक्षता में वहाँ से गमन करता है, और भ्रमण करते हुए मेरे प्यारे वे भयंकर वनों में पहुँचे। वहाँ ऋषि के आश्रम में कामधेनु के रूप में कुछ द्रव्य विद्यमान है। मेरे प्यारे! देखो शिकामकेतु ऋषि महाराज ने ऋषि मुनियों के दर्शनों को पान करके, उनके चरणों को स्पर्श करके कहा-कहो, भगवन! केसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा ऋषिवर! मैं जानता हूँ कि वेद मन्त्रों का अध्ययन करता हुआ निद्रा की गोद में चला गया। मध्यरात्रि में निद्रा से जागरूक हुआ, तो ये वेदमन्त्र मुझे स्वप्नवत् की भाँति दृष्टिपात आने लगे। इनमें जो विज्ञान रहस्योमयी था, वह मुझे स्मरण आने लगा तो भगवन! हम जानना चाहते हैं कि यह वेदमन्त्र, इन वेद मन्त्रों का विज्ञान हम साक्षात्कार जानना चाहते हैं ?

याग द्वारा विचारों का भवन और साक्षात्कार

ऋषिवर ने कहा बहुत प्रियतम। ऐसा बेटा! मुझे स्मरण है कि ऋषि और उनकी पत्नी प्रातःकालीन याग करते थे और याग के पश्चात् उनमें से जो तरंगे उत्पन्न होतीं, उन तरंगो पर वे मनन करते रहते थे। तो मुनिवरो! देखो, वैशम्पायन ऋषि से सकामकेतु ऋषि ने कहा कि महाराज! मैं याग करता हूँ। याग का मन्तव्य यही मानो याग की स्थापना करके मैं याग के परमाणुओं के एक भवन का निर्माण करता हूँ, जैसे परमपिता परमात्मा ने यह जगत् रूपी संसार की रचना की है, इसी प्रकार मैं उन विचारों का एक भवन निर्माण कर रहा हूँ और मैं कुछ

निर्माण कर गया हूँ। और वह चिन्तन करता करता उसको क्रिया में लाता लाता गहन तक चला गया, कि मैं जो याग कर रहा था मैंने उसके एक यन्त्र का निर्माण किया। जिन प्रधान यन्त्रों का निर्माण किया तो मानो जैसे ध्वनि उत्पन्न होती, उस ध्वनि के साथ में जो चित्र गति कर रहा था, वह चित्र उस यन्त्र में स्पष् दृष्टिपात हो गये, उसका स्पष्टीकरण हो गया। तो मुनिवरो! यह सिद्ध हो गया है कि विज्ञान एक याग के ऊपर होता है तो मेरे यहाँ यह अध्ययन किया है, मेरे जो पिता, महापिता, परपिता जैसे इस संसार में नहीं हैं, उनके भी मैं यन्त्रों में चित्र दृष्टिपात करता रहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने यह वर्णन कराया, आचार्य ने कहा उस उद्दालक गोत्रीय ने, कि हे ऋषिवर वैशम्पायन जी! मैं अपने यन्त्रों में यहाँ तक, मैंने कहीं वेदों में यह अध्ययन किया था ''सम्भवं नित्यां शेते सम्भवः वेगं भवते सम्भवः चित्रम्'' मैंने भी वेद में यह अध्ययन किया था किसी काल में, कि यह जो शब्द है यह मानव से उत्पन्न होता है। यह शब्द नित्य होता है, यह समाप्त नहीं होता। तो मैंने विचारा कि मेरे पितरों के जो शब्द हैं, वे भी अन्तरिक्ष में विद्यमान होंगे। मेरे उन यन्त्रों में मेरे पिता और महापिता के चित्र मुझे दृष्टिपात आने लगे, मैंने और आगे पहुँचने में गति की है। इसी विज्ञान को जानने के लिये परमात्मा का विज्ञान तो बड़ा अनन्त है। परमात्मा के विज्ञान में प्रवेश कर गया, याग मेरे में बेटा! एक अंग बन गया। परन्तु चिन्तन करता हुआ मैं कहाँ चला गया हूँ कि मेरे यन्त्रों में मेरे सतरवें महापिता के चित्रों का क्रिया कलाप, चित्रों में दृष्टिपात आता रहता है। तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या? विचार यह है कि हमारे समक्ष में जो शब्दों के साथ में चित्र गतियाँ करते रहते हैं। शब्द भी हैं, चित्र भी हैं, उनका जो क्रिया कलाप होता रहता था, जो उनका विज्ञान था, जिस प्रकार का उनका कर्मकाण्ड था, वह कर्मकाण्ड भी इन चित्रावलियों में मुझे दृष्टिपात आता रहता था।

तो मेरे प्यारे! वैशम्पायन ऋषि ने और आदि ऋषियों ने जब यह स्मरण कराया और उन चित्रों को दृष्टिपात करने लगे तो बेटा् ऋषि, मुनि आश्चर्य चकित हो गये। कवन्धि ब्रह्मचारी ने और प्रवाहण ने यह कहा- धन्य है प्रभु! कि जिनको हम वेदों के मन्त्रों में अध्ययन करते रहते थे, हम उनका साक्षात्कार नहीं कर रहे थे। तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरो! आज बेटा यह वाक्य तुम्हें इसलिये प्रगट करा रहा हूँ कि मानव को याग करना है, और याग के पश्चात् विचारों के भवन का निर्माण करना है। विचारों के भवन का निर्माण करते हुए अपने मन को उस विज्ञान में ले जाना है। जिस विज्ञान के द्वारा मुनिवरो! जो वेद कहता है, मन्त्र कहता है, अब भवन का निर्माण करके उसके पश्चात् बेटा! उस भव्य भवन में प्रशान्त होकर के बेटा! 'विद्यमान होकर के, परमात्मा की प्रतिभा को, उस माता वसुन्धरा को, यह विचारना हैं कि यह जितना ज्ञान है विज्ञान है ये सब मेरी प्यारी माता वसुन्धरा का गर्भाशय है। मेरी प्यारी माता वसुन्धरा जो मुनिवरो! कल्याण करने वाली है, अपने में बसा रही है। मानो सब उसके गर्भ में, उसके विज्ञान के अन्तर्गत मुनिवरो! देखो, भ्रमण करता रहता है। तो हमें इन शब्दों के ऊपर विचार विनिमय करना है। उस विज्ञानमयी धारा को जानना है, जो हमारे वेद की प्रतिभा कहती है, वेद का मन्त्र कहता है। जब हम इस भव्य भवन का निर्माण करते हैं विचारों का, तो बेटा! देखो, हमारे भवन में, जो चितमयी मण्डल है, उसको भी जाना जाता है। उस चित को जानने के लिये, हमें अपनी आवागमन की प्रतिभा को भी जानना है।

आनन्द रुप परमात्मा

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना न देता हुआ, आज तुम्हें यह वाक्य उच्चारण करने के लिये आया हुआ। बेटा ऋषि मुनियों का इस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान पर कितना अधिपथ्य रहा है। उन्होंने कितना मनन और चिन्तन किया है। क्योंकि विज्ञान इसी के अन्तर्गत आता है। हमारे यहाँ दो प्रकार का विज्ञान है एक विज्ञान भौतिकवाद है, अणु और परमाणुवाद है। एक विज्ञान यह है, जिसे हम आध्यात्मिकवाद कहते हैं।

आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं, अपनी अन्तरात्मा को जानना है, अन्तरात्मा की जो प्रतिभा का जन्म होता है। उस प्रतिभा को हमें क्रिया रूप देना है। क्योंकि परमपिता परमात्मा का यह जो राष्ट्र है, परमपिता परमात्मा का यह अमूल्य जो जगत है, जिस जगत में सर्वत्र प्राणी विराजमान है। जिस भव्य भवन में प्रत्येक दार्शनिक एक उड़ान उड़ता है। हमें उस परमपिता परमात्मा के विज्ञान को जानना है। आत्म विज्ञान में रत रहना है। आत्मा तो एक रस रहने वाला है। आत्मा तो आनन्द को चाहता है, परन्तु आनन्द परमात्मा की प्रतिभा के साथ होता है। मेरे प्यारे! देखो, आनन्द कहाँ है? ज्ञान में है। और ज्ञान कहाँ है? परमात्मा को जानने का नाम ज्ञान कहा जाता है, जो विज्ञान है, आभा में है, क्योंकि रात्रि नहीं होती ऋषि के आँगन में। रात्रि नहीं होती परमात्मा के राष्ट्र में। परमात्मा का राष्ट्र बेटा! रात्रि से रहित है। जब रात्रि से रहित है तो मुनिवरो! देखो, आलस्य और प्रमाद से भी रहित है। और जहाँ आलस्य और प्रमाद दोनों से रहित है वहाँ सदैव प्रकाश रहता है। जहाँ प्रकाश रहता है, वहाँ आलस्य और प्रमाद नहीं होता। और जहाँ आलस्य और प्रमाद नहीं होता, वहाँ रात्रि नहीं होती। और जहाँ रात्रि नहीं होती वहाँ मेरे प्यारे! देखो, सदैव मानव परमात्मा की गोद में विद्यमान रहता है।

वसुन्धरा रुप परमात्मा

मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें कहाँ ले गया हूँ, विचार देता हुआ दूरी चला गया हूँ। विचार यह देना था 'मन्धो अस्ति प्रह्ाः' वह परमपिता परमात्मा वसुन्धरा है। वह वसुन्धरा बन करके हमारा कल्याण करने वाला है। वसुन्धरा किसे कहते हैं? जो मानव यह जान लेता है कि मैं तो परमात्मा के क्षेत्र में, राष्ट्र में विद्यमान हूँ। मानो देखो, माता के, गर्भ स्थल में शिशु पनपता रहता है। इसी प्रकार पृथ्वी के गर्भ में मानव पनपता रहता है। परन्तु जब परमात्मा की प्रतिभा दोनों को अभ्यास करते हुए, अभ्यस्थ होता हुआ, मानो बेटा! उस आभा में परिणत हो जाता है, तो बेटा! माता वसुन्धरा की गोद में चला जाता है। जाता उस काल में हैं जब अपने विचारों का एक महान भवन निर्माण कर लेता है, शुद्ध, पवित्र विचारों का। मुनिवरो! देखो, जिसकी आत्मा के द्वारा अन्धकार है आत्मा के द्वारा वे बेटा देखो "अस्वन्धरं दुखं हेतुः संसारकम्"। केवल देखो, आत्मा के अन्दर आनन्द विद्यमान रहता है। परमात्मा की गोद में जाने के लिये सदैव तत्पर रहता है। परन्तु जब वह विचारता है मानव, कि "आत्मा भवे सम्भवः।"

मुनिवरो! देखो, परमात्मा का जगत एक अनन्तमयी माना गया है। इस अनन्तमयी जगत के जानने के लिये वह मानव उत्सुक रहता है, इस परमात्मा की अनुपम आभा में, क्यों कि प्रकृति को अपनी गति देता है, उसके सन्निधान में अपनी क्रिया कर रही है। सन्निधान मात्र से यह जगत् चल रहा है। जितना भी यह जड़ जगत और चैतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है यह देखो, परमपिता परमात्मा की महिमा और उसी के कारण उसी के गर्भ में बेटा! देखो, यह सर्वत्र जगत विद्यमान है। जब हम विचार करते हैं, वैज्ञानिक बेटा! जब विज्ञान के क्षेत्र में जाता है, और विज्ञान के क्षेत्र में जाकर के, परमाणुओं को जानता हैं एक परमाणु को जानकर के द्वितीय परमाणु में वह गति करने लगता है। जब द्वितीय परमाणु के चिन्तन में गति करने लगता है। परमाणुओं का वह एक तारतम्य लगा हुआ है, वह उससे विच्छेद नहीं होता। तो मुनिवरो! देखो, अनन्तमयी जगत् अनन्तमयी विज्ञानमय दृष्टिपात आने लगता है। देखो, जब वही विज्ञान प्रकृतिवाद को त्याग करके, आत्मवेता बन करके मृत्यु को विजय कर लेता है और यह विचारता है कि मुझको मृत्यु कहाँ है? तो मुनिवरो! देखो, मृत्यु को आनन्द से त्यागने के लिये मानो विज्ञान होता है। मृत्यु क्या है? माता का पुत्र अपनी माता से विच्छेद हो जाता हैं माता रुदन कर रही है। जब मैं माता से यह प्रश्न करता हूँ कि माता! तू रुदन क्यों कर रही है? तो वह कहती है मेरा पुत्र नहीं रहा। जब यह प्रश्न किया जाता है माता से कि हे माता! यह शरीर तेरा पुत्र है, या आत्मा तेरा पुत्र है, तो मुनिवरो! देखो, माता उस

समय कोई उतर नहीं देती। यदि वह यह कहती है कि आत्मा मेरा पुत्र है तो आत्मा तो किसी काल में भी नष्टट नहीं होता, आत्मा को माता ने जाना नहीं, कि मेरे पुत्र का आत्मा कैसा है? परन्तु देखो, यदि वह शरीर को पुत्र कहती है तो मुनिवरो! देखो, शरीर ज्यों का त्यों बना हुआ है एक आत्मा ही तो नहीं है। परन्तु माता-पितर सर्वत्र सम्बन्धी उसे शव को मानो अग्नि में दाह कर देते हैं। अपना-अपना स्वरूप अपने-अपने स्वरूप में समन्वित हो जाता है। तो माता के आँगन जब यह चर्चा आती है, माता को जब यह ज्ञान होता है कि यह आत्मा पुत्र है, कि यह शरीर पुत्र हैं तो यह क्या हुआ वह क्या वस्तु थी?

संकल्प

तो विचार आता है उस समय रात्रि के समय ''बृह्मे वाचप्रः प्रमाः'' वेद का वाक्य कहता है कि सघ्कल्पमयी संसार है, सघ्कल्पमयी पुत्र है। आत्मा पुत्र है, शरीर पुत्र है कि अग्नि पुत्र है? मानो यह वायु गति कर रही है यह पुत्र है? मानो यह सघ्कल्पमयी पुत्र है। तो मुनिवरो! देखो, यह विवेक क्या है? बेटा! माँ वसुन्धरा है। परमपिता परमात्मा रूप में बेटा! जो उसका यह जगत है, यह संकल्पमयी है। संकल्पमयी जगत है।' सघ्कल्प से ही मेरे प्यारे! देखो, यह संसार की रचना हो रही है। संकल्प से ही मुनिवरो! देखो, यह संसार गति कर रहा है। परमात्मा का यह संकल्प सृष्टि सम्वत्सर के आधार पर जब समापन होता है, तो मुनिवरो देखो, प्रलय-काल आ जाता है। प्रलयकाल का समय समाप्त हुआ तो रचनाकाल आ जाता है। मानो यह संकल्प मात्र से बेटा! यह जगत चल रहा है। परमात्मा का कैसा अनुपम, मेरी प्यारी माता वसुन्धरा का कैसा अनुपम संकल्प है। बेटा! जो प्रातःकाल में सूर्य उदय होता है सूर्य मानो गति कर रहा है अपनी आभा में आभायित हो रहा है परन्तु नाना पृथ्वियाँ उसकी परिक्रमा कर रही हैं, नाना लोक उसकी परिक्रमा कर रहे हैं। यह क्या है? प्रभु का संकल्प और रात्रि आ गयी, चन्द्रमा अपनी किरणों को विखेर रहा है। कितने समय तक विखेरेगा बेटा! यह प्रभु का संकल्प है।

मेरे प्यारे! यह संकल्प मात्र से यह जगत चल रहा है। माता वसुन्धरा का यह रथ है। जैसे मुनिवरो! देखो, संकल्प किया, माता के गर्भस्थल में एक बिन्दु महतत्व को लेकर के अपने पूर्णत्व को प्राप्त हो जाता है। रचना करने वाला अङ्गों की रचना कर देता है। नस नाड़ियों की रचना कर देता है। परन्तु संकल्प देता उसी से है, जितने समय में जो समय निश्चित किया उसमें वह संसार में आ जाता है संसार में आकर के मेरे प्यारे! देखो, वह उसी संकल्प से संसार में रहता है। पृथ्वी के गर्भस्थल में बेटा! विद्यमान होकर के, उसी संकल्प मात्र से, वह पृथ्वी के आँगन में नाना प्रकार की क्रीडाएँ करता हुआ, आभा में आभायित होता रहता है अपना जो संसार है, वह भी एक संकल्प मात्र है। देखो, पृथ्वी पर आकर के वह योगी बनना चाहता है, तो योगाभ्यास करने लगता है। संसार में राष्ट्र की आभा में अपने को ले जाना चाहता है, तो राष्ट्र पिता बन जाता है। विज्ञान के क्षेत्र में अपने को ले जाता है, तो वैज्ञानिक बन जाता है। उसके मनों में संकल्प प्राप्त हो रहे हैं, उन्हीं संकल्पों के आधार पर बेटा! अपने मार्ग को प्राप्त कर लेता है। वह पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करना चाहता है तो पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश कर जाता है। माता वसुन्धरा की गोद में बसकर ही विज्ञान को प्राप्त हो जाता है। वही मानो मृत्यु को बस में करना चाहता है, मैं मत्युंजयी बनना चाहता हूँ, तो मुनिवरो! देखो, मृत्यु के पार होने के लिये मृत्युंजयी बनने के लिये मेरे प्यारे! देखो, अपने संकल्प बना लेता है और वह कहता है मैं ब्रह्मवर्चोसि बनना चाहता हूँ। ब्रह्मवर्चोसि बनकर वह साधक बन जाता है। साधक बनकर के माता की गोद में प्रवेश करता हुआ, मुनिवरो! देखो, वह मृत्युंजयी बन करके, इस संसार के पार हो जाता है।

माता कौशल्या का संकल्प

तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरो! देखो, परम पिता परमात्मा का जो यह जगत है, यह एक प्रकार का संकल्प है, प्रभु का, और संकल्प मात्र से ही यह बेटा! जगत् चल रहा है। मेरे प्यारे! संकल्प में पुत्री है, संकल्प में पुत्र है, संकल्प में पिता है, संकल्प में माता है, संकल्प में विधाता है, संकल्प में प्रभु हैं, संकल्प में समष्टि मानी गयी हैं मानो एक सघ्कल्पमात्र में बेटा! यह जगत् गतिकर रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण है, त्रेता के काल में जब मुनिवरो! देखो वशिष्ठ ने माता कौशल्या से यह कहा था कि तुम राष्ट्र का अन्नग्रहण करो, तो उस समय माता कौशल्या ने यह कहा था-कि मैंने ऋषि के चरणों में विद्यमान होकर के यह संकल्प लिया है कि मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूँगी। क्योंकि राष्ट्र का जो अन्न होता है वह रजोगुण तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है। उसको ग्रहण करना नहीं चाहती। क्योंकि मुझे अपने गर्भस्थल से एक महान सन्तान को जन्म देना है, महान पुत्र को जन्म देना है। जिससे वास्तविक आभा में आकर के वह संसार के ऐसे क्षेत्र में लग जाये जहाँ दूसरे की रक्षा कर सके। मेरे प्यारे! यह माता का संकल्प है, यह माता का विचार है। यह माता की प्रतिभा, संकल्प बन कर रहती है। बेटा! उस माता का पुत्र भगवान् राम के रूप में मानो संसार क्षेत्र में आया, उसने जीवन भर राष्ट्र के लिये प्रयास किया। उन्होंने माता वसुन्धरा के गोद में आकर के अपने जीवन को विरक्ति में परिणत कर दिया। मेरे प्यारे! कल मुझे समय मिलेगा तो मैं भगवान राम के सन्म्बन्ध में कुछ चर्चाएँ प्रकट करूँगा। क्योंकि आज तो मुझे समय इतनी आज्ञा नहीं दे रहा है। विचार विनिमय यह चल रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की प्रतिभा और महानता को अपनाते हुए, अपने में विचित्र बनते हुए, परमात्मा के जगत में संकल्पवादी बन करके, अपने संकल्प को महान् बनाते हुए, और परमात्मा के संकल्प को स्वीकार करते हुए, परमात्मा की गोद में चले जायें। यह है बेटा आज का वाक्य।

मैं बेटा! तुम्हें वहीं ले जाना चाहता हूँ जहाँ हमारे ऋषि बेटा! वेद के एक एक मन्त्र के ऊपर प्रायः परम्परागतों से अनुसन्धान करते रहते हैं अनुसन्धान करना एक मानव का कर्तव्य है। अनुसन्धान करने के लिये वैज्ञानिक बनना बहुत अनिवार्य हैं। विज्ञानवेता बनने के लिये मानव को वेद के एक एक मन्त्र की प्रतिभा को जानना होगा। एक-2 वेद मन्त्र के ऊपर अनुसन्धान करना होगा। मुझे स्मरण आता रहता है हमारे यहाँ वैशम्पायन नाम की एक शाखा कहलाती थी जिन्होंने बेटा उसमें अपने अनुभव वार्ताएँ अपना अनुभव दिया है।

ऋषि परम्परा एवं गोत्र प्रणाली

वेद के मन्त्रों के ऊपर मेरे प्यारे! देखो, मैं शिकामकेतु ऋषि महाराज की चर्चा कर रहा था जिन का गोत्र मुनिवरो! देखो, हमारे यहाँ उद्दालक गोत्र कहलाता है। हमारे यहाँ उद्दालक गोत्र बड़ा विचित्र रहा है उसमें नाना याज्ञिक पुरूष हुए हैं, नाना ब्रह्मवेता हुए हैं और नाना विज्ञानवेता हुए हैं परन्तु देखो, इस गोत्र का जो निकास हुआ था वह हरितत्व गोत्र था जिससे इसका निकास हुआ। परन्तु हरितत्व गोत्र का जो निकास हुआ था ददडीय गोत्र से हुआ और द्दडीय गोत्रों का निकास ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है ब्रह्मा के द्वितीय पुत्र श्वेताश्वेतर से यह श्वेता गोत्र कहलाता था। बेटा! उस काल में इनका निर्माण हुआ। तो मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ केवल तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ, कि हरीतत गोत्रों का निकास अद्दिरस से हुआ है। इनका अद्दिरस का निर्माण ब्रह्मा के पुत्र अथर्वा से हुआ है परन्तु मैं विशेष विवेचना में ले जाना नहीं चाहता हूँ आदि ब्रह्मा के चार पुत्र थे एक का नाम अथर्वा था, एक नाम श्वेताश्वेतर था, एक का नाम केतु था एक का नाम, ऋतु था, ये चार पुत्र आदि ब्रह्मा के हुए थे। इन प्रणालियों में पूर्व काल में इनसे लगभग सहस्र प्रणालियों से उर्ध्वा में यह गोत्र प्रणाली प्रारम्भ हुई।

तो मेरे प्यारे! यह उच्चारण कर रहा हूँ कि आदि ब्रह्मा से लेकर मानो देखो, चिन्तन करने का विषय है। यह

बड़ा विचित्र है। यह ऋषि मुनियों के मस्तिष्क में प्रायः नृत्य करता रहा है। आज मैं विशेष विवेचना में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल क्या? मुनिवरो! देखो, यही उद्दालक गोत्र में ऋषि हुए हैं, जिनका नाम शिकामकेतु ऋषि था, बेटा! उनकी पत्नी का नाम शकुन्तकेतु था। दोनों पति-पत्नि देखो, अनुसन्धान करते रहते थे। दोनों परमाणुओं के ऊपर अध्ययन करते रहते थे, ब्रह्म विद्या के ऊपर अध्ययन करते रहते थे। अपने सूत्रों के क्रिया कलाप अन्तरिक्ष में शब्दों के ऊपर जो अनुसन्धान उन्होंने किया कि शब्दों के साथ जो चित्र गति करते हैं, मुनिवरो! देखो, उन चित्रों को जानना उन चित्रों को यन्त्रों में दृष्टिपात करना, उसके शब्द उनकी प्रतिभा मानो उनका कर्मकाण्ड उनको यन्त्रों में दृष्टिपात आता रहता था। ऐसा विज्ञान ही ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में परम्परागतों से बेटा! नृत्य करता रहा है। देखो, आज परमाणुवाद एक माला के सदृश माना गया हैं। मुनिवरो! उच्चारण कर रहे थे कि संसार एक माला के सदृश है। जो माला को धारण कर लेता है, जो वेद के मन्त्रों को जानने लगता है उन मन्त्रों को जान करके उनको एक सूत्र में बेटा! उनको पिरोना। कैसे वे पिरोये हुए हैं? उनके ज्ञान को कटिबद्ध जब स्वीकार करता है, तो मुनिवरो! वह मानव संसार सागर से पार हो जाता है।

ब्रह्माण्ड की विशालता

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना नहीं देता हुआ विचार यह दे रहा हूँ कि परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान मानो हमारा कर्तव्य है मानो परमपिता परमात्मा का जो ये अनुपम जगत है, यह महान है, विचित्र है। चिन्तन करना ही मानव का कर्तव्य है। संसार में जब मानव विद्यमान हो करके बेटा! माला को गिनने लगता है, माला को हृत में लाने लगता है, तारा मण्डलों की सुन्दर माला बनी हुई है। सौर मण्डल बने हुए हैं। आकाशगंगाएँ बनी हुई हैं। बेटा ऋषि मुनियों ने यहाँ तक जाना है इस संसार को, कि मुनिवरो! देखो, एक-एक आकाशगंगा के सूर्यों की गणना की है। सूर्यों की गणना करके बेटा! आगे एक आकाशगंगा नहीं दो आकाशगंगा नहीं बेटा! देखो, एक-एक आचार्य ने एक-एक ऋषि ने बेटा! लगभग 300-300 आकाशगंगाओं को जानने का प्रयास किया है। और वे आकाशगंगाएँ कैसी हैं? मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया। याज्ञवल्क्य ऋषि वफी विज्ञानशाला में ब्रह्मचारी कवन्धि और श्वेताम् ऋषि दोनों ब्रह्मचारी अध्ययन करने लगे तो मुनिवरो! उस समय देखो, याज्ञवल्क्य ने अपने यज्ञदत ब्रह्मचारी से और तीनों ब्रह्मचारियों को निर्णय कराया, कि देखो, यह यन्त्र है। इस यन्त्र में आकाशगंगा दृष्टिपात आ रही है। इस आकाशगंगा के सूर्यों की गणना करो। तो याज्ञवल्वय मुनि जब एक आकाशगंगा के सूर्यों की गणना करने लगे, तो गणना करते-2 देखो, 5 खरब पर पहुँच गये। तो उन्होंने मुनिवरो! देखो, 5 खरब 95 अरब 39 करोड़ 89 लाख 95 हजार 5 सौ 52 जब एक ही आकाशगंगा में सूर्यों की गणना की तो ऋषि मौन हो गये। और ऋषि ने यह कहा कि मैं परमात्मा की प्रतिभा को नेत्रों से दृष्टिपात नहीं कर सकता तो ऋषि यह कहते हैं कि आचार्य जनों ने आश्चर्य चकित होकर के यह कहा कि मैंने सूर्यों की गणना एक आकाशगंगा में की है। अन्त में गणना करता हुआ मैं मौन हो गया और ऐसी-ऐसी आकाशगंगाएँ मेरी विज्ञानशाला के यन्त्रों में मानो देखो, 372 आकाशगंगाएँ दृष्टिपात आती हैं। कितना अनन्तमय ब्रह्माण्ड है बेटा! यह प्रभु का, मेरी प्यारी माता का कैसा अनुपम भाष्य है। बेटा! निःसन्देह यह जगत् मानो उसी के अन्तर्गत गति कर रहा है। आभा में रमण कर रहा है। बेटा! विज्ञानमयी धाराओं में रमण करने वाला वैज्ञानिक अपने में विज्ञानवेता कहलाता है।

परम लक्ष्य

तो विचार विनिमय क्या? बेटा! यह विज्ञान तो मानव का मौलिक कर्तव्य है, भौतिक रूपों में ही इसको चिन्तन में लाता रहता है। तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरो! देखो, वेद की प्रतिभा को विचारने वाला प्रकाश में

जाने वाला, प्रकाश में ही पहुँच जाता है बेटा! मुनिवरो देखो यह भव्य भवन है परमात्मा का, इस भव्य भवन में प्रत्येक मानव आया है चिन्तन करने के लिये। अपने चिन्तन रूपी भवन का निर्माण करता है। वह चिन्तन रूपी भवन के नीचे विद्यमान हो करके चिन्तन को मौन करके परमात्मा की गोद में चला जाता है। यह है बेटा! आज का वाक्य कल मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा। आज का वाक्य समाप्त हो रहा है कल बेटा! मुझे समय मिलेगा तो संकल्प के ऊपर कल और विवेचना करूँगा। मानव चिन्तन के वनों को सदैव दृष्टिपात करता रहता है।

आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा यह वाक्य क्या कह रहा है कि हमें परमपिता परमात्मा को अपना वरेण्य बनाना चाहिए। परमात्मा को वरना चाहते हैं। कौन वरता है परमात्मा को? जो बेटा! वेद रूपी अमृत का पान करता है। मेरे प्यारे! जो अपने अन्तःकरण को प्रकाश में लाता है। जिसमें अज्ञान की धारा उत्पन्न नहीं होती। जिसमें द्वितीय भाव उत्पन्न नहीं होता वह बेटा! गुरुओं के चरणों में विद्यमान होता है। जब यह विद्या ब्रह्मचारी अध्ययन करता है तो वह ब्रह्मचारी क्यों नहीं परमात्मा की सृष्टि को महान बनाने का प्रयास करता है? वह इस सृष्टि को, प्रभु की सृष्टि को अपने प्रभु को अपना वरण बनाया है। उसे वरा है। वह पुरोहित कहलाता है। वह पराविद्या से, प्रभु की शक्ति से प्रभु के स्मरण करने से मानो तारतम्य बनाने से एकाकार होता है। प्रभु को स्वीकार करके उसकी ज्ञान की ग्रन्थियों का स्पष्टीकरण हो जाता है। ये है बेटा आज का वाक्य।

उपसंहार

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि मुनिवरो! हमें परमात्मा को अपना वरण बना लेना चाहिए, उसे वर लेना

चाहिए और वर करके परमात्मा की महती को जानकर के हम इस संसार सागर से पार हो जायें। यही बेटा! हमारा लक्ष्य है। अब वेद

चर्चाएँ हम कल करेंगे आज का वाक्य समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा। दिनांक, 5.4.83 लूम्ब जिला बागपत

३ मृत्यु का स्वरूप ०६ ०४ १९८३

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा। आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ यह पठन पाठन का जो कार्य है, वह परम्परागतों से ही मानवीय मस्तिष्कों में रमण करता रहा है? क्योंकि यह परमपिता परमात्मा की प्रतिभा अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान का वर्णन कर रहा है। प्रत्येक वेद मन्त्रों के ऊपर मानव परम्परागतों से ही अनुसन्धान कर रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना वैज्ञानिक हुए परन्तु कोई वैज्ञानिक ऐसा नहीं हुआ जो परमपिता-परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान वफो सीमा-बद्ध कर सके। क्योंकि इसका ज्ञान विज्ञान नित-नितान्त है। इतना विशाल है कि वह परम्परागतों से ही अपने निर्णय देता रहा है। इतना विशाल ये विज्ञान है, मानव गणना करता हुआ थकित होकर अन्त में मौन हो जाता है। यह अगम्य हृदय में चला जाता है क्योंकि परम पिता-परमात्मा का जो मौलिक विषय है वह वाणी का विषय नहीं कहलाता। विषय की मौलिकता मानो दृष्टि में आने वाला विषय नहीं, कि यह दृष् है, कि यह प्रत्यक्ष है, कि यह 'गुरुत्वां गुह्यगृहणाति' यह गुरुता कहलाती हैं क्योंकि इन्द्रियों से ऊपर इनका ग्रहण, हृदय करता है, इन्द्रियाँ इसे वर्णन नहीं कर सकतीं। परन्तु आज मैं बेटा! इस सन्बन्ध में विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ।

मृत्यु

आज का हमारा वेदमन्त्र बेटा! मृत्यु के सन्बन्ध में कुछ कह रहा था। प्रारम्भ का वेदमन्त्रः द्वितीय वेदमन्त्रः मत्यु के सन्बन्ध में गाथा गा रहा था और यह कह रहा था कि हे मानव! तेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मानव मृत्यु के सन्बन्ध में अपनी विवेचना देता रहा है परन्तु कदापि यह नहीं विचारा कि संसार में मृत्यु है क्या ? वेद मन्त्र भी मृत्यु के लिये कह रहा है। ऋषि कहता है, महान विज्ञानवेता भी यही कहता है कि मृत्यु भी कोई वस्तु है संसार में। माता अपने गृह में विरह कर रही है अपने पति के विरह में है, पति-पत्नी के लिये विरह है, माता अपने पुत्र के लिये परन्तु यह विचारने का विषय है कि इनके विरह में, इनके विरह करने में, कि मृत्यु है क्या? मेरे प्यारे मृत्यु के सन्बन्ध में परम्परागतों से ही मानव चिन्तन करता रहा है आज मुझे स्मरण है वह सभा, वह ऋषि मुनियों का समाज, बेटा-एकत्रित होता हुआ इसके समन्वय में आ रहा है।

मृत्यु के विषय में ऋषियों के विचार

एक समय बेटा! महऋष जमदग्नि के आश्रम में एक सभा हुई थी ऋषि मुनियों की। जिसमें ब्रह्मवेता थे, ब्रह्मविचारक थे, ब्रह्मचारी थे। उस सभा में महर्षि पिप्लाद, महर्षि सोमकेतु, देवर्षि नारद, चाक्राणि गार्गी, ब्रह्मचारी कवन्धि, महर्षि सोनुभानु, महर्षि तत्वकेतु ऋषि महाराज, महर्षि वैशम्पायन, महर्षि वैतानकेतु ऋषि, महर्षि त्यन्वृतान, ब्रह्मचारी गार्हपथ्य, श्वेताश्वेत् भारद्वाज, सोम कृतिका मेरे पुत्रो देखो ब्रह्मचारी कवन्धि, संजनन केतु ऋषि महर्षि प्रवाहण, महर्षि दालभ्य, और महर्षि शिलक, महर्षि गाड़ीवान रेवक और महर्षि सुभ्रक्तकेतु, महर्षि विभाण्डक, महर्षि वरेण्यकेतुरे नाना ऋषि मुनियों का समाज विद्यमान था। महर्षि जगदग्नि अपने आसन पर विद्यमान थे, महर्षि सत्यकेतु ऋषि महाराज उस आँगन में विद्यमान थे। नाना ऋषि मुनियों ने उस काल में सत्य के मार्ग को प्रगट करते। क्योंकि अपना अपना जो अनुभव होता है, अपनी अपनी जो प्रतिकाएँ होती हैं उन पर देखो, परम्परागतों से अनुसन्धान होता रहा है। क्योंकि याग पर चिन्तन और मनन होना बहुत अनिवार्य है। तो मुनिवरो! देखो, वहाँ एक प्रसङ्ग उत्पन्न हुआ। ब्रह्मचारी कवन्धि और शिलक दोनों ने एकत्रित होकर के यह कहा कि आज हम प्रातःकालीन

न्यौदा में मन्त्रों का उच्चारण कर रहे थे और मन्त्रों में मृत्यु शब्द आ रहा था। वेद का वाक्य यह कहता है कि मृत्यु नहीं होनी चाहिए, परन्तु इसके मूल का संकेत वर्तमान में आता है कि मृत्यु क्या है ? यह प्रश्न किया कि

मृत्यु क्या है ? तो मृत्यु के सम्बन्ध से स्मरण करते हुए चाक्राणि गार्गी ने कहा कि मुनिवरो! मेरे विचार में मृत्यु शरीर के त्यागने का नाम है जिसे एकाकी कहा जाता है। श्वेतकेतु ऋषि ने कहा, और सोमकेतु ऋषि ने कहा कि शरीर को त्यागने का नाम मृत्यु है तो परमाणुओं के नितान्त की वार्ता आ गयी तो देखो, वे ऋषि वार्ता में शान्त स्थापित हो गये। विचार विनिमय हुआ कि इस पर चिन्तन किया जाये। कोई शरीर के प्राणान्त को मृत्यु कह रहा है तो कोई अन्धकार को मृत्यु कह रहा है तो मानो देखो भिन्न-भिन्न प्रकार के विचार विनिमय होते रहे।

मृत्यु कोई वस्तु नहीं

महर्षि पिप्लाद मुनि ने कहा कि मेरे विचार में तो मृत्यु निराधार है मैं इसे कोई वस्तु स्वीकार नहीं करता। संसार में मेरे पुत्रो! ऋषि ने जब यह कहा तो नाना ऋषियों के नाना प्रकार के विचार विनिमय होने लगे और यह कहा कि मृत्यु है नहीं, यह आश्चर्य है। मृत्यु से मानव अपने जीवनपर्यन्त बचने का प्रयास करता रहता है परन्तु जब है नहीं तो प्रयास क्या है? तो पिप्लाद मुनि ने अन्त में यह कहा और देवर्षि नारदमुनि ने इसका समर्थन किया और भी नाना ऋषियों ने इस वाक्य के ऊपर नाना प्रतिक्रियाएँ कीं तो महर्षि पिप्पलाद अपनी वार्ता पर संकल्पमयी बन गये और कहा कि मृत्यु कोई वस्तु नहीं है। सायंकाल का समय था, सन्ध्या का काल हो गया तो ऋषि मुनि अपने कक्ष में जा पहुँचे, महर्षि पिप्लाद मुनि महाराज की वार्ता में मानो कुछ तथ्य था।

मृत्यु की विवेचना

महर्षि पिप्लाद अपने गृह वफो प्रस्थान कर गये, चले गये, जब अपने गृह में उन्होंने प्रवेश किया अपनी पत्नी को दृष्टिपात करने लगे तो पत्नी को व्याकुल दृष्टिपात किया, तो ऋषि ने कहा देवी! तुम इस प्रकार व्याकुल क्यों हो रही हो? तो उन्होंने कहा कि प्रभु! मैं व्याकुल इसलिये हो रही हूँ कि मेरा सात वर्षीय एक पुत्र था वह संसार में नहीं रहा, मृत्यु को प्राप्त हो गया। ऋषि कहते हैं हे देवी! मैं तो ब्रह्मवेताओं के समाज में से आ रहा हूँ और ब्रह्मवेताओं में यह निर्णय हो गया है कि मृत्यु कोई वस्तु नहीं है। मेरे प्यारे! यह कथ्य बड़ा विचित्र था। शकुन्तता उनका नाम है। शकुन्तता ने कहा कि प्रभु! मैंने यह स्वीकार कर लिया कि मृत्यु कोई वस्तु नहीं है परन्तु मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह जो मेरा शरीर मुझे दृष्टिपात आ रहा है, यह क्या है? ऋषि ने उतर दिया कि देवी! यह तो परमाणुओं का संघात है यह तो परमाणुओं का संघात है ब्रह्मंवाचप्रह्रेः ऋषि ने कहा कि यह परमाणुओं का संघात मुझे दृष्टिपात आ रहा है परमाणुओं का विच्छेद भी होता रहता है परन्तु मेरे विचार में यह तो परमाणुओं का स।घात दृष्टिपात हुआ।

देवी ने कहा प्रभु! चलो, मैंने यह वाक्य स्वीकार कर लिया, परन्तु जब यह मेरा शरीर नहीं था, उसके पूर्व यह परमाणुवाद कहाँ रहता था। ऋषि, पत्नी को उतर देते हुए कहने लगे 'सम्भवादेवं मम सम्प्रत्वै' हे देवी! यही परमाणु माता के गर्भस्थल में विद्यमान थे। माता के गर्भस्थल में जब निर्माण हो रहा था। निर्माणवेता निर्माण कर रहा है। यह विश्वकर्मा जो प्रभु है, इसका विज्ञान बड़ा नितान्त है, विचित्र है। माता के गर्भस्थल में एक एक परमाणु का संघात ही यह मानवीय शरीर कहलाता है। मानव का शरीर जब निर्माणवेता ने निर्माण किया, तो माता को ज्ञान नहीं कि कोई निर्माण कर रहा है। माता के गर्भस्थल में मानव के शरीर का जब निर्माण हुआ तो बेटा! बहतर करोड़ बहतर लाख दस हजार दो सौ दो नस नाड़ियों का निर्माण हुआ। परन्तु माता को यह प्रतीत नहीं होता कि कौन निर्माणवेता है, किसने निर्माण कर दिया। माता के गर्भस्थल में जब शिशु होता है तो जल में

ही होता है, आपो में ही रहता है। जलको अग्नि तपा रही है और सूर्य प्रकाश दे रहा है, चन्द्रमा सोम दे रहा है, वायु गति दे रहा, आकाश विद्युत का निर्माण कर रहा है, बृहस्पति मण्डल मनस्तव में प्राणों का हूत कर रहे हैं, वायु इस बालक के शरीर में गति कर रहा है। दश प्राणों के रूप में परिणत किया जाता है स्वतः ही अन्तरिक्ष अवकाश बनकर के अपनी आभा दे रहा है, वह ध्रुव मण्डल है वह स्थिरता दे रहा है, स्वातिमण्डल तेज की धारा प्रदान कर रहा है। सौर मण्डल है, एक सौर मण्डल कितना विशाल मण्डल कहलाता है, सर्वत्र इन सौर मण्डलों की धारा आ रही है।

ब्रह्माण्ड की विशालता

सौर मण्डल कितने हैं बेटा ? मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन किया था। मुनिवरो! देखो, एक सूर्य में 30 लाख पृथ्वियाँ, और एक सह।क् सूर्य बृहस्पति में, एक सह।क् बृहस्पति आरुणि में एक सहस्र आरुणि ध्रुव में, एक सहस्र ध्रुव जेठाय में, एक सह।क् जेठाय अक्षतकेतु में, एक सहस्र अक्षतकेतु वरुणकेतु में, एक सहस्र वरुणकेतु अचल मण्डल में, और एक सहस्र अचल मण्डल एक गन्धर्व में। बेटा! इतना सौर मण्डल बसता है और वे जो सौरमण्डल हैं, मानो देखो माता के गर्भस्थल में एक ब्रह्मकेतु नाड़ी चलती है। वह माता के नाभि स्थान से होती हुई इड़ा पिङ्गला नाड़ियों से उनका समन्वय होकर के और माता की लोरियों से उन नाड़ियों का समन्वय होकर के, मेरे प्यारे! देखो, उसकी छाया आती है वह बालक मानो उसकी प्रतिभा होती है।

परमाणुवाद

तो विचार विनिमय क्या? मेरे प्यारे! माता को यह प्रतीत नहीं है कौन निर्माण कर रहा है, कौन प्रकाश दे रहा है, कौन इसकी प्रतिभा स्वस्थ बना रहा है। यह बहुत गम्भीर, रहस्यतम माना गया है। देखो, माता के गर्भस्थल में यह परमाणुवाद है, परन्तु कितना परमाणुवाद है कि एक-एक परमाणु को वैज्ञानिकों ने बेटा! जब उसका विभाजन किया, तो एक एक परमाणु में सर्वत्र सृष्टि का सूत्र उसमें दृष्टिपात होता है। ऋषि मुनि इस प्रकार के अपने अनुभव, यन्त्रों में अपनी आभा में एक एक परमाणु का बेटा! चित्रण किया है। आज मैं तुम्हें उस क्षेत्र में नहीं ले जाना चाहता हूँ ऋषि ने जब यह कहा कि हे देवी! माता के गर्भस्थल में यह परमाणुवाद रहता है, माता के गर्भ में विश्वकर्मा उसका निर्माण करता रहता है निर्माणवेता वेद है वह निर्माण ''वेद रहस्यम्''। ऋषि ने जब यह कहा तो पत्नी बोली कि प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ कि जब माता के गर्भस्थल में यह परमाणुवाद नहीं होता, उसके पूर्व वह परमाणु कहाँ रहता है ? उन्होंने कहा, हे देवी! जब यह परमाणुवाद माता के गर्भस्थल में नहीं होता, यह परमाणु वीर्यत्व में होता है, वीराङ्गना के रूप में होता है। मानो देखो, वीर्यत्व के रूप में और कुछ वीराङ्गना के रूप में परमाणुओं का अपने कर्मवादी उससे बेटा! वीराङ्गना बन जाती है। उन परमाणु की रक्षा करने वाला मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी, देवता बन जाता है।

ऊर्ध्ववेता

इन परमाणुओं की दो ही गतियाँ होती है, एक ध्रुवा एक ऊर्ध्वा होती है। ऊर्ध्वा में मानो देवता बनता है और ध्रुवा में मानो पितरयाग करता है। ऊर्ध्वा में जाने वाला जन ऊर्ध्वरेता बन जाता है ऊर्ध्वरेता कैसे बनता है ? इस सम्बन्ध में बेटा! देखो, बहुत-सी चर्चाएँ हुई मानव के समीप। बेटा! मैं इन चर्चाओं को देने नहीं जा रहा हूँ, यह ऋषि मुनियों का अनुभव है, जिन्होंने बेटा! ऊर्ध्वरेता के ऊपर अपनी बहुत-सी प्रतिक्रियाएँ भी की हैं। सबसे प्रथम इन परमाणुओं को ऊर्ध्वा बनाने के लिये मानव को आहार की आवश्यकता होती है। आहार जब पवित्र हो जाता है तो व्यवहार पवित्र हो जाता है। जब आहार और व्यवहार दोनों पवित्र बन गये, तो बेटा! यह प्राण के

समीप मन को ले जाता है।

मन की स्थिरता का उपाय

संसार में कोई शक्ति ऐसी नहीं हैं जो मन को स्थिर कर सके। बेटा! मन को कोई स्थिर करने वाला है, तो वह प्राण है। प्राण ही इस मन को अपने में रक्षित बना सकता है। हमारे आचार्यों ने यह माना है। कहीं-कहीं प्राण वफो परमात्मा की छाया माना गया है, कहीं तो इसे आत्मा की छाया माना गया है इसको कहीं सामान्य माना है, कहीं इसे विशेष रूप में माना है। विशेष रूप में यह आत्मा की छाया है, और सामान्य रूप में यह परमात्मा की छाया कहलाता है। मेरे पुत्रो! देखो, यह जो प्राण है इस प्राण को जानना चाहिए जो स्वाभाविक गति कर रहा है। स्वाभाविक जो गतियाँ हो रही हैं देखो, प्रत्येक भाव को हम जब हव्य रूपी धागे में पिरो लेते हैं, तो हमारे जीवन की एक माला बन जाती है, हमारे पुण्य की एक माला बन जाती है और वह जो माला है उसे यह जो विश्व में धारण कर लेता है बेटा! वो मालाधारी बन जाता है, वह देव देवत्व बन जाता है। पुत्रियाँ वीराङ्गना बन जाती हैं जब इस मन के ऊपर, प्राण और मन दोनों का निरोध कर लेती हैं, दोनों को एक सूत्र में लाने का प्रयास करती हैं।

प्राणायाम

मेरे प्यारे! ऋषि मुनियों ने इसीलिये प्राणायाम के ऊपर बहुत महत्व दिया है, और यह कहा है कि प्राणायाम करने से ब्रह्मवर्चोसि बनते हैं, श्रोत्रीय ब्रह्मचारी बनते हैं, तत्वमयी ब्रह्मचारी बनते हैं। यह प्राण देखो, बेटा! तत्व में गति कर रहा है। यही प्राण है, प्राण के उसी रूप में उद्गीत होता रहता है। यही वह प्राण है जो घ्राण के रूप में उद्गीत होता हुआ अपने परमाणुओं को लेकर के जाता है।

एक समय बेटा! मुझे ऐसा स्मरण है इसी वाक्य के ऊपर ऋषि पिप्पलाद मुनि ने अपनी पत्नी से ऋषियों के एक अनुभव की चर्चा की। उन्होंने कहा देवी! एक समय हम पूज्यपाद गुरूदेव के आसन पर, उनके विद्यालय में अध्ययन करते थे। मेरे पूज्यपाद जो पाण्डित्य में वेद रूप थे, वो वायु गोत्रीय थे। एक समय वो अध्ययन कर रहे थे, विचार कर रहे थे, कि परमात्मा की गम्भीर मुद्रा में परिणत हो गये। वे प्राणायाम कर रहे थे, प्राणायाम करते हुए उन्होंने यह अनुभव किया है, कि मानव का एक श्वास मानो देखो, बाह्य जगत में जाता है तो जितने आकार का मानव का शरीर है, उसी आकार का परमाणुवाद गति करता हुआ दृष्टिपात आता है। इसमें आकार का एक एक माप होता है। इसीलिये प्राणायाम करना चाहिये। प्राण के साथ में हम मन का निरोध करके और मन के निरोध को और प्राण के निरोध को करते हुए हम ब्रह्मलोक के धागे में प्रत्येक श्वास को पिरोते हैं तो बेटा! द्यौ मण्डल उन श्वासों की गतियों से उस मानव का द्यौ मण्डल पवित्र बन जाता है। जब द्यौ मण्डल पवित्र बनता है तो उस आभा को लाने के पश्चात्, मानव को सुक्रियात्मक कर्म करना चाहिए।

कुण्डलिनी शक्ति

मैं यह क्या उच्चारण करने लगा हूँ ? बेटा! यह बड़ा विचित्र, गम्भीर, रहस्यतम विषय हैं। मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए ब्रह्मचारियों के मध्य में बेटा! यह चर्चाएँ आती रहती हैं। ब्रह्मचारी इसके ऊपर अध्ययन करते रहे हैं। विद्यालय में बेटा! जब हम इन शिक्षाओं को देते थे तो ब्रह्मचारी पवित्र बनते रहते थे। उसके बाद उनके समाज का निर्माण होता है, गृहों का निर्माण होता है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह वेद का आचार्य कहता है, ऋषि कहता है पिप्पलाद, हे देवी! यही परमाणु है, अब अपने आसन पर विद्यमान होकर के अपने प्राणों को निरोध करके सबसे प्रथम यह मूलाधार में प्रवेश करता हैं। मूलाधार में प्रवेश करता हुआ नाभिचक्र से होता हुआ

हृदय आदि अन्य चक्र में जब वह ब्रह्मरन्ध्र में गति करता है। ब्रह्मरन्ध्र में जब ये प्राण और मन दोनों प्रवेश करते हैं, तो मानो प्राण की डुगडुगी लगती है, उस समय ब्रह्मरन्ध्र मानो चक्रित हो जाता है और ब्रह्मरन्ध्र के चक्रित होने पर यह जो ब्रह्माण्ड है पृथ्वी का जितना मण्डल है, मानो यह उस देवी का ङाद्दार बन जाता है और ऐसा ङाद्दार बनता है कि जितना यह तारामण्डल है, एक-एक मण्डल जो एक दूसरे में पिरोया हुआ है, वह जो माला बनी हुई है ब्रह्माण्ड की, वह माला देवी के कण्ठ में विद्यमान हो जाती है। और उसे वह साक्षात्कार में अनुभव होने लगता है।

प्राण और मन

तो मेरे प्यारे! विचार क्या? देखो, यह संसार जितना है यह प्राण का और मन का ही है, क्योंकि मन पृथ्वी का सूक्ष्मतम तन्तु है, और वह जो प्राण है, वह ब्रह्म का सूक्ष्मतम, तन्तु, आत्मा का सूक्ष्मतम रहस्य माना गया है। जब दोनों का निरोध हो जाता है, तो दोनों का जो विच्छेद है, दोनों का मिलान करना है, दोनों को मिलाना है, मानो दोनों के एक सूत्र में पिरो देना है। यह साधना का क्षेत्र है, मैं साधना के क्षेत्र में तुम्हें नहीं ले जाना चाहता हूँ विचार यह देने आया हूँ कि परमाणुओं की रक्षा करने वाला बेटा! देवता बन जाता है, ब्रह्मचारी कहलाता है, ब्रह्मवर्चोसि बन जाता है, ब्रह्म के समीप चला जाता है। ब्रह्म की चर्चा करते हुए मेरी पुत्री वीराङ्गना बन जाती है। मेरी पुत्री जब इन परमाणुओं की रक्षा करती हुई वीराङ्गना बन करके गार्गी की भाँति वेद का गान गाती है, तो बेटा! देखो, सिंहराज गान में ओत-प्रोत हो जाते हैं। मानो मानव जब परमात्मा का गान गाने लगता है, तो उसके प्रत्येक श्वाँस की गति से ब्रह्म की चर्चाएँ, ब्रह्म का नामोकरण होने लगता है। सिंहराज, मृगराज एक पंक्ति में हो करके बेटा! वेद-ध्वनि को श्रवण करने लगते हैं। बेटा! मुझे वह वाक् स्मरण है जब चाक्राणि-गार्गी गान गाती थी, और वह गान गाती हुई मुनिवरो! देखो, सिंहराज सुन करके और उस गान के श्रवण करने से उनकी हिंसा का निवारण हो जाता था। देखो, ये वेद रूपी ज्ञान है, वेद रूपी प्रकाश है। ऐसा कौन अभागा प्राणी होगा जो वेद की ध्वनि को श्रवण करना नहीं चाहता। बेटा! मृगराज भी चाहता है, सर्पराज भी चाहता है, क्योंकि उनमें आत्मा है, चेतना है। मेरे प्यारे! देखो, वह शान्त होकर के अपनी माता की प्रतिभा को जानने के लिये तत्पर रहते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, कौन ऐसा अभागा प्राणी है जो माता की प्रतिभा को नहीं जानता कौन ऐसा अभागा प्राणी है जो अपने पिता की प्रतिभा नहीं चाहता। वह परमपिता परमात्मा पितर है। और ये वेद उसका ज्ञान है, वेद उसके ज्ञान की कुंजी है।

वेदगान की महिमा

जब हृदयगम्य होकर के गान गाता है, अहिंसा परमोधर्म से गान गाता है, तो बेटा! देखो, वह हिंसक प्राणी भी हिंसा को त्याग करके अहिंसा परमोधर्मी बन करके वेद ध्वनि में ओतप्रोत हो जाता है।

ब्रह्मचर्य ही जीवन

मेरे प्यारे! मैं कहाँ चला गया हूँ, दूरी नहीं जाना चाहता हूँ। विचार विनिमय क्या? मुझे स्मरण आता रहता है ऋषि-मुनियों का वह काल, बेटा! जहाँ पति पत्नी दोनों अपने में कितने विचारक, मेरे प्यारे महर्षि पिप्पलाद मुनि महाराज ने कहा कि देवी! इन परमाणुओं की रक्षा करने वाला देवता कहलाता है, इन परमाणुओं की रक्षा करने वाला मानव वैज्ञानिक कहलाता है, इन परमाणुओं की रक्षा करने वाली मेरी पुत्री वीराङ्गना बन करके, बेटा! इस संसार को प्रकाश देती है।

आओ मेरे प्यारे! विचार क्या? मुनिवरो! देखो, ''ब्रह्मवर्चोसि सम्भवः'' ब्रह्मचर्य के दो अर्थ माने गये हैं जो मैंने पुरातन काल में निर्णय दिया था। दो ही अर्थ हैं ब्रह्मचर्य के, ब्रह्म और चरी। ब्रह्म कहते हैं परमात्मा वफो और

चरी कहते हैं प्रकृति को। जो प्रकृति और ब्रह्म दोनों को आद्योपाद्द जानता है वह ब्रह्मचारी कहलाता है। ब्रह्मवर्चोसि, ब्रह्मचारी कौन है? वेद का ऋषि कहता है, देवी! ब्रह्मचारी वही है, जो ब्रह्म को जानता है। ब्र्ह्म रूपी जो परमाणु गति कर रहा ''ब्रह्मेब्रह्म सम्भवः'' देखो, इन परमाणुओं से ब्रह्म को जाना जाता है। वही ब्रह्मवर्चोसि कहलाता है। मुझे देखो, बहुत सा काल स्मरण आता रहता है, देवताओं का संग्राम भी स्मरण आता रहता है। ब्रह्म और चरी दोनों को जानने वाला, देखो, ब्रह्मचर्य को जानने वाला, ब्रह्म को जानता है और चरी को जानने वाला देखो, प्रकाश जो अन्धकार का अन्त कर रहा है, वह प्रकाश को दृष्टिपात करता है। प्रकाश को प्रकाश से मिलान करता हुआ प्रकाशमयी संसार को दृष्टिपात करता है। यह प्रसद्द बड़ा विचित्र है। महाराजा अश्वपति के यहाँ ब्रह्मचारियों को यह शिक्षा प्रदान की जाती थी। ब्रह्मचारी इसी से ऊँचा बनता है, क्योंकि बिना ज्ञान के ब्रह्मचारी नहीं बनता। यदि ज्ञान नहीं है तो ब्रह्मचर्य की रक्षा नहीं कर सकता। परमाणुवाद की रक्षा वही प्राणी करता है, जो प्रत्येक इन्द्रिय के विषय को जानता है। जो प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों के सम्बन्ध में उसके ज्ञान और विज्ञान को जानता है, वही ब्रह्मवर्चोसि बनता है। ऋषि-पत्नी ने जब यह व्याख्या श्रवण की तो ऋषि-पत्नी ने प्रस्तुत होकर कहा, देखो, प्रभु! मैं यह जानना चाहती हूँ, जब ये वीर्यत्व और वीराद्दना रूप भी नहीं होता तब यह परमाणुवाद कहाँ रहता है ?

अन्न का महत्व

ऋषि, पत्नी से बेले, देवी! यही परमाणुवाद अन्न में विद्यमान है यही परमाणु अन्न के रूप में विद्यमान है। देवी! प्रभु का विज्ञान, प्रभु की प्रतिभा एक एक अन्नाद में विद्यमान है। हे देवी! तुम्हें प्रतीत हो जाना चाहिए, मानो एक अन्न को मेरी प्यारी माँ भोजनालय में पका रही है। जो उसका निचला भाग शेष कहलाता है उसको पशु पान कर रहा है मेरे प्यारे! देखो, मानव अन्न को पान कर रहा है तो शेष की उत्पति कर रहा है और उस अन्न को पान करने वाला पशु दुग्ध को दे रहा है। वाह, रे प्रभु! तू कितना वैज्ञानिक है। एक पौधा है, एक पौधे पर दो प्रकार का अन्न है एक मानव पान कर रहा है एक पशु पान कर रहा है। मानव पान करता हुआ शेष की उत्पति कर रहा है और पशु पान कर रहा है तो बेटा! दुग्ध दे रहा है। मेरे प्यारे! वही दुग्ध है जिसकी ऋषि मुनि और आयुर्वेदवेता प्रशंसा करते रहते हैं। गौ नाम के पशु में उसकी प्रशंसा होती रहती है। देखो ''देवं ब्रह्मे देवं स्वाहाः'' वेद का आचार्य कहता है देवी! ये दो प्रकार के अन्न हैं एक अन्न को पशु पान कर रहा है तो एक अन्न को मानव पान कर रहा है। पृथ्वी के पिता ने मानो ये सात प्रकार के अन्न को उत्पन्न किया है सात प्रकार के अन्न को इस पृथ्वी के साथ उत्पन्न किया।

यज्ञ द्वारा सृष्टि का सन्तुलन

मानव यज्ञशाला में विद्यमान हो रहा है, होता जन विद्यमान हैं। आहुति दे रहे हैं, हूत कर रहे हैं, अग्नि के द्वारा हूत कर रहे हैं। यह परमाणु बनकर के अन्तरिक्ष के वायु मण्डल को बना रहा है। मेरे प्यारे! देखो, इसी से पर्जन्य होता है, इसी रस रूप में वृष्टि होकर के वे परमाणुवाद में परिणत हो जाते हैं। तो परिणाम क्या? मुनिवरा!े देखो, हूत यह एक याग है। जो भी अन्न है, ''हूत नामान् यागान् ब्रह्म अग्नि देवाः'' यह अग्नि देवताओं का मुख कहलाता है, अग्नि के मुख में स्वाहाः कहता है, यज्ञमान अग्नि में परिणत कर देता है। अग्नि में स्वाहाः कहते हुए अपने में हूत करके वह परमाणु बना करके, सूक्ष्म बना करके, वह मुनिवरो! देखो, देवताओं को प्रसन्न कर देते हैं। देवता उसी परमाणु को द्वितीय रूप में परिणत करके बेटा! वृष्टि के रूप में पृथ्वी को प्रदान कर देते हैं। बेटा! हूत हो रहा है यह भी एक अन्नाद है बेटा देखो, एक विचित्र अन्न है जो हमारे यहाँ हूत कहलाता है। बुद्धिमान हैं, वे अपना ज्ञान दे रहे हैं, उपदेश दे रहे हैं वह भी तुम्हारा अन्नाद है। उस अन्न के द्वारा तुम अपने को

मानो विचारवान बना रहे हो, शक्तिशाली बना रहे हो, राष्ट्र की चर्चा गा गा कर वह सर्वस्वता में प्रदान कर रहा है, वह हूत, करने वाला वह पुरोहित कहलाता है। वह पुरोहित विद्यमान हो करके तुम्हारे कल्याण की चर्चा कर रहा है। बेटा! यह अन्न देखो, सामाजिक-अन्न हो गया संसार का अन्न बन गया। बा"य जगत का अन्न बन गया।

वाणी, मन और शब्द

परन्तु बेटा! तीन अन्नाद परमपिता परमात्मा ने आत्म-कल्याण के लिए उत्पन्न किया। अन्नाद देखो, वाणी है, मन है और ''घ्राणां ब्रह्मे पुत्राः देवत्सौ'' मेरे पुत्रो! देखो, ये तीन अन्नाद हैं। श्रोत्रों से शब्दों को ग्रहण कर रहा है, अन्तःकरण में उसके संस्कार बन रहे हैं। वाणी से उद्गान गा रहा है, उद्गीत गा रहा है उससे ज्ञान की वृद्धि हो रही है। मेरे पुत्रो! देखो, मन इसके ऊपर चिन्तन कर रहा है। चिन्तन मन करता हुआ इस संसार को विचार रहा है, इस परमात्मा की प्रतिभा को विचार रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि ने संक्षेप में अपनी आभा प्रकट की और ये कहा कि देवी! सृष्टि के पिता ने सात प्रकार के अन्न को उत्पन्न किया है इस अन्नाद को पान करना हमारा कर्तव्य है।

मृत्यु की वास्तविकता

संक्षेप में ऋषि ने चर्चाएँ कीं तो देवी ने नत-मस्तक होकर के कहा कि हे प्रभु! मैं जानना चाहती हूँ कि मानो जब यह अन्न भी नहीं रहता तो यह परमाणुवाद कहाँ रहता है? ऋषि-पत्नी ने जब यह कहा तो ऋषि बोले हे देवी! जब यह अन्न भी नहीं होता, सात प्रकार का अन्न भी नहीं होता तो ये परमाणु पृथ्वी में बिखरे हुए, पृथ्वी में विद्यमान रहते हैं। कुछ अग्नि में बिखरे हुए, कुछ जल में बिखरे हुए, यह पंचीकरण कहलाता है। हे देवी! देखो, जब ये मानव का जो शरीर हमें दृष्टिपात आ रहा है, जब आत्मा इसे त्याग देता है तो आत्मा का ह्रस नहीं होता, आत्मा का विनाश नहीं होता है। जब उस शरीर को अग्नि में दाह कर देते हैं, उस समय अग्नि के परमाणु अग्नि में प्रवेश हो जाते हैं। वायु का भाग वायु में प्रवेश कर गया, अवकाश आकाश में चला गया, पृथ्वी के परमाणु पृथ्वी में रत हो गये। देवी! आपो आपो में रत हो गया मानो रूपान्तर हो गया। उस आत्मा का विनाश नहीं होता। देवी! तुम्हें यह प्रतीत हो गया होगा, इन परमाणुओं के चले जाने के बाद जो मानव शरीर का एक अन्त हो जाता है, एक एक परमाणुवाद बन जाता है, अपने अपने तत्वों में रमण कर जाता है, परन्तु वे दृष्टिपात नहीं आते हैं। मेरे प्यारे! पिप्लाद मुनि की वार्ता श्रवण करने वाली धर्मदेवी ने कहा धन्य है प्रभु! नत-मस्तक होकर बोली-धन्य है देव! आपने मेरे अज्ञान को समाप्त कर दिया। वास्तव में यह अज्ञान है ''अज्ञानं ब्रह्मे'' मेरे हृदय में अन्धकार की प्रतिभा थी, वह नष्ट हो गयी, उसका विनाश हो गया है। वास्तव में आपके विचारों में मृत्यु मुझे दृष्टिपात नहीं आती।

मृत्यु की मृत्यु

तो मेरे प्यारे! ऋषि कहता है हे देवी! मृत्यु भी है। जब ऋषि ने यह कहा तो देवी ने यह कहा भगवन! मैं यह नहीं मानती। उन्होंने कहा नहीं देवी! तुम्हें प्रतीत है ऋषि मुनियों की सभा में, राजा जनक की सभा में, जब अर्धभाग ने महर्षि याज्ञवल्क्य से कहा कि मृत्यु की मृत्यु क्या है ? तो ऋषि कहता है कि मृत्यु की मृत्यु ब्रह्म है। ब्रह्म को जानने वाले की मृत्यु नहीं होती। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मौन हो गये, पत्नी मौन हो गयी। उन्होंने कहा कि देवी! तुम्हें यह प्रतीत है कि मृत्यु की मृत्यु ही ब्रह्म है। जब परमात्मा की सर्वज्ञता का ज्ञान हो जाता है, कि ब्रह्म सर्वत्र है, एक एक कण-कण में व्याप्त है। परन्तु आत्मा एक आत्मा जो यहाँ है उसका प्रकृति का रूप, प्रकृति में प्रवेश हो जाता है तो उसके वाक्य का नाम अन्धकार है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि यह वाक्य कह करके देवी से बोले कि हे देवी! संसार में जो ज्ञानी पुरुष होते हैं जो विवेकी पुरुष होते हैं मानो जो परमात्मा को अपने

में जो ध्यानावस्थित हो जाते हैं, देवी! उनकी मृत्यु नहीं होती। मृत्यु शब्द का उच्चारण भी उन्हें नहीं करना चाहिए। मृत्यु को, ज्ञान नहीं कहना चाहिए, क्योंकि मृत्यु तो अज्ञान है। अज्ञान को नष्ट करना इस संसार में प्रकाश है। और मुनिवरो! प्रकाश वफो लुप्त करना इस संसार में मृत्यु कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने यह वाक्य प्रगट किया तो ऋषि पत्नी चरणों में ओत-प्रोत हो गयी और यह कहा धन्य हे प्रभु! आपने मेरे में प्रकाश किया है अन्धकार मेरा नष्ट हो गया है।

तो मेरे प्यारे! बेटा देखो, यह है हमारा आज का वाक्य। आज के वाक्य, उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, इस संसार सागर से पार होना चाहते हैं। पार उस काल में होंगे जब हमारे जीवन में प्रकाश होगा, ज्ञान का प्रकाश होगा, ब्रह्मवर्चोसि बनकर के अपने को ऊँचा बनाने में तत्पर रहेंगे बेटा! तो हमारा यह अज्ञान समाप्त हो सकता है। प्रकाश में जाने का नाम जीवन है और प्रकाश से दूर होने का नाम मृत्यु है। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा दिनांक, 6-4-83,लूम्ब जि0 बागपत

४ दीक्षा ०८ ०४ १९८३

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस पवित्र वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है।

मानव का परम कर्तव्य

यह जो ब्रह्माण्ड है, यह उस परम पिता परमात्मा की एक प्रतिभा कहलाती है। यह कैसा अनुपम जगत् मानव के समीप है ? इसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही अनुसन्धान करता चला आ रहा है। अनुसन्धान करना मानव का कर्तव्य है। संसार का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं है, जिस क्षेत्र के ऊपर मानव ने अनुसन्धान नहीं किया हो। क्योंकि परम्परागतों से यह मानव अपने में ही इस संसार को दृष्टिपात करता रहा है। नाना ऋषि

हुए हैं, ब्रह्म की उड़ान उड़ने वाले रहे हैं। उन ब्रह्मवेताओं ने भी बहुत ऊँची उड़ानें उड़ी हैं। इस संसार को चिन्तन करने, मनन करने से प्रतीत हुआ कि मेरी प्यारी माता ने भी इस संसार को जानने के लिये बहुत प्रयत्न किये हैं। परम्परागतों से बेटा! मुझे ऐसा दृष्टिपात है बहुत-सी मेरी पुत्रियाँ और माताएँ इस प्रकार की हुई हैं जिन्होंने बेटा! अपने अन्तर्हृदयों में या हृदय के उच्छवास में आत्मा जब प्रवेश होता है तो ऐसी बहुत-सी मेरी प्यारी माता हुई हैं जिन्होंने गर्भस्थल से आत्मा का आत्मा से मिलान किया, उसके ऊपर विचारा है। माता यह कहती है कि हे आत्मा! तू मेरे गर्भस्थल में आई है। कहाँ से आई है ? कौन है ? तो बेटा! उस चेतना के चेतना से मिलान करने वाली मेरी बहुत-सी पुत्रियां हुईं। हमारे यहाँ यह माना गया है कि माताओं को तपस्या करनी चाहिये। तपोमयी जीवन होना चाहिये। माता जितना अपने जीवन को तपस्या में व्यतीत कर देती है उतना ही मानो उनका भव्य जीवन माता मल्दालसा की भाँति पवित्र बन जाता है। मेरे प्यारे! माता जब अपने में अनुसन्धान स्वाध्यायमयी बन जाती है तो बेटा! देखो, माताओं का जीवन चाक्राणी गार्गी जैसा बन जाता है क्योंकि ज्ञान ही संसार में एक महान कर्तव्य है ज्ञान का उपार्जन करना ही मानव का जीवन है।

वेद का स्वाध्याय

मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था कि ''वेदः अमृतात् दिव्यं भवे सम्भवः अस्तुतः'' क्योंकि वेद एक अमृत है ''ज्ञानां ब्रह्मे लोकां हिरण्यवृताः'' आत्मवान् वही प्राणी होता है, जिसे बेटा! वेद का प्रकाश हो जाता है, आत्म ज्ञान प्राप्त हो जाता है। वेद का स्वाध्याय करने वाला, उसे अमृत जान करके पान करने वाला जब बेटा! विवेक के क्षेत्र में पहुँच जाता है तब मुनिवरो! देखो, वह इस संसार में यदि वह निचले स्तर पर भी आ जाता है, तो पुनः से ऊर्ध्वा में गति करने लगता है। परन्तु देखो, पठन-पाठन, हमारा स्वाध्याय, एक महान पवित्र होना चाहिए।

आओ, मेरे प्यारे! स्वाध्याय के सन्बन्ध में बहुत-सी चर्चाएँ मुझे स्मरण आती रहती है। आज के हमारे वेद के पठन-पाठन में बेटा! पितर यागों का बहुत वर्णन आ रहा है। वेद का मन्त्र कह रहा था कि ''पितरश्चं ब्रह्मे वाचस्प्रवह्वा अस्तु'' हमें पितरों की सेवा करनी चाहिए। विचार आता है कि पितरों की सेवा कैसे की जाये? बेटा पितरों की सेवा मानो उन्हें अप्राद इत्यादियों से तृप्त करने वाले बनें। मेरे प्यारे देखो! मुझे एक वार्ता स्मरण आ गयी है।

आत्म-चिन्तन

यह वार्ता मैंने पुरातन काल में भी तुम्हें प्रगट की है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में बेटा नाना वैज्ञानिक और पितर याज्ञिक रूप में रहे हैं? जिन्होंने परमाणुवाद के ऊपर बेटा! अपने गृहों की दुर्गम प्रणाली अपनायी है। मुझे स्मरण है हमारे यहाँ एक गोत्र हुआ है जिस गोत्र का नाम भारद्वाज कहलाता है। बेटा! भारद्वाज गोत्र में नाना ऋषि हुए हैं, परन्तु एक ऋषि का नाम था रेंगनी भारद्वाज! तो रेंगनी भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ प्रातःकालीन बेटा! ब्रह्म का चिन्तन होना देव-याग करना, पितर याग करना, यह नित्य प्रति का उनका क्रिया कलाप था। यह क्रिया कलाप होता रहता था। आत्मचिन्तन करना उनका मुख्य एक कर्तव्य होता है।

दैनिक-याग

प्रत्येक गृह में बेटा! गार्हपथ्य नाम की अग्नि का, गार्हपथ्य नहीं तो गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन होना चाहिए। पूजन का अभिप्राय यह बेटा! वैदिक काल से अग्नि के बहुत से पर्यायवाची शब्द आते हैं। मुनिवरो! देखो, हमारे यहाँ विचारों का नाम भी अग्नि है। एक अग्नि काष् में रहने वाली है जो यज्ञशाला में प्रदीप्त होती है। एक अग्नि मानव के विचारों में प्रदीप्त हो रही है। एक अग्नि मानव को मानव की आभा में प्रगट कर रही है। बेटा! वह जो गृहपथ्य नाम की अग्नि है, प्रत्येक मानव यह चाहता है कि मेरे गृह में सुलभ होनी चाहिए। तो मेरे प्यारे! सुलभ वहाँ प्राप्त होती है जहाँ गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन होता है। गृहपथ्य नाम की अग्नि क्या है? बेटा! गृह में रहने वाले जो पति-पत्नी हैं, उनके विचार-मनन होने चाहिए। दर्शनों का अध्ययन होना चाहिए। मानो उनके गृह में जो उत्पन्न होने वाली सन्तानें हैं, पुत्र-पुत्रियाँ हैं, वह माता-पिता के अनुसार अपने जीवन को वरतती रहती हैं तो बेटा! जैसा उनका जीवन है वैसा ही बेटा सन्तानों का जीवन है तो गृह स्वर्गवत् बन जाता है, वह स्वर्ग कहलाता है।

ज्ञान कर्म उपासना

आओ, बेटा! मैं तुम्हें एक सुलभ में ले जाना चाहता हूँ, मैं सुलभवादी ऋषियों के आश्रम में ले जाना चाहता हूँ, रेंगनी भारद्वाज मुनि के यहाँ विद्यालय में मुख्यतः तीन प्रकार का क्रिया कलाप है। विद्यालय में सर्व प्रथम ज्ञानँ मेरे प्यारे! ज्ञान कर्म और उपासना मानो ज्ञान के पश्चात् कर्म हैं कि हे ब्रह्मचारियों ! तुम इस प्रकार अपना क्रिया कलाप करो, जैसे मानव को, नेत्रों के सम्बन्ध में यह ज्ञान कराया कि यह दृष्टिपात करती रहती हैं। परन्तु देखो, दृष्टिपात करने वाले नाना प्रकार के चित्रों को नेत्र लेते रहते हैं, उनकी चित्रावलियों का ज्ञान करना। ब्रह्मचारियों को उसके पश्चात् कर्म की आभा में परिणत कर देना। कि तुम क्रियात्मक अपना कर्म करो एक-दूसरे को मिलान करने की उनकी प्रविष्ट लाने के लिये, बेटा! आचार्यजन होते हैं। जैसे वेद के मन्त्रों में आता है ''प्राणं ब्रहे मनः वैवस्त्व प्रह्रेः लोकाः'' जैसे वेद के मन्त्रों में आया कि यह प्राण गति कर रहा है जैसे वेद के मन्त्रों में आया ''सम्भवे देवा प्रवेसुतम प्रह्राः प्रकृतिं भूषणं ब्रह्मे वर्चतः'' तुम्हारी जो क्रियाएँ हैं, क्रियाओं में ही सर्वत्र ब्रह्माण्ड का विज्ञान विद्यमान रहता है।

कर्म की पाँच गतियाँ

महर्षियों ने वर्णन कराया, हे ब्रह्मचारियों! यह जो दृष्टिपात आने वाला जगत है मानो इसकी पाँच गतियाँ कहलाती हैं। सबसे प्रथम प्रसारण है, उसके पश्चात् गति है, उसके पश्चात् ध्रुवा, ऊर्ध्वा है, और आकुंचन, ये पाँच गतियाँ है दृष्टिपात करने वाले जगत् की। मानो देखो, पाँचों गतियों में यह संसार का विज्ञान गति कर रहा है। मेरे

प्यारे! उन्होंने वर्णन किया कि प्रसारण, गति, ध्रुवा, ऊर्ध्वा और आकुंचन मुनिवरो! देखो, यह गतियाँ परम्परागतों से ही वैज्ञानिकों के मस्तिष्कों में नृत्य करती रहती हैं। बेटा! ऋषि मुनियों ने वर्णन कराया है कि यह जो पाँचो प्रकार की गति है इसको जान लेना चाहिए। आन्तरिक जगत् में जानोगे तो बेटा! अध्यात्मवेता बन जाओगे। बा"य जगत में जानोगे तो प्रकृति के विज्ञान को जानकर के वैज्ञानिक बन जाओगे। मेरे प्यारे! ये सर्वत्र क्रियाएँ आचार्य विद्यालय में प्रवेश करा रहा है। क्रियात्मक यन्त्रों के द्वारा उन्हें विद्यमान करा रहा है।

ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर की दीक्षा

मुनिवरो! देखो, कुफछ समय के पश्चात् विद्या का काल पठन-पाठन का काल श्वेताश्वेतर ब्रह्मचारी भारद्वाज का वह काल पूर्ण होने जा रहा है। जब पूर्णता को प्राप्त होने लगा तो एक समय मुनिवरो! देखो, श्वेताश्वेतर ने आचार्य से यह प्रश्न किया कि महाराज! मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह जो ब्रह्माण्ड नृत्य कर रहा है यह केसे कर रहा है ? तो ऋषि ने कहा कि जो पाँचों प्रकार की गति हैं इनके ऊपर वह नृत्य हो रहा है। देखो, विष्ट यों को जानने के लिये, वह जो नृत्य हो रहा है, उस क्रिया कलाप को जानने के लिये मानव को विज्ञान के क्षेत्र में जाना है। यह वाक्य जब उन्होंने प्रगट कराया तो ब्रह्मचारी मौन हो गये। उनके यहाँ एक विज्ञानशाला ऐसी थी जिसमें नाना तारा मण्डलों के उस यन्त्रशाला में चित्र आते रहते थे। एक आकाश गंगा के चित्रों के लोकों की गणना कर रहे हैं ब्रह्मचारी, परन्तु गणना में नहीं आ रहा है। कितना अमूल्य जगत है प्रभु का। मेरे प्यारे! एक शनि-मण्डल को उनकी विज्ञानशाला में यह दृष्टिपात हुआ कि एक शनि को लगभग तीन सूर्य प्रकाशित कर रहे हैं। एक रोहिणी-व्रात-मण्डल है उसको लगभग बहुत से सूर्य हैं जो एक ही मण्डल को प्रकाशित कर रहे हैं। ऐसे लोकों का चित्रावलियों में, उनके यहाँ विज्ञानशाला में दिग्दर्शन होता है। ब्रह्मचारी बड़े प्रसन्न युक्त होकर के बेटा! अध्ययन कर रहे हैं। चरित्र की आभा में भी रमण कर रहे हैं।

विद्यालय के प्रति कर्तव्य

तो मेरे प्यारे! देखो, कुछ काल के पश्चात् वह श्वेताश्वेतर भारद्वाज का शिक्षा काल समाप्त हो गया। उस समय आचार्य ने कहा हे ब्रह्मचारी! तुम्हारी शिक्षा पूर्ण हो गयी यहाँ। शिक्षा का काल, पठन-पाठन का काल समाप्त होने जा रहा है। आओ, अब मैं तुम्हें दीक्षा देने वाला हूँ। बेटा! यहाँ दीक्षा के समय आचार्य ब्रह्मचारी को दीक्षित बनाता है और दीक्षा देता हुआ कहता है हे ब्रह्मचारी! आज तुम इस विद्यालय को त्याग रहे हो। आज तुम्हें मैं दीक्षा दे रहा हूँ जाते समय, मानो तुम्हें कुछ उपदेश दे रहा हूँ। दीक्षा में केसे उपदेश देते हैं ? ब्रह्मचारी! जिस विद्यालय में तुमने अध्ययन किया है, यह विद्यालय तुम्हारी दृष्टि में रहना चाहिए। यह विद्यालय तुम्हारे यहाँ पवित्र आभा में रमण करना चाहिए, क्योंकि इस विद्यालय की भूमि तुम्हारे लिये बड़ी पुण्यवान है। पुण्यवान क्यों है ? क्योंकि इस पर तुमने अपने अन्तःकरण में जो संस्कार हैं, अध्ययन करते हुए तुमने अपने उन संस्कारों को जागरूक किया है। तुम्हारे इस मानव शरीर के, चित के मण्डल में, ज्ञान और विज्ञान की तरङ्गें रमण करती रहती हैं। परन्तु विद्यालय में जब ब्रह्मचारी अध्ययन करता है तो परमात्मा का ब्रह्माण्ड जो अन्तःकरण में विद्यमान रहता है वह उसके समीप आने लगता है। वह ब्रह्मचारी अपने में मनन बनने लगता हैं। वेद जैसे प्रकाश को देते हैं, मानव के अन्तःकरण को पवित्र बनाने वाला है, मानव का अन्तःकरण सूर्य की भाँति हो जाता है। वेद-अध्ययन करने वाला अपना स्वतः अध्ययन करता है। वेद प्रकाश है, प्रकाश में जब अपना सुअध्ययन करता है तो मन, बुद्धि, चित, अहधर, प्रकृति के मण्डल को जान करके, वह वैज्ञानिक बनकर के, उसके पश्चात् वह आध्यात्मिक-क्षेत्र में चला जाता है।

आत्म उत्थान

मेरे प्यारे! हम कोई व्याख्याता नहीं है केवल परिचय देने आये हैं मेरे पुत्रो! और वह परिचय क्या है? ब्रह्मचारी से कहता है आचार्य, कि अब मैं तुम्हें दीक्षित बना रहा हूँ। हे ब्रह्मचारी! तुम इस विद्यालय की जो पवित्र भूमि है। यह पवित्र-भूमि तुम्हारी दृष्टि में पुण्यवान रहनी चाहिए। मेरे प्यारे! गुरु उपदेश में कहता है ''ब्रह्मचर्य आत्मना देवस्याम्'' हे ब्रह्मचारी! तुम्हें ब्रह्मचारी रहना है संसार में, ब्रह्मचारी किसे कहते हैं ? ब्रह्मचारी कौन होता है? मानो ब्रह्मचारी ब्रह्म और चरी दोनों को जानने वाला देखो, ब्रह्मचर्य को जानने वाला ही ब्रह्म को जानता है। और चरी मानो प्रकृति को जानने वाला देखो, प्रकाश को, जो अन्धकार को, अज्ञान को, नष्ट कर रहा है, दृष्टिपात करता हुआ अपने जीवन को उर्ध्वा में ले जाता है वही ब्रह्मवर्चोसि बनता है। शेष अनुपलब्ध दिनांक, 8-4-83, लूम्ब जि0 बागपत

५ यज्ञशाला का द्यौ-गामी रथ १० ०४ १९८३

जीते रहो, देखो, मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ पठन-पाठन का जो ये कर्म है यह परम्परागतों से ही माना गया है। क्योंकि ये मानवीय मस्तिष्कों में विचित्रता से रहा है। हमारे यहाँ नाना प्रकार से वेदों का पठन-पाठन किया जाता है। जैसे हमारे यहाँ माला पाठ, घन पाठ, जटापाठ विसृत उद्गान केतु पाठ विसृत उदात अनुदात, और भी नाना प्रकार के वेदों का पठन-पाठन किया जाता है। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही ये जो पठन-पाठन का कार्य है यह नाना रूपों में रहा है। गान गाने वाला गाता ही रहता है क्योंकि वेदों के पठन-पाठन के कई प्रकार माने गये हैं। क्योंकि ज्ञान-विज्ञान को मानव नाना प्रकार से उसका उद्घोष करता रहता है क्योंकि इसको हमारे यहाँ त्रिवर्धा माना गया है। त्रिवर्धा में त्रिविद्या का वर्णन आता है। मानो त्रिवर्धा में तीन गुणों का वर्णन आता रहता है। त्रिवर्धा में तीन मात्राओं का वर्णन आता रहता है। त्रिवर्धा में तीन परमाणुओं का वर्णन भी त्रिवाद कहलाता है। परन्तु

यह जो त्रिवर्धा है, मानो नाना रूपों से उसके गान रूप में इसका वर्णन करता रहा है।

वेदोच्चारण के विभिन्न पाठ

बेटा! मुझे आज के वेद का पठन-पाठन नाना प्रकार की प्रेरणा दे रहा है। इस प्रेरणा का जो ।केत है, मेरे प्यारे! देखो, हृदय से उसका समन्वय रहता है। तो इसीलिये मानव का जो हृदय है, वह उद्गीत गाता रहता है। कहीं आचार्य यज्ञशाला में विद्यमान होकर के उद्गाता के रूप में उद्गान गा रहा है, कहीं ब्रह्मा की वैदिक उपाधि को प्राप्त करके उद्गान गा रहा है। कहीं होता बनकर के वह स्वाहा कहकर के अपनी वाणी को, सुविचारों को द्यौलोक में परिणत कर रहा है।

''ओ३म'' माला रूप संसार का सूत्र

मेरे प्यारे! इसके भिन्न-भिन्न प्रकार के स्वरूप माने गये हैं, क्योंकि वेदां अमृतं देवाः'' यह माला पाठ की जो सरसता आती है, जैसे हमारे यहाँ ये मालापाठ गाया जाता है, तो माला-पाठ का अभिप्रायः यह है, कि जैसे माला होती है, और माला में भिन्न-भिन्न प्रकार के मनके होते हैं। हमारे यहाँ बेटा! जब वेद का गान गाया जाता है, मन्त्र उच्चारण किया जाता है, तो प्रारम्भ में ओ३म् को उच्चारण करते हैं। ओ३म् क्यों उच्चारण किया जाता है ? क्योंकि संसार में सबसे प्रथम कोई मात्रा है तो उसका नाम ओ३म् है मानो बाल्य जब माता के गर्भस्थल से उत्पन्न होता है, वह पृथ्वी के गर्भ में आता है वहाँ भी मानो एक ध्वनि उत्पन्न होती है, ओ३म् । वह ओ३म् की ध्वनि क्यों उत्पन्न होती है ? क्योंकि जितना भी यह ब्रह्माण्ड है, जितना भी इसमें ज्ञान है, विज्ञान है, वह सब ओ३म् रूपी धागे में पिरोया हुआ है, वह ओ३म् रूपी सूत्र में पिरोया हुआ है। इसीलिये बेटा! जितना भी याग-कर्म है जितना भी मानो पाठ्य-कर्म है, वह भी उसी से मानो गुथा हुआ है। तो इसीलिये हमारे वेद के आचार्यों ने कहा है, ऋषि-मुनियों ने अनुसन्धान कर, बेटा! यह कहा है, कि हमें अपनी प्रविष्ट यों में, अपने प्रत्येक अंग और उपाङ्गों में ओ३म् रूपी सूत्र में अपने को पिरो देना चाहिये। ओ३म् रूपी सूत्र में पिरोना ही अनेकता से एकता में प्रवेश करना है। और यदि उससे विच्छेद होते हैं तो हमारे मन की प्रविष्ट याँ प्रकृतिवाद में अपने में बिखर जाती हैं। जब अपने में बिखर जाती हैं तो मुनिवरो! देखो, एकता में अनेकता को दृष्टिपात करता है और जितनी अनेकता आ जाती है प्राणियों की प्रविष्ट यों में, उतना यह प्रभु से दूर होता जाता है। जितनी एकता होगी उतना ही सूत्र होगा। जितनी अनेकता

होगी उतनी ही मन्त्रों के रूप में ये प्रविष्टियाँ भी बिखर जायेंगी और बिखरने के पश्चात् हम परमपिता परमात्मा से दूरी होते चले जायेंगे।

याज्ञिकता

इसीलिये आज का हमारा वेद-मन्त्र बेटा! याग के लिये कुछ कह रहा है। आज का हमारा वेद-मन्त्रः याग के लिये कह रहा है कि प्रत्येक प्राणी को संसार में याज्ञिक बनना चाहिए। मेरे प्यारे महानन्द जी मुझे प्रेरणा दे रहे थे। कुछ वेद-मन्त्रों की भी प्रेरणा हो रही थी कि हमारा याग पवित्र होना चाहिए। जैसे योगी जन अपनी प्रविष्टयों से याग करते हैं। वैज्ञानिक जन अपने परमाणुओं को जान करके उनसे याग करते हैं। इसी प्रकार नाना प्रकार के द्रव्य के शाकल्प को एकत्रित करता हुआ यजमान याग करता है। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही इस याग के सन्बन्ध में सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक ऋषि मुनि इसके ऊपर अनुसन्धान और नाना प्रकार की व्याख्याएँ करते चले आये हैं।

राजा रावण के यहाँ अश्वमेध याग

मुझे वह काल स्मरण है जब राजा रावण के यहाँ एक समय अश्वमेघ याग हुआ था। राजा रावण के यहाँ अश्वमेघ याग हुआ जो महर्षि लोमश ने और महर्षि कागभुषुण्डी जी ने करवाया था। यह अश्वमेघ याग राष्ट्र के लिये प्रिय होता है। परन्तु आज मैं बेटा! एक वार्ता प्रगट करने जा रहा हूँ। आज मैं तुम्हें एक विज्ञान के तत्र में ले जाने के लिये तो आया नहीं हूँ परन्तु एक ऋषि के विचारों के ऊपर अपनी विचारधारा उद्धृत करना चाहता हूँ बेटा जो त्रेता के काल की है।

यजमान के रथ का द्यौ-लोक को गमन

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण है कि एक महर्षि वैशम्पायन हुए हैं। वैशम्पायन मुनि महाराज बेटा! वो मानो देखो, जो ददडीय-भास्पति गोत्र में रहे हैं, वत्स गोत्र कहते हैं, वे वत्स वस्ता गोत्रों में उनका जन्म हुआ था। वे याग में बड़े पारायण थे। एक समय महाराज अश्वपति के यहाँ एक याग हुआ था, वह वृष्टि याग था। हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है, परम्परागतों से ही। जैसे हमारे यहाँ अग्निष्टोम-याग है, वाजपेयी-याग है, कृतिका-याग है, रुद्र-याग है, विष्णु याग है, और ब्रह्म-याग है, देवी याग है, कन्या याग है, नाना प्रकार के यागों का चयन, जैसे अजामेघ और अश्वमेघ यागों का चलन हमारे यहाँ परम्परागतों से रहा है। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि वैशम्पायन ऋषि महाराज एक समय बेटा! महाराजा अश्वपति के याग में से अपने आश्रम में आ पहुँचे। वे प्रातः कालीन याग में से आये, जिस पर विचार विनिमय करते रहे, परन्तु सायंकाल को यह विचार आ गया कि वेद-मन्त्र कह रहा था, ''यजमानः यज्ञं भविताः यज्ञं प्रह्नाः देवस्यं लोकाः'' कि यजमान का रथ बन करके यज्ञशाला का, रथ बनकर के द्यौ-लोक को जाता है। ऐसा उन्हें कहीं वेदों में प्राप्त हुआ। वेद का मन्त्र स्मरण करके निद्रा की गोद में चले गये। मध्य रात्रि काल जैसे ही समाप्त हुआ तो ऋषि जागरूक हो गये, और ऋषि इसके ऊपर अनुसन्धान करने लगे, विचारने लगे कि वेद मन्त्र कहता है कि यजमान का रथ बन करके द्यौ-लोक को जाता है। यह मैं केसे सिद्ध करूँ। इसी विचार में लग गये, मानो इसका वैज्ञानिक-तथ्य क्या है ? इसके ऊपर आध्यात्मिक-वाद क्या है? इसके ऊपर ऋषि चिन्तन करने लगे। जब ऋषि चिन्तन में लग गये चिन्तन करते रहे। बेटा! सूर्योदय हो गया। मेरे प्यारे! उनके निकटतम आश्रम था महर्षि विभाण्डक मुनि का। महर्षि विभाण्डक ने विचारा कि आज तो ऋषिवर वैशम्पायन ने अपने आसन को नहीं त्यागा है। इसके मूल में कोई कारण है।

मेरे प्यारे! उन्होंने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए ऋषि के आश्रम में पहुँचे। ऋषि के समीप बोले

कि प्रभु! आज आप जागरूक नहीं हुए? उन्होंने कहा प्रभु! मैं एक वेदमन्त्र में लगा हूँ क्योंकि ऋषियों की एक प्रणाली रही है, परम्परागतों से रही है कि जब तक ऋषि उसकी अन्तिम चरम सीमा पर नहीं पहुँच जाते चिन्तन करते-करते, तब तक वे निद्रा को भी पान नहीं करते। आज भी नहीं पान करते थे। वह ऋषि की आभा है। वैशम्पायन विचारते रहे, बेटा! भ्रमण करते हुए कहीं से ऋषि आ पहुँचे। जिनमें महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलक, महर्षि दालभ्य, महर्षि गाड़ीवान रेवक, महर्षि ब्रेती मुनि महाराज, ब्रह्मचारी कवन्धि और अश्वकेतु ऋषि महाराज, और ये सर्वत्र ऋषि भ्रमण करते हुए, ऋषि के आश्रम में आ गये। ऋषि से कहा प्रभु! यह क्या चिन्तन हो रहा है ? उन्होंने कहा प्रभु! चिन्तन क्या है, यह वेद मन्त्र स्मरण आ रहा है। वेद मन्त्र कहता है, कि यजमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है, हम उन चित्रों को दृष्टिपात करना चाहते हैं। उस रथ को दृष्टिपात करना चाहते हैं, वह केसे बनता है ? क्योंकि वेद मन्त्र तो मानो अमोघ वाणी है, ज्ञान का पुंज है, यह कदापि मिथ्या नहीं कहता। परन्तु विज्ञान की इस छटा से हमें क्या प्रतीत हो रहा है ? तो मेरे प्यारे! ऐसा मुझे स्मरण है इतने में बेटा! कहीं से भ्रमण करते हुए महर्षि गौतम ऋषि महाराज, उद्दालक गोत्रीय, वहाँ आ पहुँचे। गौतम ऋषि ने कहा-कि महाराजा। क्या विचार रहे हो ? उन्होंने कहा प्रभु! ये चिन्तन कर रहे हैं। उन्होंने कहा- भई इसके सन्म्बन्ध में एक प्रत्यक्ष याग किया जाये और जब याग करो, तो वहाँ कुछ वैज्ञानिक विद्यमान होंगे, जो वचनों से इसे बता सकते हैं। जैसे मानव की वाणी है यह शब्द नित्य रहता है, यह वायुमण्डल में विराजमान रहता है। विज्ञान कहता है कि मानव के शब्द के साथ में मानव का चित्र गति करता ही रहता है। वह चित्र भी देखो, वायुमण्डल में स्थिर रहता है। जिस शरीर से, मानव के जिस शरीर का शरीरान्त हो जाता है, शरीर चला जाता है परन्तु शब्द ज्यों का त्यों आकार में बना रहता है। मेरे प्यारे! ऋषि ने जब यह निर्णय दिया तो ऋषि मुनियों में नाना प्रकार की धाराएँ उत्पन्न होने लगीं।

ऋषियों का अयोध्या गमन

तो बेटा! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है, मानो देखो, श्वेतकेतु ऋषि ने कहा भई! चलो राम के यहाँ अयोध्या में गमन करते हैं। राम के यहाँ प्रातः कालीन याग होता है, उनके द्वारा एक भव्य याग कराओ और वहाँ यह सब कुछ निर्णय होगा। वह सर्वत्र ऋषियों ने एकमत होकर के वहाँ से गमन किया। भ्रमण करते हुए रात्रि काल में वे सोमकेतु स्वाति ऋषि के यहाँ उनका विश्राम हुआ। वहाँ मुनिवरो ये चर्चाएँ हुईं तो सोमकेतु ने कहा कि भई! मेरे विचार में तो भारद्वाज के यहाँ भी निर्णय हो सकता है। परन्तु तुम राम के यहाँ जा रहे हो, बहुत प्रियतम है। सोमकेतु ऋषि ने भी उन्होंने बेटा! ऋषियों के समीप गमन किया। भ्रमण करते हुए प्रातःकालीन अयोध्या में जा पहुँचे।

भगवान् राम का उपदेश

भगवान् राम के यहाँ बेटा एक यज्ञशाला का निर्माण था। यज्ञशाला बनी हुई थी। उस यज्ञशाला में बेटा! विज्ञानवेताओं का आसन भिन्न होता था। ब्रह्मवर्चोसि मानो श्रोत्रीय ब्रह्मचारियों का आसन भिन्न रहता था। वह सर्वत्र ऋषि-मुनि उन आसनों पर जाकर विद्यमान हो गये। उसके पूर्व ही राम का प्रातःकालीन याग समाप्त हो चुका था और उनकी एक उपदेश मंजरी चल रही थी। भगवान् राम का यह उपदेश हो रहा था कि, हे राष्ट्रवेताओ! तुम्हें इस अयोध्या राष्ट्र को ऊँचा बनाना है। विचार धारा यह चल रही थी कि वेद का मन्त्र, वेद की धाराएँ, महापुरुषों का विचार, राष्ट्र के लिये क्या कह रहा है ? ये एक वाक्य चल रहा था। राष्ट्र का एक विषय चल रहा था। याग के समाप्त होने पर वे उच्चारण कर रहे थे कि राष्ट्र को यदि ऊँचा बनाना है, राष्ट्र को महान बनाना है, तो राष्ट्र में पवित्र

विद्यालय होने चाहिए। पवित्र आचार्य होने चाहिए। क्योंकि हमारे यहाँ यह सिद्धान्त है कि गृह में जितनी तपी हुई माता होगी, उतनी तपी हुई सन्तान का जन्म होगा। जितना तपा हुआ गृहस्वामी होगा उतना गृह नियन्त्रण में रहेगा। जितना तपा हुआ राजा होगा उतनी प्रजा महान बनेगी। जितना आचार्य तपे हुए हांगे उतने ही ब्रह्मचारी अध्यात्मवेता और विज्ञानवेता होंगे।

यह वाक्य राम उच्चारण कर रहे थे कि हमें अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना है। ऊँचा केसे बना सकते हैं ? कौन-सा क्रिया कलाप ऐसा है, जिससे हमारा राष्ट्र और समाज पवित्र बन जाये ? हम आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान दोनों का समन्वय कर संके। क्योंकि जितना भी संसार में भौतिक विज्ञान है, यदि यह बलवती हो जाता है, भौतिक विज्ञान की चरम सीमा पर जाने के पश्चात्, इस भौतिक विज्ञान में मानो विज्ञान की दुरुपयोगता आ जाती है। और विज्ञान जितना दुरुपयोग में आ जाता है उतना राजा के राष्ट्र में विनाश की आभा अस्वत होने लगती है। समाज में राष्ट्र की प्रतिभा समाप्त होने लगती है। इसीलिये मेरा विचार यह है कि राष्ट्र को याज्ञिक बनाया जाये। राष्ट्र में प्रत्येक विद्यालय में याग होने चाहिएँ प्रत्येक विद्यालय में एक सुगठित विचार होना चाहिए। राजा के राष्ट्र में, राजा के गृह में याग हो, प्रजा में याग हो, क्योंकि राजा का राष्ट्र सुगन्धित हो जाये। सुगन्धित उस काल में होगा जब राजा के राष्ट्र में याग होगा। भौतिक याग का आध्यात्मिकवाद से मिलान होना चाहिए।

भगवान् राम ने अपने राष्ट्रवेताओं से कहा कि अपने राष्ट्र में यह घोषणा करो कि राष्ट्र में कोई भी देवताओं का ऋणी न रहे। देखो, याग करना ही एक ऐसा कर्म है, जिससे मानव देवताओं के ऋण से, उऋण हो सकता है। और यदि याग नहीं होगा, विचार पवित्र नहीं होंगे, सुगन्धि ऊँची नहीं बनेगी, गृहों में परमाणु महान नहीं रहेंगे, तो वह अग्नि के कुण्ड बन जायेंगे। भगवान! राम ने अपनी उस सभा में यह कहा याग के पश्चात् उपदेश मंजरियाँ चल रही थीं। माता अपने गर्भस्थल में अपनी आत्मा से वार्ता करने वाली है, वह याग कर रही हैं। मानो उसके पश्चात् भौतिक याग अग्न्याधान करते हुए अग्नि में स्वाहाः कर करके, वायु मण्डल को महान बनाना, बाल्य महान बनने लगेगा। भगवान् राम उनका ऐसा उपदेश प्रारम्भ रहा, उपदेश मंजरियाँ प्रारम्भ रहीं। यह घोषणा कर दी राम ने, कि मेरे राष्ट्र में ऋणी नहीं रहना चाहिए। पितरों का जो ऋणी रहेगा वह सर्वत्रता का ऋणी हो सकता है।

विष्णु राष्ट्र का स्वरूप

उन्होंने यह घोषणा की तो अयोध्या के राष्ट्र, में प्रत्येक गृह में देखो, याग हो रहा है। प्रातःकाल यागों की सुगन्धियाँ उठती रहती हैं। विचारों की वेद-ध्वनि होने लगी, वेद ध्वनि हो करके यह समाज और राष्ट्र की, विष्णु राष्ट्र की स्थापना हो गयी। हमारे यहाँ राम ने कहा था, कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे विष्णु-राष्ट्र की कल्पना करते रहते थे और देखो, वशिष्ठ कहते थे कि इस राष्ट्र को विष्णु राष्ट्र बनाना है। विष्णु राष्ट्र वही बना सकता है, जो अपनी चारभुजों में नियमावलियों को धारण करने वाला है।

राष्ट्र की चार धाराएँ

राष्ट्र की चार प्रकार की धाराएँ होती हैं। एक भुजा में पद्म होता है, एक में शङ्ख होता है एक में शस्त्र होता है और ''कित्यान भवः सम्भवः'' और उसमें गदा होती है। जिस राजा के राष्ट्र में अपराधी को जो राष्ट्र का वृत करने वाला है, उसे विचारों का सुदण्ड दिया जाये। विचारों से जब वह स्वीकार नहीं करता है, तो उसे दण्डित किया जाये। इसी प्रकार राजा के राष्ट्र में चरित्र होना चाहिए। चरित्र की प्रतिभा, ये मेरी पुत्रियाँ स्वतन्त्र रूप से भ्रमण करने वाली हों। वेद का पठन-पाठन करती हुई राष्ट्र में जब भ्रमण होगा तो माता व पुत्रियों को सुदृष्टिपात करने वाला समाज बन जायेगा। वह राष्ट्र चरित्रवान बन गया। मेरे प्यारे! देखो, यागाम् भगवान् राम ने जब बहुत

सी उक्तियाँ प्रगट करते हुए उनका उपदेश समाप्त हुआ और उन्होंने यह घोषित कर दिया कि मेरे राष्ट्र में याग होना चाहिए। उनकी उपदेश मंजरी समाप्त हुई।

भगवान् राम ने दृष्टिपात किया, कि ब्रह्मवेता विद्यमान हैं। ऋषियों के चरणों को स्पर्श करते हुए भगवान राम ने कहो भगवन! मेरा ऐसा कौन सा अहो भाग्य जागृत हो गया है, मानो बिना सूचनाओं के ब्रह्मवेताओं का आगमन मेरे यहाँ हो गया है। मैं जानना चाहता हूँ? मेरे प्यारे! चारों विधाता उनके बारी-बारी से चरणों को स्पर्श करते हुए भगवान् राम ने जो प्रश्न किया ? उसका उतर देते हुए वैशम्पायन ऋषि ने कहा कि-महाराज! मैं कई दिवस समय हुआ मैं महाराजा अश्वपति के यहाँ वृष्टि याग कराकर आ रहा था। मुझे एक वेद मन्त्र स्मरण आया था कि ''यज्ञमाना रथं ब्रह्मे द्यौः समप्रह्रे अस्तौ द्यौ लोकां भविस्ततौः'' कि भगवन्! वेद मन्त्र यह कहता है कि यजमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है। तो प्रभु! हमारी इच्छा यह है कि तुम एक याग करो और उसमें हम अपना कुछ निर्णय आत्मवत चाहते हैं। भगवान् राम ने कहा-प्रभु! यह मेरा बड़ा सौभाग्य है भगवन! कि आप जैसे महापुरुष ब्रह्मवेता, ब्रह्मनिष् मेरे आसन पर आकर उपदेश और आज्ञा दें, भगवान् राम ने उसी समय शिल्पकारों को आज्ञा दी कि एक यज्ञशाला का निर्माण हो और ऋषि मुनियों को जैसे-जैसे ऋषि, उनको उसी प्रकार के कक्षों में विराजित किया। आइये, भगवन्! आसन लग गये, ऋषि मुनि विराजमान हो गये।

मेरे पुत्रो! ऐसा स्मरण आता है, वह अवृतः न्यौदा में पठन-पाठन करने वाले ब्रह्मवेता अपने में महान बनने के लिये सदैव तपस्वी बने हुए थे। ऐसा काल आया कि उस काल में यज्ञशाला का निर्माण हो गया। जब यज्ञशाला का निर्माण हो गया, शाकल्य एकत्रित हो गया, उस समय भगवान् राम यज्ञशाला में जा पहुँचे। सर्वत्र अपने अपने कुटुम्ब के सहित यज्ञशाला में ऋषि मुनियों का एक समाज एकत्रित हो गया। जैसे ही याग प्रारम्भ हुआ तो उन्होंने बेटा! निर्वाचन किया। महर्षि वैशम्पायन को उस याग का ब्रह्मत्व प्राप्त कराया, महर्षि वशिष्ठ पुरोहित बने और महर्षि विभाण्डक उस याग के उद्गाता रहे, महर्षि सौम्य-सोम्यभान-सोमकेतु उसके अध्यर्वु बने, और भगवान राम यजमान बन करके, होताजनों के साथ, याग का प्रारम्भ करने लगे। अग्निहोत्र किया, अग्निहोत्र करके मुनिवरो! देखो, एक वेदमन्त्र राम को भी स्मरण आया कि ''यज्ञमाना देवत्रः द्यौ लोकां विवब्रहे अस्तौ देवच्यां भवतिस्तः'' भगवान् राम ने कहा प्रभु! यह वेद-मन्त्र क्या कह रहा है? याग समाप्त हो गया। महर्षि बाल्मीकि, महर्षि श्वेता, महर्षि श्वेताश्वेतर, स्वाति महाराज भी यज्ञशाला में आ पधारे। इतने में ही महर्षि भारद्वाज, महर्षि भारद्वाज के साथ में ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी ध्वनिकेतु, ब्रह्मचारी

सुधन्वा, ब्रह्मचारी यज्ञदतँ ब्रह्मचारी श्वेतासुकृति, मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारियों सहित अपने वाहन में विद्यमान होकर के भारद्वाज जी आ पहुँचे। यज्ञशाला भव्य थी ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे ब्रह्मपुरी यहीं रच रही हो। यज्ञशाला में जब भगवान् राम प्रश्न कर रहे थे, कि हे ब्रह्मवेताओ! मैं यह जानना चाहता हूँ, कि वेद मन्त्र यह कहता, कि यजमान का रथ बन करके जब द्यौ-लोक जाता है, तो मैं उसको दृष्टिपात करना चाहता हूँ। ऋषि मुनि दर्शनों से वर्णित कर रहे थे। दर्शनों से उच्चारण कर रहे थे। परन्तु वे अपने में सन्तुष्ट नहीं हुए। भगवान् राम के इन वाक्यों को, वहाँ जो प्रश्न उतर हो रहे थे इतने में ही भारद्वाज मुनि महाराज आ पहुँचे।

भगवान् राम ने उनका आतिथ्य और स्वागत किया। विराजमान हो गये मुनिवरो! जहाँ वे ब्रह्मवेता थे वहाँ विज्ञानवेता भी थे। भगवान् राम से कहा भारद्वाज ने हे राम! तुम्हारा याग केसे शून्यता को प्राप्त हो रहा है? उन्होंने कहा-प्रभु! मैं ब्रह्मवेताओं से प्रश्न कर रहा हूँ जो वेद मन्त्रों में आया है? वेद मन्त्र कहता है कि यजमान का रथ बन करके द्यौ-लोक को जाता है। मैं उस चित्र को दृष्टिपात करना चाहता हूँ, साक्षात्कार दृष्टिपात करना चाहता हूँ। मेरे प्यारे! देखो, भारद्वाज ऋषि ने कहा-हे राम! तुम इन ब्रह्मवेताओं का अपमान तो नहीं कर रहे हो ? भगवान् राम ने

चरणों को स्पर्श करते हुए भारद्वाज से कहा प्रभु! इन ब्रह्मवेताओं का अपमान करने की मेरे में शक्ति कहाँ है। मैं केसे अपमान कर सकता हूँ, मेरे तो ये पूज्य हैं। मैं तो दर्शनों से जानना चाहता हूँ। मुझे तो नाना ऋषि मुनियों ने ही जीवन दिया है भगवन्! आप केसा वाक्य उच्चारण कर रहे हैं? भारद्वाज मुनि ने वह स्वीकार कर लिया। उनके अन्तर्हृदय की वार्ता को अपने हृदय की अगम्यता से परिणत करते हुए उन्होंने, कहा बहुत प्रियतम।

महर्षि भारद्वाज की यन्त्रावली

मुनिवरो! ऐसा स्मरण है कि महर्षि वशिष्ठ मुनि से कहा महाराज! मैं यन्त्रों की आभा को लाना चाहता हूँ, वशिष्ठ ने कहा ''प्रिय भवः सम्भवेः।' आज्ञा दी तो महर्षि भारद्वाज ने ब्रह्मचारिणी शबरी को, जो महर्षि पनपेतु महाराज की कन्या थी, ब्रह्मचारी सुकेता को कहा कि तुम जाओ ''गृहे सम्भवाः विवस्ताम्'' आप जाओ, नाना प्रकार के यन्त्रों को अपने वाहन में लेकर आओ। भारद्वाज मुनि महाराज की आज्ञा पाकर के ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता ने वहाँ से गमन किया। भ्रमण करते भयंकर वनों से नाना यन्त्रावलियों को लेकर के भ्रमण करके अयोध्या में आ गये। उन्होंने कहा-लीजिये, भगवन! महर्षि भारद्वाज ने कहा-हे राम! अब तुम याग का प्रारम्भ करो, ब्रह्मवेताओं, से कहा, सर्वत्र होता जनों को आज्ञा दी कि याग प्रारम्भ करो। अग्निहोत्र किया, बेटा! याग प्रारम्भ करने लगे। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने यन्त्रावलि बेटा! स्थापित कर दी। मेरे प्यारे! विद्युत से सूर्य की किरणों से मानो उन यन्त्रावलियों का सन्म्बन्ध हो गया।

यन्त्र द्वारा द्यौ-गामी चित्र दर्शन

मेरे प्यारे! जैसे ही अग्नि में स्वाहाः उच्चारण कर रहे थे होता जन। यज्ञशाला जितने आकार की बनी हुई थी, जैसे स्वाहाः उच्चारण किया उनके शब्दों में उनके आकार में यज्ञशाला सहित उनका सूक्ष्म चित्र बन रहा था और देखो, उनकी चित्रशाला में दृष्टिपात आ रहा था। भारद्वाज मुनि ने कहा हे राम! ये देखो तुम्हारा चित्र जा रहा है और यह द्यौ-लोक में प्रवेश करेगा। मेरे प्यारे! देखो, यह भूः भुवः स्वः ये जो भूमण्डल है इतने में ही यह द्यौ-लोक में चला जायेगा। द्यौ मण्डल से सूर्य सहायता लेकर के प्रकाश करता है। सूर्य से सहायता लेकर चन्द्रमा सोम की वृष्टि करता है। सूर्य से सहायता लेकर के यह पृथ्वी नाना प्रकार के खनिजों और खाद्यों को उत्पन्न करती है। ऋषि ने कहा हे राम! तुम यह दृष्टिपात करो। राम का आत्मा प्रसन्न हो गया। राम ने कहा धन्य है। वैशम्पायन मुनि महाराज के हर्ष की तो सीमा ही नहीं रही, क्योंकि यह तो उन्हें भी निर्णीत करना था। याग होता रहा चित्रावलियों में चित्रों का दर्शन करते रहे जैसे ही ये होता जन स्वाहाः कहते थे, यजमान स्वाहाः कह रहा था वैसे ही मुनिवरो! उनकी यज्ञशाला का रथ बन करके अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होकर के वह द्यौ-लोक को जा रहा था। जब राम ने ऋषि को वर्णन कराया तो ऋषि की आत्मा प्रसन्न होकर बोली प्रभु! धन्य है।

मुझे ऐसा कुछ स्मरण है कि छः माह तक वह याग चलता रहा छः माह तक राम उन चित्रों को निहारते रहे, होता जन निहारते रहे, वैशम्पायन मुनि निहारते रहे। कुछ काल के पश्चात् वह याग समाप्त हो गया। राम ने दक्षिणा प्रदान कर दी। उन सबका स्वागत किया। ब्राह्मण समाज, होता जनों ने अपने-अपने गृह में प्रवेश किया।

विचार विनिमय क्या है मुनिवरो! वैशम्पायन ने यह कहा जिसको हम वेद के मन्त्रों में अध्ययन करते रहे, जिस विद्या को, वह विद्या विज्ञान के युग में प्रवेश कर गयी है। वे धाराएँ वैज्ञानिक तत्वों में महान हैं परन्तु आध्यात्मिक विज्ञानवेता, अपने याग करने वाला, अपने वायुमण्डल को पवित्र बनाता है। जो साधक होता है तो विचारों की बा"य जगत में सुगन्धि दे करके वायुमण्डल को पवित्र बनाता है। उसके पश्चात् बेटा! वह साधना करता है। यदि साधक के आश्रम में यदि साधक के अनुसंग में सुगन्धि नहीं होगी तो साधना में पूर्णता को प्राप्त नहीं कर

सकता। आचार्यजन कहते हैं कि हमारा वायुमण्डल पवित्र होना चाहिए। जिससे मुनिवरो! देखो, हम सुगन्धित होते हुए, अपने को सुगन्धि में ले जाते हुए सुकृत्यों को सुगन्धित बनाते चले जायें। वेद के सम्बन्ध में ऋषि मुनियों ने बहुत ऊँची उड़ानें उड़ी हैं।

मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी ने एक समय यह प्रगट कराया था कि जब से वेद की विद्या का सूक्ष्मवाद हुआ है, तब से मानो देखो, अन्धकार की छाया आ गयी है। अब मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ, विचार विनिमय यह देने के लिये आया हूँ कि अपने को सुगन्धित बनाना है, राष्ट्र को सुगन्धित बनाना है। चरित्र से स्वाहाः देकर के, प्रत्येक गृह में सुगन्धि लाकर के राष्ट्र को और गृह को ऊँचा बनाना है। राजा जब ब्रह्मवेता होता है, वेद के पठन-पाठन करने वाला होता है, तो वह राजा राष्ट्र को ऊँचा बनाता है। विवेकी पुरुष होने चाहिए, विवेक होना चाहिए। ममत्व को धारण करने वाला राष्ट्र नहीं होना चाहिए। ऐसे ही आचार्य कुलों में आचार्यों के हृदय में भी ममत्व नहीं होना चाहिए, मानो अपनापन नहीं होना चाहिए। केवल सार्वभौम विचारधारा को लेकर के विद्यालयों को ऊँचा बनायेँ जैसे सूर्य का प्रकाश है वह सबके लिये प्रकाश देता है। जैसे वेद की विद्या है, ज्ञान है, वह सबके लिये ज्ञान हैं ऐसे ही आचार्यजन सूर्य की भाँति ब्रह्मचारियों को जब विद्यालय में सुचरित्र, तपस्या करते हुए ज्ञान देते हैं, तो विद्यालय का हृदय पवित्र बन करके, क्योंकि विद्यालय का जो हृदय है वह ब्रह्मचारी है। और ब्रह्मचारियों का हृदय जब पवित्र बन जाता है, तो विद्यालयों में उनके कण-कण में से मानो सुगन्धि आने लगती है। सुगन्धि आने लगती है ज्ञान और विज्ञान की। ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में रमण करने वाला संसार का मानव उसके चरणों की वन्दना करने लग जाता है।

यज्ञ से राष्ट्र की पवित्रता

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ। केवल तुम्हें परिचय देने आया हूँ। और वह परिचय क्या है? कि हमारा हृदय, पवित्र रहना चाहिए। विचारशील रहना चाहिए और अपने तक मानव को सीमित नहीं रहना चाहिए। अपने पवित्र विचारों को वायुमण्डलों में त्यागो, ब्रह्मचारियों को परिणत किये जायें। मेरे प्यारे! राजा से जाकर कह सकते हो कि सुविचार राजा के राष्ट्र में रहना चाहिए।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना नहीं देता हुआ राम अपने में हर्ष ध्वनियाँ करने लगे आज मेरा याग सम्पन्न हो गया है। मैं सम्पन्नता को प्राप्त हुआ हूँ। मेरे छः माह के जो शब्द थे वो द्यौ लोक में परमात्मा के पास चले गये हैं। मेरे प्यारे! शब्द के साथ में चित्र है, चित्रों के साथ अग्नि की धाराएँ हैं, अग्नि की धाराओं के ऊपर मुनिवरो! वह रथ बन करके द्यौ-लोक में प्रवेश करता है। देखो, ज्ञान और विज्ञान यह मानव का मौलिक कर्म रहा है। महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में, महर्षि पनपेतु महाराज की कन्या, जिसका नाम शबरी था, जब भगवान् राम रावण से संग्राम करने गये। तो वह शबरी ही थी जो भारद्वाज के यहाँ से अस्त्रों शस्त्रों का कोष लेकर के राम को प्रदान कर दिया। यह वह शबरी थी, जिस शबरी ने ज्ञान और विज्ञान के यन्त्र राम को प्रदान कर दिये थे, जिससे राम ने संग्राम किया। तो आओ, आज का वाक्य यह मुनिवरो! देखो, अब समाप्त होने जा रहा है।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि प्रत्येक मानव को याज्ञिक बनना चाहिए। प्रत्येक मानव को महान और पवित्र बन करके बेटा! अपने "यज्ञं भवः तपस्वहेः" अपने विचारों की सुगन्धि, वायुमण्डल में सुगन्धि, अग्नि में स्वाहाः करने से मानव के जीवन की प्रतिभा बनती है। यह है बेटा! आज का वाक्य, अब मुझे समय मिलेगा मैं शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा। आज का यह वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा। दिनांक, 10-4-83, लूम्ब जि0 बागपत

६ महर्षि भारद्वाज का विज्ञान दर्शन १२ ०५ १९८३

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है। वैसे ही ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। उसी प्रकार प्रत्येक वेद मन्त्र परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है अथवा उसका वर्णन कर रहा है। उसके ज्ञान और विज्ञान की विवेचना कर रहा है। क्योंकि उसका ज्ञान और विज्ञान नितान्त माना गया है। तो इसलिये प्रत्येक वेद मन्त्रों में उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान की चर्चा होती रहती है।

माता की प्रतिभा

मानो ये अपना वर्णन कर रहा है क्योंकि वेद मन्त्र यही कहता है कि परमपिता परमात्मा की जो अनुपमता है, उसका जो ज्ञान और विज्ञान है, उसका वर्णन करना, उसकी घोषणा करना, उसकी महानता का वर्णन करना, ये वेद मन्त्र कह रहा है। जिस प्रकार माता का पुत्र माता का वर्णन कर रहा है माता की घोषणा कर रहा है क्योंकि माता की घोषणा होती ही उस काल में है जब पुत्र की प्रतिभा उसे प्रतिभाषित करती रहती है। क्योंकि वही उसका वर्णन कर रहा है, पुत्र ही ये कहता है कि ''माता नमस्तव ब्रह्मवाचाः'' ये माता है। परन्तु माता के बहुत से पर्यायवाची शब्दार्थ हमारे वैदिक साहित्य में आते रहते हैं परन्तु आज केवल इतना ही वर्णन करना है कि माता की जो ममता है वह पुत्र के आँगन में निहित है। यह गाथा और उसकी घोषणा कर रहा है। मानो उसी प्रकार ये जो पृथ्वी दृष्टिपात आ रही है। ये नाना प्रकार के व्यंजनों में मानव को प्रतिभाषित करा रही है। इसके गर्भ में बेटा! जब वैज्ञानिक प्रवेश करता है तो वैज्ञानिकजन ये कहते है कि सर्वत्र ब्रह्माण्ड की घोषणा ही पृथ्वी कर रही है, क्योंकि इसके गर्भ स्थल में नाना प्रकार की वनस्पतियों का जन्म होता है। इसी के गर्भ स्थल में खाद्य-खनिज पदार्थ मानो देखो, यह पृथ्वी ही ब्रह्माण्ड की आभा में वर्णित हो रही है।

मेरे प्यारे! देखो ये ब्रह्माण्ड है और ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म-सा रूप पृथ्वी कहलाती है। जितना भी देखो, ये ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है, ये लोक लोकान्तरों वाला है, नाना मणियों वाला है परन्तु पृथ्वी से प्रारम्भ होता है, ये उसमें पिरोया हुआ है। पृथ्वी ये सिद्ध कर रही है कि ये ब्रह्माण्ड एक दूसरे में पिरोया हुआ है। जैसे वेद मन्त्र का जो ज्ञान है वह प्रकाश ब्रह्म से पिरोया हुआ है। और ये जो माता का पुत्र है ये माता से पिरोया हुआ है। इसी प्रकार ये जो पृथ्वी है यह पृथ्वी ''अब्रह्मं ब्रह्मवाचाः'' मानो ये माला है ब्रह्माण्ड एक दूसरे से पिरोया हुआ है।

जैसे बेटा! एक सूत्र है जिसमें नाना प्रकार के मनके पिरोये जाते है वे सूत्र में पिरोये हुए है। सूत्र और मनके दोनों का समन्वय जब होता है तो एक विचित्र माला बन जाती है। तो इसी प्रकार माला के सदृश होने से बेटा! ये ब्रह्माण्ड है, मानो ये पृथ्वी इसकी गाथा गा रही है। केसे गा रही है? मानो जब वैज्ञानिक जनों ने ये विचारा कि ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है।

वेद मन्त्रों का स्वाध्याय

एक समय बेटा! मुझे स्मरण आता रहा है कि महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ मुनिवरो! देखो, ब्रह्मचारी सुकेता विद्यमान थे। ब्रह्मचारी सुकेता को प्रातः कालीन समय में ऋषि भारद्वाज ने कुछ मन्त्रों से अवगत कराया और ये

कहा-हे ब्रह्मचारी! तुम मन्त्रों का अध्ययन करो और मन्त्रों में दृष्टिपात करो कि ये मन्त्र क्या कहता है, क्या घोषणा कर रहा है। ये वाणी कैसे उद्गीत गा रही है मानो उस उद्गीत की जो अद्धत प्रतिभा है उसे मुझे वर्णन कराओ ?

तो मेरे प्यारे! ब्रह्मचारी सुकेता ने कहा-प्रभु! मुझे एक सहयोगी दे दीजिए। महर्षि भारद्वाज मुनि ने ब्रह्मचारी कवन्धी से कहा-कि हे ब्रह्मचारी कवन्धी! तुम्हें ब्रह्मचारी सुकेता के समीप विद्यमान होकर के वेद मन्त्रों का अध्ययन करना है और उसमें जो ज्ञान है, उसमें जो विज्ञान है, उसका जो सूत्र है, उसे तुम्हें विचार विनिमय करना है। मेरे पुत्रो! ये वाक्य श्रवण करके ब्रह्मचारी कवन्धी और ब्रह्मचारी सुकेता दोनों देखो, विद्यमान हो गये और उन्होंने वेद मन्त्रों का अध्ययन किया। मानो देखो, वेद मन्त्रों के विज्ञानमयी स्वरूप में वे रमण हो गये और उन्होंने बेटा! वेद मन्त्रों का अध्ययन किया, ''पृथिवी भव व्रणा व्रत्यं देवाः सूत्रं भवितु देवं ब्रह्मं नमत्वम्।''

मेरे प्यारे! वेद मन्त्रों में उन्होंने जब ये अध्ययन किया तो मुनिवरो! प्रातः कालीन अध्ययन करने लगे तो उन्हें प्रातः कालीन पंचाद्द आहार दिया और वे उन्हीं वेद मन्त्रों में लगे रहे। चिन्तन करते-करते मेरे पुत्रो! जब सायंकाल हो गया तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ब्रह्मचारियों के समीप आ गये और ब्रह्मचारियों से कहा-कहो, ब्रह्मचारियो! तुमने क्या अध्ययन किया। क्योंकि ये हमारी विज्ञानशाला है, यज्ञशाला भी है। क्योंकि यज्ञशाला के पश्चात् ही विज्ञान का जन्म होता है। यज्ञ कहते है चिन्तन और मनन करने के क्रिया कलाप को। जब हम किसी वस्तु पर क्रिया कलाप करते है तो उसकी प्रतिबद्धता मानो उसकी जो सूक्ष्मता है वह उसके विज्ञान की आभा में रमण करके उन परमाणु को हमें छोड़ देती है, और हम उसे धारण करते है।

तो मेरे पुत्रो! जब महर्षि भारद्वाज मुनि ने ये कहा तो ब्रह्मचारी कवन्धी और ब्रह्मचारी सुकेता दोनों पाण्डित्य की दृष्टि से युक्त उन्होंने सायंकाल को ऋषि को वेद मन्त्रों को पुनः से स्मरण करा दिया, उनका उच्चारण कराया। परन्तु देखो, वेदमन्त्र क्या कह रहा था, ये विचार का एक विषय था, चिन्तन का विषय था इस पर मनन होना था। तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने इसी वेद मन्त्र को लेकर के अध्ययन किया कि ये जो पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है ये कैसे गा रही है ?

ब्रह्माण्ड की विशालता

मेरे पुत्रो! देखो, ये ब्रह्माण्ड तो बड़ा विशाल है इसमें तो ऐसे-ऐसे मण्डल हैं मानो कि ये जो पृथ्वी है ये तो सूक्ष्मतम हमें दृष्टिपात आ रही है। ये सूक्ष्मतम मण्डल है। जैसा हमारे यहाँ विचारा गया है। जब सूत्रों में दृष्टिपात करने लगे तो ये दृष्टिपात ऋषि-मुनियों को हुआ कि हमारा ये जो ृथ्वी-मण्डल है ये मानो देखो, सूर्य की परिक्रमा करता है। जितनी भी पृथ्वियाँ है ये मानो देखो, सूर्य की परिक्रमा करती रहती। परन्तु ये जो सूर्य है ये इन पृथ्वियों का सूत्र कहलाता है। पृथ्वियों का सूत्र कौन है? सूर्य है। और सूर्य का सूत्र जो बृहस्पति की परिक्रमा करता है तो मानो देखो, सूर्य का जो सूत्र है वह बृहस्पति कहलाता है।

स्वाहा की गति का दर्शन

जब ये वेद मन्त्र स्मरण आये तो इस प्रकार के सूत्र हमें दृष्टिपात आये। तो भगवन्! हमें भी कुछ निर्णय कराइये। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज वेद के मर्म को जानते थे। वे जहाँ आध्यात्मिक विज्ञानवेता थे वहीं भौतिक विज्ञानवेता भी थे। भौतिक विज्ञान की महानता पर रमण करते रहे। उनके यहाँ पराकाष वाला विज्ञान था। परन्तु देखो, मुनिवरो! उन्होंने इसी वेद मन्त्र को लेकर के मेरे पुत्रो! एक यन्त्र का बहुत समय के पश्चात् उन्होंने ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धी, ब्रह्मचारिणी शबरी ब्रह्मचारी रमणकेतु ब्रह्मचारी श्यानकेतु, मानावर्तिकेतु, जरजरित्यादि ब्रह्मचारियों को एक पंक्ति में विद्यमान होकर के प्रातः कालीन

मुनिवरो! याग करते थे। साकल्य जब अग्नि में अर्पित करते तो वे उन परमाणु में जो तरङ्गे उत्पन्न होती थीं उनमें जो परमाणु थे-कुछ वाणी के कुछ मानो यजमान के हृदय से जो स्वाहा उच्चारण होता तो मुनिवरो! देखो, उसको वे दृष्टिपात करते रहते थे। यन्त्रों में उनको यन्त्रित करते रहते थे। मुझे कुछ ऐसा स्मरण है पुत्रो! देखो, उसे यन्त्रों में लेते। तो बहुत समय के पश्चात् उन्होंने एक यन्त्र का निर्माण किया। जिस यन्त्र का नाम ''स्वाति अद्दलास यन्त्र'' कहते थे। उसे स्वाति भी कहते थे। वसराणम् उसको श्रद्धाविष्ट यन्त्र भी कहते थे। ऐसा बेटा! मुझे स्मरण है उस यन्त्र में जैसे हम याग कर्म करते है या

वेद-ध्वनि करते है तो मानो देखो, उस पृथ्वी का चित्र उसमें दृष्टिपात आता है।

पृथ्वी के खाद्य खनिजों का रहस्य

तो मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ यन्त्र में पृथ्वियाँ एक दूसरे में ओत-प्रोत होती हुई दृष्टिपात आ रही थीं। परन्तु देखो, पृथ्वी-मण्डल में जितने भी नाना प्रकार की वनस्पतियाँ है, नाना प्रकार का खनिज है, खाद्य है उस खाद्य और खनिज के द्वारा मानो देखो, देवता जिन-जिन मण्डलों की छाया आती है मानो देखो, पृथ्वी उनसे गठित हो रही है।

चन्द्रमा का दिवस

मेरे प्यारे! देखो, प्रातः कालीन नाना प्रकार की जो स्थावर सृष्टि है वह प्रातः कालीन सूर्य की उषा, कान्ति को लेना प्रारम्भ कर देती है। जब मुनिवरो! देखो, चन्द्रमा का दिवस आता है, चन्द्रमा की सुन्दर-सुन्दर आभाएँ वनस्पतियों में आनी प्रारम्भ होती हैं तो सूर्य उन्हें तपायमान करता है। मेरे प्यारे! चन्द्रमा उन्हें शरण देता है, अग्नि उन्हें उष्ण बना देती है। नाना मण्डलों की छाया आनी प्रारम्भ हो जाती है। जैसे देखो, माता के गर्भस्थल में बेटा! जब शिशु का प्रवेश होता है, तो एक बिन्दु का प्रवेश होता है तो सर्वत्र देवता उसके समीप आना प्रारम्भ हो जाते हैं। क्योंकि देवताओं की मध्यस्थता करने वाला देवताओं का शिशु कहलाता है। उसी प्रकार मेरे पुत्रो! ये जो पृथ्वी है इसमें जो शिशु-बिन्दु है जैसे वह नृत्य प्रारम्भ करता है उसी प्रकार नाना देवता बेटा! जैसे पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार की वस्तुओं का निर्माण होता है।

सूर्य उदय का प्रभाव

तो मेरे प्यारे! देखो, सूर्य प्रातः काल आता है तो रेघित नाम की जो किरण होती है वह इसको तपाने लगती है। चन्द्रमा उसे सोम की वृष्टि करने लगता है। अग्नि उसे मानो देखो, तपायमान करके बेटा! पृथ्वी के गर्भ में स्वर्णकेतु नामक धातु का निर्माण हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, पृथ्वी के गर्भ में स्वर्ण केतु नाम की किरणें सूर्य से आती है। रेणकेतु-कान्ति चन्द्रमा से आती है। सोमभानु वायु जब पृथ्वी में गति करती है तो मानो देखो, मृत्यु नामक अग्नि का जो नृत्य है वह पृथ्वी में गतियाँ करने लगता है। तो मेरे प्यारे! स्वर्ण की धातु का निर्माण हो जाता है। तो परिणाम क्या? मेरे पुत्रो! नाना प्रकार के जो ये समूह है, नाना प्रकार के जो लोक लोकान्तरों का नृत्य हो रहा है, उनकी छाया प्रारम्भ होने लगती है।

तो इससे प्रतीत होता है बेटा! ये जो पृथ्वी है ये मानो देखो, ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, ब्रह्माण्ड का वर्णन कर रही है। और पृथ्वी ये कहती है कि ये जो ब्रह्माण्ड है इसमें मैं ही नृत्य करने वाली हूँ। मेरे पुत्रो! देखो, सूर्य की नाना प्रकार की किरणों के आधार पर देखो, जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है। यही जल जब पृथ्वी की धातु के रूप में वैज्ञानिक जन जब उसे अपने में धारण करके बेटा! देखो, वाहनों में जब जल मानो देखो, यह सोलन होकर के अग्नि में से उसे तपाकर के वही वाहनों में नृत्य करने लगता है, मानो देखो, वही विज्ञान आभा में

रमण करने वाला बेटा! भारद्वाज मुनि की विज्ञान शाला स्मरण आने लगती है तो बेटा! देखो, सूर्य की किरणों से विद्युत को विकासा गया। सूर्य की किरणें ही नाना प्रकार के यन्त्रों को गति देने वाली है। विचार आता रहता है जब अनुसन्धानवेताओं ने अनुसन्धान किया तो बेटा! विचारा गया कि ये जो पृथ्वी है बेटा! यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। जैसे माता का पुत्र माता का वर्णन कर रहा है मानो देखो, माता के शरीरों में भी देवता नृत्य करते रहते है। परन्तु देखो, शिशु की आभा का रूप धारण करके वही देवत्व को प्राप्त होकर के पृथ्वी पर नृत्य होने लगता है तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रो! ये जो पृथ्वी है यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है मानो पिरोई हुई ''अस्सुतां ब्रह्मे।''

मण्डलों की माला

मेरे पुत्रो! जब विचार आया तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने यन्त्रों मे ये विचारा कि पृथ्वी का सूत्र क्या है? तो विचारने से प्रतीत हुआ कि ''सूर्य सुतं ब्रह्मम्'' मानो ये सूर्य ही इस पृथ्वी का सूत्र कहलाता है तब विचारा गया कि ये जो पृथ्वी है इसका सूत्र सूर्य है तो सूर्य का भी कोई सूत्र होगा? तो विचारा गया मेरे प्यारे! यन्त्रों द्वारा ऋषि-मुनियों ने पाया कि इस पृथ्वी का सूत्र सूर्य है। वैसे ही सूर्य का सूत्र बृहस्पति है। वैसे ही मानो देखो, बृहस्पति का भी कोई सूत्र होगा। तो विचारने से प्रतीत हुआ कि मानो देखो, एक मण्डल है। देखो, वेद का वाक्य कहता है कि ये जो आरुणि है यह बृहस्पति का सूत्र है। और आरुणि का जो सूत्र है वह मुनिवरो! देखो, ध्रुव कहलाता है और ध्रुव का भी कोई सूत्र है तो वह मूल नक्षत्र कहलाता है और मूल नक्षत्र का जो सूत्र है वह स्वाति नक्षत्र है और स्वाति नक्षत्र का कोई सूत्र है तो वो रेणकेतु मण्डल है और रेणकेतु मण्डल का यदि कोई सूत्र है तो वो सोमभानु मण्डल है और सोमभानु मण्डल का कोई सूत्र है तो वो कृतिभा मण्डल है और कृतिभा मण्डल का कोई सूत्र है तो वह सोमभानु विष्टयाँ कहलाती है। परन्तु सोमभानु विष्टयों का भी कोई सूत्र है तो वह गन्धर्व कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ये जो गन्धर्व है ''अस्वतां ब्रह्मं वाचं ब्रह्मः'' मेरे प्यारे! देखो, गन्धर्वों का सूत्र इन्द्र कहलाता है और इन्द्र का सूत्र प्रजापति कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! एक दूसरे में पिरोया हुआ ये ब्रह्माण्ड तुम्हें माला के सदृश दृष्टिपात आता है। तो मेरे प्यारे! देखो, साधकों ने, ऋषि-मुनियों ने इस ब्रह्माण्ड को बेटा! समाधि के द्वारा अपने में ओत-प्रोत हो करके अपने आत्म-सूत्र के द्वारा मेरे प्यारे! देखो, इस ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात किया है वहीं वैज्ञानिक जनों ने वैज्ञानिक यन्त्रों से दृष्टिपात किया है।

तो बेटा! मैं तुम्हें गम्भीर क्षेत्र में नहीं ले जाना चाहता हूँ। विचार विनिमय यह आ रहा है, विचार यह करने जा रहे थे, कि मुनिवरो! यह जो पृथ्वी है यह ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। बेटा! यह पृथ्वी सूर्य में पिरोई हुई हैं सूर्य बृहस्पति में पिरोया हुआ हैं बृहस्पति मेरे पुत्रो! आरुणि में पिरोया हुआ है। आरुणि ध्रुव में पिरोया हुआ है। मेरे पुत्रो! देखो, इसी प्रकार एक दूसरे में पिरोया हुआ-सा यह ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता है। जैसे मुनिवरो! माता का पुत्र माता में पिरोया हुआ है और माता मुनिवरो! देखो, पुत्र में पिरोयी हुई है। एक दूसरे का यह देखो, वैदिक सूत्र बना हुआ। तो मेरे प्यारे! देखो, पिता भी इसी प्रकार पिरोया हुआ है, पुत्रियाँ भी पिरोयी हुई हैं। एक दूसरे में पिरोया हुआ-सा ये ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आता है। जैसे मुनिवरो! देखो, कोई भी प्राणी संसार का हो, वह एक दूसरे की सहायता कर रहा है, एक दूसरे में पिरोया हुआ है।

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, महर्षि भारद्वाज के विद्यालय में प्रवेश कर रहा था। वेद के आचार्यों ने नाना प्रकार की गाथाओं में उनका वर्णन आता रहता है। तो महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने बेटा! एक यन्त्र का

निर्माण किया। जिस यन्त्र में मानो देखो, पृथ्वी का सर्वत्र विज्ञान उसमें दृष्टिपात आता रहता है, सर्वत्र विज्ञान तो हम नहीं कह सकते, परन्तु जितना भी आता था उससे यही सिद्ध होता है कि पृथ्वी का जो सूत्र है वह मानो सूर्य है और सूर्य मानो देखो, नाना बृहस्पतियों में आभायित रहता है। इसलिये वह सूत्रित होता रहता है।

महर्षि विश्वामित्र का धनुर्याग

तो मुनिवरो! देखो, विचार विनिमय क्या बेटा! आज जब हम ये विचारने लगते है कि वेद का मन्त्र हमें क्या कह रहा है? वेद के मन्त्र की आभा में मैं तुम्हें ले जा रहा हूँ। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में एक वार्ता प्रगट की थी और वह वार्ता क्या थी? मानो देखो, महाराजा शिव के यहाँ विद्यालय में विज्ञानशालाएँ मानो देखो, वही विज्ञानशालाएँ त्रेता के काल में विश्वामित्र की थीं। जिसमें उन्होंने बेटा! राम और लक्ष्मण को लाकर के ''अस्वतां ब्रह्मो वाचस्प्रहे लोकाः'' उन्होंने बेटा! देखो, धनुर्याग किया था। वह धनुर्याग क्या कह रहा था? हमारे यहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के यज्ञों का वर्णन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। जैसे देखो, बेटा! धनुर्याग है, वास्तुयाग है अग्निष्टोम याग है, पुत्रेष्टि याग है, वृष्टि याग है, रुद्र याग है, विष्णु याग है, शिवयाग है और देखो, बेटा! अश्वमेघ यागों का वर्णन आता रहता है। नाना प्रकार के यागों का वर्णन आता रहता है।

तो महर्षि विश्वामित्र ने बेटा! देखो, एक धनुर्याग किया। धनुर्याग में जहाँ मुनिवरो! देखो, राम लक्ष्मण दोनों राजकुमार थे वहीं सम्पाति और गरूड़ और मेरे प्यारे! नाना वैज्ञानिक विद्यमान थे। महाराज शिव के पुत्र महाराज गणेश और सोमविष्टका देखो, ये सब धनुर्याग में थे। मेरे पुत्रो! देखो धनुर्याग महाराजा विश्वामित्र ने दण्डक वन में किया था। दण्डक वन में बेटा! ये याग चलता रहा। इस याग की घोषणा पृथक् भी हो गयी थी-कि महाराज विश्वामित्र एक याग कर रहे है मानो देखो, धनुर्याग को दृष्टिपात करने के लिए देखो, भृगु जी इत्यादि भी वहाँ आ पहुँचे। परन्तु वे धनुर्याग को दृष्टिपात कर रहे थे तो महाराज खरदूषण ने ये विचार लिया था कि यह जो याग हो रहा है, ये ऋषि मुनियो का और कुछ वैज्ञानिकों की मानो कोई न कोई गम्भीर अवस्था में मुद्रित होने के लिये कोई क्रिया कलाप हो रहा है।

महाराजा खरदूषण ने ये घोषणा राजा रावण को प्रदान की। उन्होंने कहा-कि वहाँ धनुर्याग हो रहा है और धनुर्याग में देखो, सम्पाति और गरूड़ महाराजा जामवन्त इत्यादि वैज्ञानिक और राम, लक्ष्मण दोनों राजकुमार विद्यमान थे जहाँ बेटा! अस्त्रों-शस्त्रों की शिक्षा और विज्ञान की धारा थी।

शिष्यों सहित महर्षि भारद्वाज का आगमन

देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि ने यह विचारा कि मुझे धनुर्याग में जाना चाहिए। महर्षि भारद्वाज अपने ब्रह्मचारियों को लेकर के ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कबन्धी, ब्रह्मचारी रेणु कृतिका, ब्रह्मचारी यज्ञदत, ब्रह्मचारी श्वेताश्वेतर, और ब्रह्मचारी प्राण विष्ट का। मेरे प्यारे! देखो, इन सब ब्रह्मचारियों के सहित, मानो भ्रमण करते हुए वे भी दण्डक वन में जा पहुँचे।

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि विश्वामित्र ने महर्षि भारद्वाज मुनि का बड़ा स्वागत कियाँ उनके चरणों की वन्दना की, आसन दिया और स्वयं भी विराजमान हो गये और उन्होंने कहा-कहिये भगवन्! आपका कहाँ से गमन हो रहा है। महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि महाराजा आज विचार आया कि महर्षि विश्वामित्र के उस याग को दृष्टिपात करें जिस याग को हमने कदापि दृष्टिपात नहीं किया।

मेरे प्यारे! देखो, प्रातः काल का समय था उन्होंने प्रातःकालीन अग्निहोत्र किया और अग्निहोत्र करके मानो देखो, नाना प्रकार के यन्त्र वहाँ लग गये। यन्त्र लग जाने से देखो, स्वाहा उच्चारण करते थे तो उनका नृत्य अन्तरिक्ष

में होता रहता था।

मेरे प्यारे! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा-कि तुम्हारा याग तो बहुत ही प्रिय हो रहा है परन्तु मैं इस धनुर्याग को जानना चाहता हूँ कि धनुर्याग केसे कर रहे हो ?

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि विश्वामित्र ने याग सम्पन्न होने के पश्चात् नाना प्रकार के अस्त्रों-शस्त्रों में एक मकान बना करके नाना प्रकार की कृतिकाओं को लेकर के ब्रह्मचारियों को अभ्यस्त कराने लगे। अस्त्र-शस्त्रों को अभ्यस्त कराना ये महर्षि विश्वामित्र का ही कर्म था, उनका ही ये क्रिया कलाप था। मेरे प्यारे! महर्षि विश्वामित्र महाराज बड़े प्रभावित हुए महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा-कि वास्तव में तुम्हारा जो ये याग हो रहा है, ये बड़ा प्रिय है। परन्तु मैं तुम्हें इस याग की प्रतिभाओं को दृष्टिपात कराना चाहता हूँ।

अहिल्या-कृतिमा-यंत्र

बहुत पुरातन काल हुआ जब मैंने एक यन्त्र का निर्माण किया था और वह यन्त्र क्या है? उस यन्त्र को दृष्टिपात करो मैंने एक अहिल्या कृतिभा यन्त्र का निर्माण भी किया है। देखो, उस अहिल्या कृतिभा यन्त्र में यह विशेषता रही है कि जो ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी रोहिणी और ब्रह्मचारी यज्ञदत ने मानो एक प्रकार से इस यन्त्र का निर्माण किया। इस यन्त्र की विशेषता है, भूमि का निरीक्षण करना। क्योंकि हमारे वैदिक साहित्य में इस भूमि का नाम अहिल्या कहलाता है। इस भूमि पर कौन-सा खनिज विद्यमान है। इस यन्त्र में वह खनिज दृष्टिपात आता रहता था। इस प्रकार मैं यह जो यन्त्र तुम्हें प्रदान कर रहा हूँ इस यन्त्र में यही विशेषता रही है कि जिस भूमि में, उसर भूमि हो उसका निरीक्षण किया जा सकता है। उससे राष्ट्र समाज में सम्पन्नता आती है। क्योंकि खाद्य और खनिज पदार्थ इस पृथ्वी की दोनों ऊर्ध्वा कहलाती हैं। यह पृथ्वी ही दोनों वस्तुओं को प्रदान करके मानव के जीवन को महान बनाती है। क्योंकि माता वसुन्धरा के गर्भ में ही, अहिल्या के गर्भ में ही सब प्राणी विद्यमान है तो दोनों ही वस्तुएँ जिसे एक को खाद्य कहते हैं और दूसरे को खनिज कहते है। इनके अनन्त भोग माने गये हैं। परन्तु देखो, इसके ऊपर तुम्हारा अध्ययन और होना चाहिए।

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने वह यन्त्र भगवान् राम को प्रदान किया और उनसे कहा-कि हे राम! इस यन्त्र के द्वारा तुम इस पृथ्वी के विज्ञान को जान सकते हो। मेरे प्यारे! देखो, राम ने महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के चरणों की वन्दना की और चरण स्पर्श करके उसको उन्होंने सहर्ष अपने में वरण कर लिया। ग्रहण करने के पश्चात् मुनिवरो! देखो अनुसन्धान होता रहा परन्तु भारद्वाज मुनि महाराज ने यज्ञदत से यह कहा कि हे ब्रह्मचारी! हे पारेश्वर ब्रह्मचारी! यह जो याग हो रहा है इसमें तुम्हारी केसी निष्ठा है? उन्होंने कहा-प्रभु! मैं बड़ा प्रसन्न हूँ! जहाँ आपका गमन हो, जहाँ आपकी सहानुभूति हो, उसमें मेरा हृदय अति प्रसन्न रहता है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ।

मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने जैसे ये वाक्य प्रगट किये तो भारद्वाज मुनि ने कहा-बहुत सुन्दर। तो मुनिवरो! देखो, उनके उच्चारण करने का ये भाव था क्योंकि यज्ञदत उनके विद्यालय में वेद के मर्म को जानते थे। वेद के मन्त्रों को जानना, अनुसन्धान करना, भौतिक और आध्यात्मिक दोनों में अनुसन्धान करते रहते थे।

आध्यात्मिक विज्ञान से ही भौतिक विज्ञान की सार्थकता

तो मेरे प्यारे! देखो, वहाँ प्रातः कालीन जब याग होता, तो महर्षि विश्वामित्र उन याज्ञिकों को उपदेश देते-कि अपने अन्तरात्मा को ऊँचा बनाना चाहिए। क्योंकि आत्मा जब तक बलिष् नहीं होगी तब तक हम भौतिक विज्ञान में सार्थक नहीं बन सकते। क्योंकि भौतिक जो विज्ञान है यह मानव को ऐसे मार्ग पर ले जाता है जहाँ यह अभिमानी

बन सकता है। परन्तु आध्यात्मिक विज्ञान एक ऐसा विज्ञान है जहाँ यह मानव को नम्रता देता है, वहाँ मानव को साधक बनाता है, मानव को मुद्रित बना देता है। मानो देखो, आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान दोनों का मिलान करके मानव उस परमपिता परमात्मा की महती को जानने लगता है। परन्तु देखो, जब तक परमपिता परमात्मा की महती को नहीं जाना जायेगा, हम अपने में समर्पित नहीं रहेंगे कि ये जितना विज्ञान है यह प्रभु की प्रतिभा है, यह प्रभु का आयतन है, प्रभु का गृह हैं तो तब तक देखो, हम विज्ञान में महानता को प्राप्त नहीं कर सकते।मेरे प्यारे! महर्षि विश्वामित्र यही कहा करते थे।

विनाश का द्योतक अभिमान

मेरे प्यारे! एक समय महर्षि विश्वामित्र के यहाँ जब यह याग चल रहा था तो नाना ऋषि आते थे। एक समय बेटा! महर्षि कागभुषुण्डी आ पहुँचे। महर्षि कागभुषुण्डी ने भी उस याग को दृष्टिपात किया। बेटा! देखो, ऋषि बहुत प्रसन्न हुए। महर्षि कागभुषुण्डी ने महर्षि विश्वामित्र से कहा-कि महाराज ये जो तुम धनुर्याग कर रहे हो यह मानो देखो, विज्ञान का याग है, विज्ञान में तुम ले जा रहे हो। परन्तु मेरे विचार में यह नहीं आ रहा है कि ये विज्ञान इन ब्रह्मचारियों को, याज्ञिकों को अभिमान में न ले जाये। क्योंकि यदि इन वैज्ञानिको को अभिमान आ गया, नाना प्रकार के अणुओं, परमाणुओं को जानने वालों को अभिमान आ गया तो मानो देखो, राष्ट्र, समाज सबका विनाश हो जायेगा। परन्तु देखो, मैं ये जानना चाहता हूँ कि क्या इन्हें सुबोध भी कराते हो।

मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-कि हम इन्हें आध्यात्मिकवाद की शिक्षा भी देते है और आत्मा को बलिष् बनाने का इन्हें नेतृत्व भी देते है। उन्होंने कहा 'बहुत प्रिय'।

प्राणों की प्रतिष्ठा

तो मुनिवरो! देखो, महर्षि कागभुषुण्डी ने वहीं महर्षि विश्वामित्र के विद्यालय में विश्राम किया। जहाँ बेटा! रात्रि के मध्य प्रहर में ब्रह्मचारी अपने आसनों को त्याग देते थे और दैनिक क्रियाओं से निवृत होकर साधना में, कुछ प्राणों की प्रतिभा में रमण करते थे। तो मुनिवरो! उन्होंने कागभुषुण्डी से कहा कि प्रभु! आप बहुत महान, प्राणवान् हैं जो प्राणों की प्रतिष को जानते हैं। आप हमें कुछ प्राण की प्रतिष्ठा का वर्णन कराईये। मेरे प्यारे! कागभुषुण्डी ने कहा-''बहुत प्रिय''। बेटा! ऋषि के आग्रह को ऋषि देखो, अपने से दूरी नहीं कर सके। उन्होंने बेटा! ब्रह्मचारियों को एक पंक्ति में विद्यमान करके कहा-कि हे राम! तुम प्राण के सम्बन्ध में क्या जानते हो? भगवान् राम ने कहा-कि हे प्रभु! मैं तो केवल इतना ही जानता हूँ कि हमारा जो यह मानव शरीर है यह प्राणों से गुथा हुआ है। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा-बहुत प्रिय''। महर्षि कागभुषुण्डी ने देखो, महाराज सम्पाति से कहा-कि तुम इस सम्बन्ध में कितना जानते हो? उन्होंने कहा-प्रभु मैं ये जानता हूँ कि हमारा जो ये बाह्य जगत् और आन्तरिक जगत् है इन दोनों का समावेश करने से मानो उसमें प्राण ही दृष्टिपात आता है। मेरे प्यारे! कागभुषुण्डी ने कहा ''बहुत प्रिय''। तो बेटा! महर्षि कागभुषुण्डी ने उन्हें उपदेश देना प्रारम्भ किया! मुनिवरो! देखो, ''मद्दलम् वृही वृता देवाः'' वे वेद मन्त्रों की कुछ ध्वनियाँ करने लगे। वेद मन्त्रों में ''प्राणं ब्रह्मे वचप्रहा लोकाः प्राणं ब्रह्म व्रतं दिव्यावताः'' मेरे पुत्रो! उन्होंने प्राण की कुछ प्रतिभा वर्णन करायी। महर्षि कागभुषुण्डी ने कहा-कि ये जो प्राण है इस प्राण में ही ब्रह्माण्ड का सूत्र कहलाता है। तुम्हें यह प्रतीत है कि ये जो वैज्ञानिकजन जो तुम्हारे गुरुजन हैं, उनसे मैंने श्रवण किया है कि भारद्वाज मुनि भी एक माह तक तुम्हारे यहाँ शिक्षा देकर के चले गये हैं। परन्तु ये जो प्राण हैं इसको अपने में प्रतिष्ठि बनाना तुम्हारा कर्तव्य है। क्योंकि ये तरङ्गवाद है एक-एक परमाणुओं से गुथा हुआ है और ये परमाणु ही मानो तरंगो के रूप में रमण कर रहे है। ये तरङ्गें क्या है? ये मानो देखो, प्राण सूत्र अपने में मुद्रित कर रहा है, ये

प्राण गति कर रहा है कहीं यह व्यान बन करके गति कर रहा है, कहीं मानो यह उदान बन कर के गति कर रहा है। यह प्राण ही इस ब्रह्माण्ड में है और दस ही प्राण मानव के शरीर में है इनको एक सूत्र में लाना ही यौगिकता कहलाती है। एक सूत्र में ला करके, परमात्मा से समन्वय करना ही आत्मा की छाया, आत्मा में समन्वय करना। हे ब्रह्मचारियो! तुम्हें साधना के क्षेत्र में जाना है। क्योंकि जब तक प्राण को तुम एक सूत्र में नहीं लाओगे तब तक आध्यात्मिक विज्ञानवेता नहीं बनोगे। क्योंकि भौतिक विज्ञानवेता बनना बहुत ही सहज है परन्तु आध्यात्मिक विज्ञान उस काल में तुम्हारे में आयेगा जब भौतिक विज्ञान से तुम उपराम हो जाओगे। क्योंकि भौतिक विज्ञान जहाँ समाप्त होता है वहाँ से ही आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ होता है। आध्यात्मिकवादी वही है जो प्राणों की प्रतिष जानता है। प्राणों की प्रतिष केसे है ? जैसे जब प्रलय काल आता है, रचना होती है। रचना होती है तो महत् तत्व है, अन्तरिक्ष में प्रतीत होता अक्षर है और अक्षर मानो अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत होता है। अन्तरिक्ष में वायुः अभ्राः होने लगती है और वायु से मानो देखो, अग्नि का जन्म होता है। और अग्नि से ही मानो देखो, पार्थिव तत्वों का जन्म हुआ। और ये संसार का क्रम बन जाता है। इसी प्रकार जब ये लय होता है तो देखो, यह पृथ्वी आपो में, आपो अग्नि में और अग्नि वायु में, वायु अन्तरिक्ष में और अन्तरिक्ष महत् तत्व में और महत् तत्व यह अक्षर में ओत-प्रोत हो करके मानो देखो, प्रलय काल आ जाता है।

प्राणेश्वर

इसी प्रकार हमारे इस मानव शरीर में जब योगेश्वर ये जानता है कि मुझे मुद्रित होना है। मुझे मुद्रा में प्रवेश करना है तो उस समय देखो, योगी सबसे प्रथम अपान को प्राण में, प्राण को समान में, समान को व्यान में और व्यान को उदान में और मुनिवरो! देखो, उदान का यह जो सिंचत प्राण है इसमें लय हो करके प्राणेश्वर बन करके, अपने प्रत्येक जीवन को सूत्र में पिरो देता है। तो मानो यह ब्रह्माण्ड खिलवाड़ बन जाता है, योगी के लिये।

तो तुम्हें योगेश्वर बन करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करना है। आध्यात्मिकवादी बन करके तुम्हें इस ब्रह्माण्ड को अपने अन्तर्हृदय में निहारना है। और अन्तर्हृदय में निहारना है इसलिये यदि तुम इस विद्या पर चले गये तो ये जो भौतिक विज्ञान है, परमाणुवाद है, अणुवाद है, यन्त्रवाद है मानो सूर्य में जाना है, लोकों में यातायात बनाना है परमाणुओं में गति करनी है। परमाणु भी मानो देखो, एक सूत्र में पिरोया हुआ है तुम्हें ये चिन्तन से प्रतीत होगा कि इसका सूत्र, ये प्राण कहलाता है। जैसे मानव शरीर का और आन्तरिक जगत् का मानो सूत्र प्राण कहलाता है, या आत्मा की छाया कहलाती है। परन्तु परमात्मा इसमें निहित रहते हैं इसी प्रकार मानो देखो, ''ब्रह्मो वाचप्रहा लोकाः'', यह जो नाना भौतिक विज्ञान है, इस पृथ्वी का विज्ञान है यह जो पृथ्वी-पिरोयी हुई है यह प्राण सूत्र में पिरोयी हुई है, जैसे तुम्हारी मानव प्रकृति प्राण सूत्र में पिरोयी हुई है ऐसे ही यह जो पृथ्वी है यह सूर्य-सूत्र में पिरोयी हुई है सूर्य सूत्र क्या है? ये प्राण है। मानो बृहस्पति सूत्र क्या है ये प्राण है। तो विचार आता है कि ये प्राण कितनी व्यापकता में है यह चिन्तन करने का विषय है इसकी चर्चा बेटा! मैं कल प्रगट करूँगा।

मानो संक्षिप्त रूप में कागभुषुण्डी ने उन्हें यह परिचय दिया और परिचय देकर के ऋषि मौन हो गये। प्रातः कालीन वेद वाक्य समाप्त हो गया, इसकी चर्चा बेटा! कल करेंगे। मानो आज का विचार विनिमय क्या, मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि विश्वामित्र जब धनुर्याग कर रहे थे तो मानो देखो, भिन्न-भिन्न ऋषि आ करके, क प्रकार के अपने अनुभवों की चर्चा करते थे। कागभुषुण्डी ने अपने अनुभव की चर्चा की उसकी शेष चर्चा मैं कल प्रगट करूँगा।

आज का वाक् बेटा! हमारा क्या कह रहा है कि हम आध्यात्मिक वाद और भौतिक विज्ञान दोनों को एक सूत्र में आने से ही मुनिवरो! देखो, विज्ञान का सदुपयोग कर सकते हैं। इसलिये योगेश्वर होकर के और भौतिक

परमाणुवाद को जान करके मुनिवरो! परमाणुओं का, यन्त्रों का निर्माण करें। जिससे हम इस सूत्र में रमण कर संके। मानो शब्दों के साथ में ये जो सूत्र गति कर रहे है। मानो यह जो यन्त्र हैं इन यन्त्रों में हम इन चित्रों को दृष्टिपात कर संके। मानो इनको दृष्टिपात करने वाले बेटा! हम अपने में विज्ञानता की आभा को प्राप्त कर सके। ये वेद का मन्त्र हमें क्या कह रहा है। . शेष अनुबन्ध दिनांक, 12.5.83, कासिमपुर खेड़ी, जि. बागपत

७ अध्यात्म-चर्चा १३ ०५ १९८३

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का वर्णन आता है क्योंकि उसे ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माना गया है।

वेद रूपी सूर्य

हमारे यहाँ वेद के सन्बन्ध में बेटा! परम्परागतों से ही अनुसन्धान होता रहता है अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर नाना प्रकार की कृतियाँ भी होती रहती हैं और यह परम्परागतों से ही चला आ रहा है। परन्तु हमारे यहाँ वेदों के सन्बन्ध में बहुत-सा विचार है। परन्तु एक विचार सर्वाधीन माना गया है कि वेद नाम इस प्रकाश का है, मुनिवरो! देखो, जैसे सूर्य का प्रकाश, जब प्रातःकालीन सूर्य उदय होता है तो उस प्रकाश में प्रत्येक मानव अपने क्रियाकलाप में परिणत हो जाता है और अपने में रत हो जाता है। क्योंकि प्रकाश आ गया है, सूर्य उदय हो गया है। इसी प्रकार ये जो वेद रूपी प्रकाश है। जैसे बाह्य जगत् में ये सूर्य मानव के नेत्रों को प्रकाशित कर देता है, नेत्र प्रकाशमान हो जाते हैं, संसार का क्रिया कलाप करना प्रारम्भ कर देते हैं, और उसमें रत हो जाते हैं।

इसी प्रकार जब वेद रूपी सूर्य का उदय होता है तो मानव का अन्तःकरण पवित्र हो जाता है। क्योंकि जो वेद वर्णित प्रकाश है वह मानव के अन्तःकरण को प्रकाशित बना देता है। जो इसका उद्गीत गाता है, उद्गान गाता रहता है, इसकी विद्या पर चिन्तन मनन करता रहता है। तो मेरे पुत्रो! मानव का हृदय प्रायः पवित्र हो जाता है, मानव प्रकाशमान हो जाता है। जैसे सूर्य का प्रकाश मानव के नेत्रों को प्रकाशमान बनाता है, जन-जीवन को प्रकाशमान बनाता है, इसी प्रकार वेद का जो मन्त्र है, वेद रूपी जो प्रकाश है उसमें जो अनुपम विद्या है, उसका अन्तःकरण सन्तुलित होकर के अध्ययन किया जाता है। एकान्त स्थली पर विद्यमान होकर के साधना हो रही है, वेद मन्त्रों का उद्गीत गा रहे हैं उस उद्गीत के आधार पर ज्ञान और विज्ञान में रमण कर रहे हैं। तो मेरे पुत्रो! मानव का अन्तःकरण पवित्र बन जाता है। जब मानव का अन्तःकरण पवित्र बन जाता है तो बेटा! वेद रूपी सूर्य मानव को 'अन्धकारं ब्रह्मे' अज्ञान को समाप्त कर देता है और प्रकाश को ला देता है। इसीलिये हमारा वैदिक साहित्य ये कहता है, वेद का मन्त्र भी यही कहता है कि हे मानव! तू प्रकाश के लिये गमन कर। वेद का मन्त्र कहता है हे अग्नि आओ, तुम हमारे हृदयों को पवित्र बनाओ। हे अग्नि! तू हमें प्रकाश में ले चल। मानो प्रकाश में जाने के पश्चात् मानव का जीवन महानता की आभा में रमण करने लगता है।

माला

तो बेटा! आज का हमारा वेद मन्त्र उद्गीत गा रहा है। वेद का मन्त्र कुछ घोषणा कर रहा है। घोषणा ये कर रहा है कि हे मानव! तू इस माला को धारण कर। जिस माला को धारण करने के पश्चात् मानव का अन्तःकरण पवित्र हो जाता है। बेटा! ये माला है, ये मनके और सूत्र दोनों का समन्वय है दोनों का समन्वय ही माला कहलाती है। तो उस माला को हमें धारण करना है, माला के सूत्रों को हम सदैव गणित कराते रहते हैं। ये सूत्र की रचना बेटा! ऋषि मुनि परम्परागतों से ही वर्णित करते रहते हैं और ये कहते रहते हैं कि ये सूत्र हमें धारण करना है। इस सूत्र के धारण करने से हमारा अन्तःकरण प्रकाश में आता है, अन्धकार नष्ट हो जाता है। हमारे

जीवन में ज्ञान की प्रतिभा का जन्म हो जाता है। मानो देखो, अन्धकार से दूर हो जाते हैं। क्योंकि जितना भी ज्ञान विज्ञान है वह मानव के अन्धकार को नष्ट कर देता है। परन्तु जितना भी ज्ञान है वह प्रकाश में ले जाता है, जितना विज्ञान है वह इसे प्रतिभा में ले जाता है। परन्तु दोनों प्रकार के ज्ञान और विज्ञान का परम्परागतों से अनुसरण होता रहता है। हमारे यहाँ दो प्रकार का विज्ञान परम्परागतों से ही बेटा! वैदिक साहित्य में वर्णन किया जाता है।

मानो देखो, हमारे यहाँ एक भौतिक विज्ञान है और एक आध्यात्मिक विज्ञान है। भौतिक विज्ञान में बेटा! नाना प्रकार की तरंगो में तरङ्गित होने लगता है, अपनी उड़ान उड़ने लगता है। परन्तु देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेता ये कहता है, ''मृत्युः भव सन्यताः देवाः'' कि मैं मृत्यु से उपराम होना चाहता हूँ, मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। हमारे वैदिक साहित्य वालों ने, अज्ञानता का नाम ही मृत्यु कहा है, इसलिये अज्ञान नहीं रहना चाहिये। विज्ञानवेता जो भौतिक विज्ञान है वह क्या कहता है? वह तरंगो को जानने में लगा हुआ है। उन तरंगो को, परमाणुओं को जानता रहता है कि इन परमाणुओं में बेटा! सर्वत्र सृष्टि का सूत्र है, ब्रह्माण्ड का सूत्र है, इसी में सब दृष्टिपात होता रहता है।

शब्द की प्रतिभा

बेटा! जब ये विचारा जाता है कि हमारा वैदिक साहित्य भौतिक विज्ञान के विषय में क्या कहता है ? तो बेटा! वैज्ञानिक अपनी शान्त मुद्रा में विद्यमान है, विचार कर रहे हैं कि हमारा जो ये शब्द है, ये कहाँ जा रहा है? शब्द की प्रतिभा क्या है? विचारता रहता है कि शब्द के साथ में चित्र भी गति कर रहे हैंं चित्रोसि हो रहा है। परन्तु ये केसी प्रतिभा है, उसके ऊपर वह चिन्तन और मनन करता रहता है और नाना प्रकार के मन्त्रों का निर्माण करता रहता है। जैसा हमने पूर्व काल में तुम्हें प्रगट करते हुए कहा था कि प्रयोक्त बना हुआ है, प्रेरणा पाता रहता है। प्रेरणा के सूत्र में मानो वह सूत्रित होता रहता है। इसलिये परम्परागतों से ही वैदिक साहित्य वालों ने, वेद के चिन्तन करने वालो ने बहुत ऊँची-ऊँची उड़ानें उड़ी हैं। आज बेटा! मैं उन उड़ानों के सन्म्बन्ध में तुम्हें नाना प्रकार की वार्ता प्रकट करता रहता हूँ।

परन्तु आज मैं बेटा! तुम्हें वहीं ले जाना चाहता हूँ जहाँ मुनिवरो! देखो, वेद के ऊपर, वेद के मन्त्रों के ऊपर एक-एक शब्द के ऊपर मानो कितना अनुसन्धान करता रहा है। मेरे पुत्रो! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस काल में मुनिवरो! ऋषि-मुनि एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो करके मानो देखो, अनुसन्धान करना, वैदिक मन्त्रों के ऊपर चिन्तन और मनन करना उनका ये कर्तव्य बन गया था। मेरे पुत्रो! ''धम्यक व्रणाः ब्रह्मं वाचे प्रविताः'' मैं तुम्हें यज्ञशाला में ले जाना चाहता हूँ, जिस यज्ञशाला में बेटा! नाना ब्रह्मचारी विद्यमान है जहाँ मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि विश्वामित्र अपनी विज्ञानशाला में विद्यमान है। मानो नाना ऋषि उनके यहाँ आ करके यह शिक्षा देते रहते थे। मेरे प्यारे! भगवान् राम और भगवान् कृष्ण ''ब्रह्मवाचस्प्रहे लोकाम्'' मेरे प्यारे! देखो दो काल हमारे यहाँ बड़े विचित्र हुए है जिसमें एक काल तो भगवान् कृष्ण का था और एक काल भगवान् राम का था। राम के काल में भी विज्ञान पराकाष पर था और कृष्ण के काल में भी देखो, विज्ञान पराकाष पर था।

दण्डक वनों में धनुर्याग

परन्तु मैं राम की चर्चा कर रहा था। देखो, राम और लक्ष्मण दोनों महर्षि विश्वामित्र के यहाँ मेरे प्यारे! धनुर्याग कराने के लिये, उनके ''यागां, ब्रह्म वाचाः'' वे उनके याग को पूर्ण कराने के लिये, मेरे पुत्रो! ऋषि मुनियों ने ये विचारा था कि हमें धनुर्याग को प्राप्त करना है।

वैदिक साहित्य के मन्त्रों में धनुर्याग का वर्णन आता रहता है, धनुर्याग की प्रतिभा आती रहती है और

विचारा जाता है कि धनुर्याग में मेरे पुत्रो! देखो, ब्रह्मचारियों को विज्ञान के क्षेत्र में ले जाया जाता है, विज्ञान की प्रतिभा में ले जाया जाता है। विज्ञान को नाना प्रकार के यन्त्रों के द्वारा मानव नाना आविष्कार करता रहता है। उनका देखो, ''सद्दति अद्रूणां वाचस्प्रहे वृतोः'' बेटा! सद्दतिकरण करा करके मेरे पुत्रो! देखो, आविष्कार भी करता रहता है, उनकी परीक्षा भी होती रहती है।

देखो, यह कर्म दण्डक वनों में महर्षि विश्वामित्र के यहाँ प्रायः होता रहा है। महाराजा गरूड, महाराजा सम्पाति और नाना वैज्ञानिक भी बेटा! देखो, इस यज्ञ में विद्यमान थे। मेरे पुत्रो! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आता रहता है उस काल का जीवन बड़ा विचित्र, भव्यता में था। मैं स्मरण कर रहा था, ऋषि-मुनियों ने यही कहा-कि भौतिक विज्ञान को जानना बहुत अनिवार्य है परन्तु इससे पूर्व हमें यह जानना भी बहुत अनिवार्य है कि अपने जीवन को महान बनायें। मानो, अपने जीवन को तपश्चर में, तपस्वी बनाते रहें। जब तक हमारा जीवन तपस्यामय नहीं बनेगा, तब तक हम वेद की पवित्र विद्या को नहीं जान सकते। मेरे प्यारे! देखो, ''तपस्यां ब्रह्म वृतेः लोकाः'' देखो, तपस्या की व्याख्या करते हुए ऋषि कहते हैं कि इन्द्रियों पर उसका संयम करना है। हृदय में उसकी स्थिति को स्थिर करना है वही दृष्टिपात करना है। मेरे पुत्रो! देखो, तपस्या का सार कहलाता है,

विचार क्या मुनिवरो! देखो, यहाँ मैं बेटा, कागभुषुण्डी की चर्चा कर रहा था, महात्मा कागभुषुण्डी महान तपस्वी होते हुए धनुर्याग में आ पहुँचे।

भौतिकता विज्ञान के लिए अध्यात्म की अनिवार्यता

धनुर्याग में उन्होंने यही वाक् कहा ब्रह्मचारियों को कि हे ब्रह्मचारियो! जहाँ तुम अस्त्रों शस्त्रों को मानो विहार रहे हो, जान रहे हो, आविष्कार कर रहे हो, परिश्रम कर रहे हो उनका अभ्यास कर रहे हो ये तो मैंने जान लिया है। परन्तु तुम्हारा जीवन आध्यात्मिकवादी भी होना चाहिये। क्योंकि भौतिक विज्ञान परम्परागतों से ही चला आ रहा है। परन्तु जिस काल में भौतिक विज्ञान बलवती हुआ है, पराकाष पर पहुँचा, विज्ञान का तभी दुरुपयोग हुआ है। दुरूपयोग होते ही समाज में निष्क्रियता आ जाती है, समाज में अकर्तव्यवाद आ जाता है। इसलिये उन्होंने कहा हे ब्रह्मचारियो! तुम्हें आध्यात्मिकवादी होना भी बहुत अनिवार्य है। तब ऋषि-मुनियों ने कहा कि आध्यात्मिकवाद क्या है? इसमें बेटा! भगवान् राम ने गरूड जी से पूर्व भी ये प्रश्न किया 'ब्रह्म वाचस्प्रहे लोकाः' पुनः कागभुषुण्डी से ''अप्रतोः वृतं ब्रह्मे वाचन्नमं वृहितः।''

मेरे प्यारे! काग भुषुण्डी ने कहा-आध्यात्मिक वाद की घोषणा गरूड जी करते रहे हैं। परन्तु आज हम ये यह जानना चाहते हैं कि आध्यात्मिकवाद क्या है? मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने विचारा और कहा कि हे राम! तुम आध्यात्मिक विज्ञान में जाना चाहते हो तो तुम्हें किसी सूत्र को जानना होगा। सूत्र की चर्चा करते हुए मुनिवरो! देखो, हमने कई काल में तुम्हें कहा था कि तुम्हें सूत्रित हो जाना, कि इस ब्रह्माण्ड का कोई न कोई सूत्र है और वह सूत्र ही मानो प्रत्येक लोक लोकान्तरों की एक माला के सदृश्य दृष्टिपात आते रहते हैं। एक दूसरे में पिरोया हुआ यह ब्रह्माण्ड है। जो देखो, मानव, मानव में पिरोया हुआ है एक दूसरे की परिक्रमा कर रहा है।

आत्मा और परमात्मा की छाया रूप प्राण

इसी प्रकार हमारा ये जो शरीर है इस शरीर को जानना बहुत अनिवार्य है। आध्यात्मिक विज्ञानवेता सबसे प्रथम अपने शरीर को जानने का प्रयास करते हैं और इसका जानना क्या है? कागभुषुण्डी जी ने कहा-हमारे शरीर में जो क्रिया हो रही है मानो देखो, ये दो रूपों में परिणत है। आज वैदिक साहित्य हमें ये व्याख्या करता है कि ये जो प्राण हैं ये आत्मा की छाया है। वहीं मानो देखो, वेद की व्याख्या है कि ये जो प्राण हैं, ये परमपिता परमात्मा

की छाया है। परन्तु वेद का मन्त्र यह कहता है ''प्राणां ब्रह्म भव ब्रहे वस्तुतं खं ब्रह्मे वृतश्चक्रताः याचकं बृही वस्तुं देवाः'' वेद का मन्त्र ये कहता है कि-प्राण एक विशेष होता है, एक सामान्य होता है। जैसे मन भी एक सामान्य तथा एक विशेष कहलाता है। परन्तु इसी प्रकार प्राण भी दो प्रकार का होता है एक सामान्य और एक विशेष कहलाता है। विशेषता में ये प्राण ही देखो, आत्मा की छाया बना हुआ है और जब यही प्राण मानो विश्वभान बन करके रहता है तो ये परमात्मा की छाया बनकर रहता है। जिस परमात्मा को हमारे यहाँ सम्पप्र स्वीकार किया करते हैं। जब परमपिता परमात्मा कण-कण में ओत-प्रोत है, तो मानो उसकी जो छाया है, उसका जो प्राण है वह मेरे प्यारे! विश्वभान बन करके प्रत्येक वस्तु में रमण कर रहा है। क्योंकि उसमें जो क्रिया हो रही है, परमाणुवाद जितनी भी क्रिया कर रहा है वह विशेष प्राणों के द्वारा कर रहा है। परन्तु मानव के शरीर में जितने भी क्रिया कलाप हो रहे हैं, चाहे वह नेत्रों के द्वारा हो रहे हैं, चाहे वह घ्राण के द्वारा हो रहे हैं मेरे प्यारे! रसना उद्गीत गा रही हो श्वास की गतियाँ गति कर रही हो। मुनिवरो! देखो, ''ब्रह्म वाचस्प्रहे'' आत्मा की छाया बन करके विशेष प्राण इस मानव के शरीर में रमण कर रहा है। बेटा! ये इसकी प्रतिभा कहलाती है।

परन्तु विचार यह देखो, प्रत्येक मानव ये विवेचना करता रहता है कि जब प्राण, आत्मा की छाया है तो यह ''एकोद्वानम्'' नहीं हो सकता, आत्मा के बिना लाभ नहीं हो सकता। परन्तु जब वैज्ञानिकों के मध्य में आध्यात्मिक विज्ञानवेताओं के समीप जब यह वाक्य आता है कि यह प्राण शरीर में आत्मा की छाया है और जब इस प्राण का समन्वय, विशेष प्राण का समन्वय होता है, चेतना में चेतनबद्ध होता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ये अपनी आभा में अन्तरिक्ष में भी, सर्वत्रता में गति करता है। जिस समय यह आत्मा इस शरीर से निकल जाती है, और इसके निकल जाने से सामान्य प्राण बेटा! इसमें निहित रहता है। लेकिन विशेष प्राण के साथ में आत्मा उदान प्राण के साथ में चला जाता है यह विश्वभान प्राण है। जो मानव गति कर रहा है मेरे पुत्रो! देखो, उसमें निहित रहता है। इसी प्रकार विचारने से प्रतीत होता है कि संसार का जितना भी पिण्ड बनता है वह बिना प्राण के किसी का भी पिण्ड नहीं बन सकता। जब मानव का पिण्ड ज्यों का त्यों विद्यमान रहता है उसी में से उदान प्राण चित के मण्डल को लेकर के और विशेष प्राण के साथ में आत्मा चली गयी है। परन्तु देखो, उसमें कृतिका अक्षत होना प्रारम्भ हो गया है। मेरे प्यारे! स्थूल पिण्ड प्राण के कारण ही मेरे प्यारे! देखो, उसमें प्राण शक्ति विद्यमान रहती है।

जीवन शक्ति का आधार

मेरे प्यारे पुत्रो! देखो, आयुर्वेद का विज्ञानवेता आयुर्वेद की औषध को एकत्रित करता है परन्तु उसमें आत्मा नहीं है उसमें जीवन शक्ति है और जीवन शक्ति प्राण के कारण है यदि प्राण उसमें नहीं होगा तो जीवन शक्ति भी नहीं होगी। जीवन शक्ति मेरे पुत्रो! वह जो सामान्य प्राण है तो हमें प्राप्त होती रहती है।

तो विचार आता रहता है मेरे पुत्रो! देखो, ये विचारना है। नाना प्रकार की वनस्पतियों को लेकर के वैद्यराज इसका अपने में खरल बना रहा है अथवा एक दूसरे को एक दूसरी औषधि में इसको प्रतिपादित करा रहा है, मानो समन्वय करा रहा है, औषधियों का सद्गतिकरण कर रहा है। जैसे यजमान मेरे पुत्रो! अपनी यज्ञशाला में नाना औषधियों के द्वारा नाना शाकल्यों का मानो सद्गतिकरण करता रहा है, इसका शाकल्य बन जाता है वह ही स्वाहा होता है। यही मुनिवरो! देखो, स्वाहा, तरंगो के साथ में ''वायुः प्राणां ब्रह्मा वाचाः'' वायु अग्नि की तरंगो पर विद्यमान होकर के अग्नि में इस समय प्राण है यह जो प्राण शक्ति है ये मानो रेचक शक्ति मानी गयी है। ये ही मुनिवरो! शब्दों को लेकर के, शाकल्यों को लेकर के सूक्ष्म-सूक्ष्म धाराओं को लेकर के द्यौ मण्डल तक पहुँचा देती है। तो इसका परिणाम क्या ?

आत्म उत्थान

मुनिवरो! देखो, इसके ऊपर अनुसन्धान करना चाहिए। महात्मा कागभुषुण्डी ने उस काल में यह कहा कि आध्यात्मिक विज्ञानवेता इन प्राणों को जानने में लगा रहता है और इनका समन्वय करता रहता है। ये जो सामान्य प्राण है परमपिता परमात्मा की छाया बना हुआ है। बेटा! यही प्राण सामान्य रूपों से मानो ये जो स्थावर सृष्टि है इसमें परिणत रहता है। स्थावर सृष्टि को उर्ध्वा शक्ति देता हुआ ऊर्ध्वा बनाता है, ऊवा बनाता है, सम्भूति बनाता है। नाना प्रकार की आभा में उसे परिणत कर देता है।

तो मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, महात्मा कागभुषुण्डी ने ये कहा कि हे राम! यदि तुम आध्यात्मिकवेता बनना चाहते हो और ब्रह्मवर्चोसि बनना चाहते हो, तो इन प्राणों की रक्षा करना। तुम्हारे लिये यह बहुत अनिवार्य है। क्योंकि परमपिता परमात्मा जो प्राण स्वरूप है मानो इसको जानना है। ये जो भौतिक विज्ञानवेता देखो, प्रत्येक वस्तु में प्राण को स्वीकार करता है। प्रत्येक वस्तु में देखो, पिण्ड में भी ''प्राणं ब्रहे वाचाः'' मेरे पुत्रो! देखो, जिसको हम सद्वतिकरण कहते हैं। परन्तु देखो, उसमें जल और पृथ्वी के रजो का सद्वतिकरण करा करके देखो, अग्नि में तपा करके उसी को मेरे पुत्रो! देखो, गृह से ग्रह के निर्माण में अपनी आभा प्राप्त कर लेता है।

तो मेरे पुत्रो! देखो ये सामान्य प्राण है जब ये अपनी प्राण शक्ति को लेकर के प्रत्येक वस्तु में अपनी द्रुत गति कर रही है जैसे मुनिवरो! देखो, समिधा में अग्नि विद्यमान है और यह अग्नि ही प्राण की समिधा बनी हुई है या प्राण शक्ति अग्नि में प्रवेश करके, साकल्य बन करके अग्नि उसका भेदन कर देती है, परमाणुवाद बना देती है।

मेरे पुत्रो! देखो परमाणुवाद 'अब्रहे व्रतं' वह देवताओं का भोज्य बन जाता है वही मानो साकल्य के द्वारा, समिधा के द्वारा देवताओं का भोज्य बन करके, देवताओं में प्राण शक्ति का संचार हो जाता है। मेरे प्यारे! वह प्राण शक्ति है, आत्मा नहीं है। परन्तु उसमें प्राण शक्ति विद्यमान है, प्राण तत्व विद्यमान है। मेरे पुत्रो! देखो, जैसे सूर्य की नाना प्रकार की किरणें है उनमें प्राण ही तो आ रहा है। ये गतियाँ उनसे आ रही है ये धारा आ रही हैं। मेरे पुत्रो! देखो, यह धारा प्राण रूप बनकर के मानव के जीवन को 'मूद्रिता' कर देती है।

उद्बुद्धता

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ आज मैं तुम्हें वहीं ले जाना चाहता हूँ। जहाँ मेरे पुत्रों! देखो, महात्मा कागभुषुण्डी ने ये कहा कि प्राण की साधना को ही योगेश्वर अपने में धारण करने लगते हैं। जो योगी बनता है केवल योगाभ्यास करता हुआ वह जड़वत और चैतन्यवत् दोनों का समन्वय करता है। मानो देखो, जड़वत् क्या है? चैतन्य क्या है? जिसका ये समन्वय करना चाहता है। बेटा! पूर्व काल में ऋषि-मुनि मुद्रित होते रहे है। परन्तु मुद्रिता का अभिप्राय क्या कि अपने में मौन हो करके मन और प्राण दोनों को एक सूत्र में लाना चाहते हैं। एक सूत्र के मनके बनाना चाहते हैं। ये मनके योगी लोग धारण करते है। ये जो मन की गति है, चंचलता में परिणत हो रही है। उसको प्राण के ऊपर जब हम आश्वस्त कर देते हैं, मिलान कर देते हैं तो योगी जन मुद्रित हो जाते हैं। तो मुनिवरो! देखो, साधना करता हुआ साधक ब्रह्मवर्चोसि बन जाता है। ब्रह्मवर्चोसि से वह मेरे प्यारे! ऋषि बनता है। ऋषि के पश्चात् वह मुनि बनता है परन्तु देखो, जैसे शिशु की गति होती है ऐसे मुनि बन करके बेटा! परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में चला जाता है।

आध्यात्मिकवाद

तो मेरे प्यारे! महर्षि कागभुषुण्डी ने अपने अनुभव की कुफछ चर्चाएँ ब्रह्मचारियों के मध्य प्रगट कीं और ये कहा कि प्रातःकाल का समय है, प्रातः काल में मैं तुम्हें ये दे रहा हूँ कि तुम्हारे शरीरों में परमपिता परमात्मा ने जो प्राण स्वरूप देखो, गति कर रहा है। प्राण आत्मा की छाया बनकर के इस आत्मा के साथ इसका मिलान करा

देता है। छाया और ज्ञान दोनों का समन्वय हो जाना ही आध्यात्मिकवाद कहलाता है।

ब्रह्मवर्चोसि

मेरे प्यारे! देखो, जब महात्मा कागभुषुण्डी ने ये नाना प्रकार की चर्चाएँ कीं तो मुनिवरो! राम, लक्ष्मण और नाना साधक प्रसन्न हो रहे थे। उन्होंने कहा-'धन्य है' मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने प्राण स्वरूप की कुछ चर्चाएँ की। उन्होंने पुनः कहा-'कि अब तुम प्राण और अपान दोनों का समन्वय करने का प्रयास करो। देखो, प्राण को अपान में ले जाओ, अपान को देखो, समान में ले जाओ, समान को व्यान में ले जाओ और व्यान को देखो, उदान में ले जाओ और इन पाँचों प्राणों का जब सद्वृति- करण हो जायेगा तो ब्रह्मचारियो! यही तुम्हारा ब्रह्मवर्चोसि बन जायेगा। क्योंकि जब तक तुम इनका मिलान करना, इनका समन्वय करना, इनका सद्वृतिकरण करना जैसे यजमान अपनी यज्ञशाला में नाना प्रकार के साकल्प को एकत्रित करके एक दूसरे में इनका सद्वृतिकरण करता है तो वह देवताओं का भोजन बनाता है। देवता जैसे यजमान अग्नि में हूत करते है, अग्नि सूक्ष्म परमाणु बना करके देवताओं को प्रदान कर देती है। देवता इस छवि को प्रदान करते है। विचारों की जो छवि बनी है, उसके साथ बेटा! उसके विचार गए है, चित्र गए है। उनसे वायुमण्डल बनता है, उसी से देवता जन प्रसन्न होते हैं। उसी प्रकार आध्यात्मिक विज्ञानवेता प्राण, अपान समान व्यान और उदान इन सबका जब सद्वृतिकरण हो जाएगा तो हे ब्रह्मचारियो! तुम ब्रह्मवर्चोसि बन जाओगे।

यही बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज कहते है-ब्रह्मवर्चोसि मानो देखो, तुम ब्रह्म और चरी दोनों का भोजन करना जान जाओगे। ब्रह्म कहते है परमात्मा को और चरी कहते है प्रकृति को। दोनों का समन्वय करना ही दोनों का मिलान करना ही मानो बेटा! आध्यात्मिकवाद है। दोनों का बाह्य जगत से सद्वृतिकरण करना देखो, विज्ञान कहलाता है।

तो मेरे प्यारे! ऋषि ने जब ये वाक्य प्रगट किया तो साधक जन मानो ब्रह्मचारी उसके गर्भ में ओत-प्रोत हो गए। उन्होंने कहा-धन्य है प्रभु, आपने जो हमें ज्ञान की शिक्षा प्रदान की है उससे हमारा मानो देखो, अन्तःकरण सन्ध्या में ओत-प्रोत हो गया।

भौतिक विज्ञान

मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या जहाँ कागभुषुण्डी जी आध्यात्मिक विज्ञान की चर्चा करते थे वहीं बेटा! वे भौतिक विज्ञानवेता भी थे। महर्षि कागभुषुण्डी ने कहा कि हमारे यहाँ ऋषि मुनि आध्यात्मिकवाद को लेकर भौतिकवाद की चर्चा करते हैं और भौतिकवाद को लेकर के आध्यात्मिकवाद की चर्चा होती है। लेकिन भौतिकवाद कहते किसे हैं? भौतिकवाद उसे कहते हैं ये जो प्राणी ''ब्रह्म वाचस्प्रहेः लोकाः'' ये जो वायु मण्डल है ये जो जगत् है, उसमें जो परमाणुवाद गति कर रहा है उस परमाणु को अन्तरिक्ष में से एकत्रित करते हैं। और एकत्रित केसे करते है? यन्त्रों के द्वारा अनुसन्धान करते हैं। उन परमाणुओं को लाते हैं और उन परमाणुओं को लेकर के अस्त्रों, शस्त्रों का निर्माण करते है। कहीं जलास्त्रों का निर्माण करते हैं, कहीं ब्रह्मास्त्रों का निर्माण करते है, नाना प्रकार के अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण करते हुए वे कहीं लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाला जब उसको सूर्य की किरणों से दृष्टिपात करते हैं, तो इसमें परमाणु गति करते हैं। इस प्रकार जब वे परमाणु ऊर्ध्वा में जाते हैं, कहीं ध्रुवा में जाते हैं, कहीं सुकान्त में जा रहा है। इस प्रकार वे ध्रुवा और उर्ध्वा में गति करने वाले परमाणु को यन्त्रों में दृष्टिपात करते हैं और पान करके मुनिवरो! देखो, उनसे तृप्त होकर, उनसे नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते हैं। जैसे भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण होता रहा। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ ऐसे-ऐसे यन्त्र

विद्यमान थे, जो सूर्य की, अग्नि की किरणों के साथ में यन्त्र देखो, सूर्य की परिक्रमा करता रहता।

तो विचार विनिमय क्या मुनिवरो! आज का वाक्य हमारा क्या कह रहा है। बेटा! हम प्रत्येक वेद मन्त्रों में अनुसन्धान करने वाले बनें, विचार विनिमय करने वाले बनें ''प्राणं ब्रह्मवाचप्रमं ब्रह्मेः वाचाः'' वेद के आचार्य कहते हैं कि बेटा! हम ऐसे-ऐसे यन्त्रों का निर्माण करें जिन यन्त्रों से हम नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों को, नाना आकाश गंगाओं को दृष्टिपात करने वाले बनें। नाना प्रकार की धाराओं में गति करते हुए नाना लोकों को मानो एक सूत्र में सूत्रित करने वाले बनें।

अज्ञानता

तो मेरे प्यारे! देखो, वेद के आचार्य ने ये वर्णन किया है काग भुषुण्डी जी ने ये कहा है ब्रह्मचारियों के समीप विद्यमान होकर उन्होंने भारद्वाज मुनि इत्यादियों का बहुत सा वर्णन किया, परन्तु इसमें उन्होंने एक वाक्य कहा-कि संसार में अपने को बनाना बहुत अनिवार्य है। अपने को बनाने वाला संसार में मृत्यु को प्राप्त नहीं होता है। परन्तु जो दूसरे की हृसता को दृष्टिपात करता है मानो जो दूसरों के जीवन को अन्धकार में प्रवेश कराता है वह मृत्यु को प्राप्त होता है। देखो, ऋषि मुनियों का एक ही मन्तव्य रहा है मृत्यु के सन्बन्ध में, कि मृत्यु अज्ञानता को कहते हैं, अन्धकार को कहते हैं।

अन्धकार

अन्धकार किसे कहते हैं? अन्धकार उसे कहते हैं जहाँ देखो, प्रत्येक वस्तु में परमपिता परमात्मा विद्यमान है उसको न दृष्टिपात करना, अपने को दृष्टिपात करके अभिमान में आ जाना ही मेरे पुत्रो! अन्धकार कहलाता है। विचार क्या मुनिवरो! देखो, जब हम परमपिता परमात्मा को एक-एक कण-कण में दृष्टिपात करने वाले होंगे, उसकी विवेचना करने वाले होंगे कि ये प्राण तत्व मानो सर्वत्र विद्यमान है और उसका विज्ञान इतना नितान्त है मानो एक मानव शब्दों को ग्रहण कर रहा है वायुमण्डल से और उसे यन्त्रों में लाकर दृष्टिपात करने लगता है। परन्तु जब वैज्ञानिक ये विचारता है कि ये विज्ञान तो मैंने ही जाना है, ये विज्ञान अब से पूर्व किसी ने नहीं जाना, तो जानो, उसमें अभिमान आ गया है। तो वह अन्धकार में चला गया है परन्तु जब वैज्ञानिक ये विचारता है कि ये तो परमपिता परमात्मा का मानो बिखरा हुआ कण है ये उसी का विज्ञान है हम तो केवल निमित हो करके उसे जानना चाहते हैं और जब निमित हो करके जानना चाहते हैं तो बेटा! उसमें नम्रता होती है, सात्विकता होती है, उसमें मानवता होती है। वह बेटा! प्रभु का अनुसरण कर रहा है क्योंकि जितना भी ज्ञान है, विज्ञान है उसका सर्वश्रेष् मानो प्रभु ही माना गया है। जैसे बेटा! मानव के शब्द है, इस शब्द के साथ मानव का चित्र भी गति कर रहा है। ये किसी मानव ने निर्माणित नहीं किया है।

मन और प्राण की एकरूपता

मानो माता के गर्भ स्थल में शिशु का निर्माण होता है जब शिशु का निर्माण होता है तो माता को ये भी प्रतीत नहीं होता कि कौन निर्माण कर रहा है, कौन निर्माणवेता है। मेरे प्यारे! मानव ये भी नहीं जानता कि तेरे शरीर में कितनी नस नाड़ियाँ है। तो मुनिवरो! मानव जानता ही क्या है? विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि-मुनियों ने प्राण और मन दोनों को एक सूत्र में ला करके, साधक बन करके अपने मानवीयत्व को जानने का प्रयास किया और जाना कि जब गर्भ स्थल में निर्माण होता है तब बुद्धि का निर्माण होता है। बुद्धि के भी अवान्तर भेद है जैसे बुद्धि है मेघा है ऋतम्भरा है, प्रज्ञा है। नाना प्रकार की बुद्धि है, नाना प्रकार के भेद हैं। और इनकी धाराओं के भी नाना प्रकार के भेद हैं।

ज्ञानेन्द्रिय-विज्ञान

मेरे प्यारे! देखो, जब चक्षु दृष्टिपात करता है तो चक्षु के साथ में मुनिवरो! प्रभु ने ऐसे यन्त्रों का निर्माण किया है जिससे बेटा! इनका चित्र भी आता रहता है। दृष्टिपात कर रहा है, रूप का चित्र आ रहा है। सर्वत्र मुनिवरो! देखो, उस चित्र में भूमण्डल का चित्रण होता रहता है।

मेरे प्यारे! मेरे प्रभु ने कैसी अनुपमता का निर्माण किया है। मेरे पुत्रो! शब्द है, शब्द आ रहा है। शब्द के साथ में चित्र भी आ रहा है, दोनों आ रहे हैं। कैसा मेरा प्यारा प्रभु! वैज्ञानिक है। मेरे प्यारे! देखो, उसी प्रकार जहाँ उसके साथ में श्वास की गति आ जा रही है। मानो एक-एक श्वास के साथ में इतना परमाणु जाता है जितने परमाणुओं से माता के गर्भस्थ में मानव के शरीर का निर्माण होता है, मानो निर्माणित हो जाता है एक-एक श्वास के साथ में मानव का चित्र बनकर अन्तरिक्ष में गति कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, प्रभु का विज्ञान कितना नितान्त हैं इसी प्रकार मुनिवरो! देखो, वाणी गीत गा रही है उद्गीत गा रही है वाणी उद्घोषणा कर रही है। वाणी जब उद्घोषणा कर रही है तब वाणी के शब्द बन करके, चित्रों को लेकर के अन्तरिक्ष में लय हो जाती है। बेटा! वैज्ञानिकजन परम्परागतों से ही जहाँ इस मानव की इन्द्रियों का समन्वय है, इन्द्रियों का सम्बन्ध है वहाँ तक विज्ञान में बेटा! ये सफलता को प्राप्त हो गया है। परम्परागतों से ही शब्दों की जानकारी में, चित्रों की जानकारी में, चित्रों को लेकर बेटा! उन्होंने यन्त्रों में चित्रावलियों का निर्माण किया। इसी प्रकार मानो प्रभु का विज्ञान है, जो विज्ञानमयी मेरा प्यारा प्रभु है। बेटा! किसी काल में मानव ने उन्हें विज्ञानता में लाने का प्रयास किया है और उसको विज्ञानता में लाना चाहिए। क्योंकि बिना उसके जाने बेटा! भौतिक विज्ञान के मार्ग से होकर ही आध्यात्मिकवाद को मानव प्राप्त करता है। तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या है, हम परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करते हुए उसकी वेदमयी, प्रकाशमयी, विज्ञानमयी धाराओं को जान करके बेटा! इस संसार का उद्धार होना चाहिए।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा ये विचार क्या कह रहा है कि बेटा! मानव की जो पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं, इनमें जितना विज्ञान समाहित हो रहा है उतना ही विज्ञान बेटा परम्परागतों से भौतिक विज्ञानवेता उसको जानते रहे हैं। परन्तु आध्यात्मिकवेता जब इन्द्रियों की उपरामता को प्राप्त होते हैं तो बेटा! मौन हो जाते हैं। परमात्मा की प्रतिभा को जानकर के मेरे पुत्रो! देखो, वह जो सामान्य प्राण है, उसको जानकर के विशेष प्राण का समन्वय करते हुए आत्मवत् बनते हुए परमात्मा के प्रकाशमयी राष्ट्र में चले जाते है। न बेटा वहाँ आलस्य है न प्रमाद है, न वहाँ रात्रि है सदैव बेटा! प्रकाश ही प्रकाश रहता है। शेष अनुपलब्ध दिनांक, 13.5.83 , कासिमपुर खेड़ी, जिला बागपत।

८ मानव उत्थान की दिशा १५ ०५ १९८३

पूर्व का प्रवचन अनुपलब्ध है।

तो तुमने कहाँ से जाना है? तो उतर प्राप्त होता है कि ये जो परमात्मा का अमूल्य जगत है इस जगत में जो नाना प्राणी अपने यान में हैं, उन यानों से ही हम मानो प्रेरित हो जाते हैं। मानो हम उनसे प्रेरणा पाते रहते है। देखो, जब अन्तरिक्ष में उड़ान उड़ने का प्रश्न आया तो मुनिवरो! देखो, पक्षीगणों की वैज्ञानिक जनों ने कल्पना की। जब ज्ञानमय प्रेरणा आयी तो जलचरों के प्राणियों के द्वारा उनसे प्रेरणा पाकर के द्यौ में गमन करने लगे। नाना प्रकार की प्रेरणा बेटा! इसे प्राप्त होती रहती है। यह बना हुआ है, प्रेरणा पाता रहता है, कहीं से प्रेरणा का ।केत आ रहा है।

मेरे प्यारे! देखो, सूर्य की नाना प्रकार की किरणें आ रही हैं मानो इन किरणों में ये ध्वनित हो करके अपने में मुद्रित हो करके मेरे प्यारे! देखो, इन किरणों के द्वारा अपने को जैसे नाना परमाणुओं से अग्नि की तरङ्गें आती हैं इसी प्रकार अपने में ऊर्ध्वा में बनाने का इस मानव ने प्रयास किया।

महर्षि नारद का भ्रमण-यन्त्र

तो मेरे पुत्रो! देखो, मुझे स्मरण आता रहा है कि देव ऋषि नारद मुनि महाराज ने अपने ''पादुका व्रण पत्यार्थ'' देखो, उनके द्वारा एक यन्त्र था। बेटा! जिसके ऊपर विराजमान हो करके वे पृथ्वी का भ्रमण कर रहे हैं, कहीं चन्द्रमा में जा रहे है। तो कहीं मङ्गल में भ्रमण कर रहे है। मानो देखो, वह नारद ''ब्रह्मे चित्राः देवाः''

मेरे प्यारे! देखो, यह जो मन है इस मन को भी वैदिक साहित्य में नारद की उपाधि प्रदान की जाती है। क्योंकि यह मन कहलाता है। इसलिये हमारे यहाँ नारद को भी ये उपाधि प्राप्त हुई। क्योंकि वे भी मन की भाँति नाना लोक लोकान्तरों में यन्त्रों के द्वारा, यौगिकता के द्वारा मानो देखो, भ्रमण करते रहते हैं।

तो मुनिवरो! देखो, नारद मुनि के सम्बन्ध में भी ऐसा कहा जाता हैं और जो नाना ऋषि हुए है परन्तु जिनके सम्बन्ध में बहुत-सी उड़ानें ऋषियों ने उड़ी हैं, उनकी साधना बन गई है। मुनिवरो! इसके विषय में मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, केवल विचार क्या- हमारे यहाँ मुनिवरो! मानव प्रेरणा प्राप्त करता रहता है। मानो सन्तोष को प्राप्त कर लेता है और ऊर्ध्ववादी बन जाता है। ऊर्ध्व रूप को लेकर ये ऋषि बन करके मानो देखो, मिलाने लगता है। मानो देखो, ये भिन्न -भिन्न प्रकार की अशुद्ध-शुद्ध दोनों प्रकार की कल्पना करने लगता है। जिनका मानव के हृदय में प्रवेश हो जाता है। परन्तु 'यागां ब्रह्मे वाचस्प्रहे' ये जो यज्ञ रूपी कर्म हैं, ये परम्परागतों से ही ऋषि मुनियों के शरीर में, विशुद्ध रूप से उनके मस्तिष्कों में नृत्य करता रहा है। और उस आभा में रमण करने वाला मानो ऊँची-ऊँची उड़ान उड़ता रहा है।

चित्त

मेरे प्यारे! देखो, नारद मुनि के शिष्य जिनका नामोकरण-उतानपाद के सुपुत्र महात्मा ध्रुव था। बेटा! वे भी उनके द्वारा शिक्षा पान करते थे और विशेषता ये मुनिवरो! आज मैं उन वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूँ विचार विनिमय क्या कि मुनिवरो! हमारे ऋषि-मुनियों ने ये प्रयास किया है कि व्यष्टि से समष्टि में, समष्टि और व्यष्टि दोनों का समन्वय करने का प्रयास किया, दोनों का मिलान किया। मुनिवरो! देखो, हमारा जो चित का मण्डल है, मानो ये चित का मण्डल भी मुनिवरो! देखो, यह समष्टि रूप में रहता है, और व्यष्टि रूप में भी रहता है।

मुनिवरो! देखो, समष्टि रूप मानो देखो, ये जो ब्रह्माण्ड है इस पंच महाभौतिक मण्डल में एक पार्थिवतत्व

चित का मण्डल कहलाता है।

ये बाह्य चित का बना हुआ है मानो देखो, इस मानव के शरीर में जो ये चित नाम का स्थान है जहाँ मानव की स्मरण शक्तियाँ बेटा! ये चित में विद्यमान रहती हैं। जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार इसमें निहित रहते हैं देखो, राष्ट्रों की राष्ट्रीयता के चित्र इस चित में विद्यमान होते हैं। अन्तःरूपों से रहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, ये हमारे यहाँ एक विशेष चित कहलाता है, एक विश्वभान चित है एक मानो देखो, विशेष चित है। जिस चित में बेटा! संस्कार विद्यमान रहते हैं। और बाह्य जगत् से उनका समन्वय होता है। इस मानव के शरीर में नाना प्रकार की नस-नाड़ियाँ है जैसे हमारे यहाँ कहा जाता है कि इस शरीर में देखो, बहतर करोड़ बहतर लाख दस हजार दो सौ दो नाड़ियाँ 727210202 कहलाती हैं परन्तु कोई स्थली ऐसी प्रतीत नहीं होगी तुम्हें इस शरीर में जहाँ मुनिवरो! वेद की पोथी विद्यमान न हो।

चित मण्डल के विभाग

मेरे प्यारे! देखो, यह जो चित का मण्डल है इसमें बेटा! सूक्ष्म अंकुर होते हैं। इनका समन्वय मेरे प्यारे! बाह्य जगत् से होता है, बाह्य चित से होता है। और जब दोनों का समन्वय होता है तो नाना प्रकार के बेटा! सघग्रह किया हुआ, अन्तःकरण में जो संस्कार और इन संस्कार में जो ज्ञान है जो विज्ञान है उनकी स्पष्ता होने लगती है। ये स्पष्ता 'खं ब्रह्मे वाचं वृही यश्चतं ब्रह्मे वाचा कृते देवाः'' मानो उनके साथ साक्षात्कार दिग्दर्शन होने लगता है, स्पष्टीकरण होने लगता है। तो विचार विनिमय में क्या? मेरे पुत्रो! देखो, ये चित का मण्डल कहलाता है ये विश्वभान कहलाता है।

देखो, इसके लिये ऋषि मुनियों ने बहुत प्रयत्न किया। आचार्यों ने ये कहा है कि यदि हम परमात्मा के द्वार पर जाना चाहते हैं तो मुनिवरो! ये जो व्यष्टि चित है उसको समष्टि चित में समावेश करना होगा और बेटा! जब दोनों चितों का समावेश हो जाता है तो बेटा! उस समय ईश बनकर के जैसे मुनिवरो! देखो, अप्र को अग्नि तपा देती है। इसी प्रकार जब इन संस्कारों में मुनिवरो! देखो, सूत्रों का समन्वय हो जाता है तो उस समय सस्कारों में उतरने की शक्ति नहीं रह पाती। परन्तु वह विलुप्त बन जाते हैं तो विचार विनिमय क्या मुनिवरो! देखो, ये भिन्न-भिन्न प्रकार के चित्रों का दर्शन होता रहता है। आज मैं बेटा! इस सन्म्बन्ध में विशेष विवेचना न देता हुआ, आज मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने दो शब्दों की वेदना प्रकट कर सवकेंगे। क्योंकि आज इतना समय अब आज्ञा नहीं दे रहा है जो मैं गुप्त मण्डलों की व्याख्या बेटा! प्रगट कर सकूं और अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने दो वाक्य प्रगट करेंगे।

पूज्य महानन्द जी का प्रवचन ओ३म् आ याः रथंचमे देवं यज्ञं भविता मनः। भद्राणि गच्छं ब्रह्मणे॥ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल!! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे। मानो वे अपने विचार दे रहे थे। वे बहुत समय से सूत्रों में सूत्रित होते रहे हैं क्योंकि उनके विचारों में गम्भीरता मानो वैदिकता रहती है। आज मैं विशेष विवेचना तो देने नहीं आया हूँ। अपने पूज्यपाद गुरुदेव को मैं केवल अपना और संसार का परिचय देने चला आया हूँ और वह परिचय क्या है कि जिस स्थली पर हमारी आकाशवाणी जा रही है ये वाक्य उद्धृत हो रहे है वहाँ ''यागां भवितुं जिह्नभ्यां भवाः'' याग का दिग्दर्शन कर रहा था। परन्तु आत्मा प्रसन्न हो रहा था क्योंकि जहाँ मानव याग करता है देव पूजा कर रहा है, देवताओं को अग्नि का मुख ''ब्रह्मे वाचस्प्रहे विश्वाः'' अग्नि के मुख में वह स्वाहा दे रहा है। अग्नि उसे वायुमण्डल में प्रसारण कर रही है। ये हमारा सौभाग्य है। हमारे ऋषि-मुनियों ने परम्परागतों से ही सृष्टि से लेकर वर्तमान के काल तक जो भी तपा हुआ महान

ऋषि आता हैं ज्ञान और विज्ञान से गुथा हुआ रहता है, अपने संस्कारों को ले करके आता है। मानो वह प्रथम याग की घोषणा करता है। वह कहता है कि अग्नि देवताओं का मुख है, इसको कोई यह नहीं कह सकता कि यह देवताओं का मुख नहीं है, क्योंकि अग्नि सूक्ष्म रूप बना देती है, परमाणुओं का भेदन कर देती है। वही सुयोजन करके मानो वायुमण्डल में गृहों में छा जाती है। और उसके छा जाने पर वायुमण्डल पवित्र बन जाता है।

परन्तु देखो, मेरा अन्तरात्मा प्रसन्न है। हे यजमान! मेरी सदैव यही कामना रहती है कि यजमान का सौभाग्य सदैव अखण्ड बना रहे, इनके सौभाग्य की मैं सदैव कामना करता रहता हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव से भी सदैव यही चाहता हूँ कि वे अपनी सदैव शुद्ध कामना प्रगट करते रहें। विचार विनिमय क्या आज मैं हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य सदैव अखण्ड बना रहे। क्योंकि जिन गृहों में द्रव्य का सदुपयोग होता है जिन गृहों के द्वारा देव पूजा होती है और अग्नि को मुख बना करके अग्नि को देवताओं का दूत बना करके मानो उसमें याग और देखो, उसमें आहूत कर रहा है वह मानव सौभाग्यशाली कहलाता है। संसार में यूँ तो नाना प्रकार के पठन-पाठन अथवा पूजन होते रहते हैं। मुझे स्मरण है कि यहाँ नाना प्रकार के पूजन होते रहते हैं, नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बनी हुई हैं, इन रूढ़ियों में भी पूजन होते रहते हैं। परन्तु ये जो वेद रूपी ज्ञान है, वेद रूपी प्रकाश है, ये मानव के अन्तःकरण को पवित्र बनाता है। प्रत्येक मन्त्र का जो देवता है वह मानो देखो, दूत बन करके अग्नि के समीप आ करके मानव के लिए लाभप्रद है और मानव की मानवीयता का प्रकाश कर देता है।

याग द्वारा विज्ञान का प्रादुर्भाव

विचार क्या-मानो देखो, उसी प्रकार हमारे यहाँ जब वैज्ञानिक तथ्यों में रमण करते हैं। पुरातन काल का जो विज्ञान है उस विज्ञान का प्रारम्भ ही याग से हुआ था। क्योंकि मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव की अनुपम कृपा से नाना प्रकार के वैज्ञानिकों के समीप जा करके, वैज्ञानिकों की यज्ञशालाओं में, विज्ञानशालाओं में विद्यमान हो करके उनको दृष्टिपात किया।

जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव भारद्वाज मुनि का नाम लेकर उच्चारण करते रहते हैं, उनके यहाँ सबसे प्रथम याग को जाना। याग के पश्चात् विज्ञान को जाना। परन्तु देखो, ज्ञान और विज्ञान दोनों एक दूसरे के पूरक कहलाते हैं। एक-दूसरे में विलीन होते हुए दृष्टिपात आते हैं। परन्तु देखो, जब याग होता है तो विज्ञान उसके पश्चात् आता है। क्योंकि सबसे प्रथम याग है उसके पश्चात् देखो, विज्ञान है। सबसे प्रथम देखो, हमारे यहाँ भौतिक विज्ञान है उसके पश्चात् आध्यात्मिक विज्ञान है क्योंकि दोनों विज्ञान एक दूसरे के पूरक कहलाते हैं। हमारे आचार्यों का ये कथन रहा है कि जहाँ से भौतिक विज्ञान समाप्त होता है मानो वहाँ से आध्यात्मिक- वाद का प्रारम्भ होता है। ऐसा हमारे यहाँ माना जाता है क्योंकि विज्ञान केवल हमारे यहाँ तरंगो तक रहता है। जहाँ तरंगो को समेटा जाता है, तरंगो को आदेश दिया जाता है। मानो आत्मा के समीप लाया जाता है। तब प्रकाश को पाने के पश्चात् आत्मा की ज्योति के प्रकाश में जब मानव प्रवेश कर जाता है तो यह अन्तिम छोर का विज्ञान कहलाता है।

वैज्ञानिकों को याग की महता का संज्ञान

परन्तु आज मैं उस सन्बन्ध में विशेष विवेचना नहीं दूँगा। क्योंकि आज मुझे पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ संक्षिप्त परिचय देना है। आधुनिक जगत् में, आधुनिक काल के वैज्ञानिकों के जब देखो, सम्पर्वफ में पहुँचता हूँ तो विचार आता है कि अब से पूर्व किसी काल में देखो, सुगन्धि याग को कोई स्वीकार नहीं कर रहा था। परन्तु इसकी उपेक्षा हो रही थी। लेकिन आधुनिक काल का वैज्ञानिक ये स्वीकार करने लगा है कि गौ घृत के अग्नि में प्रवेश करने से अशुद्ध परमाणुओं को यह शुद्ध परमाणु बना करके जाता है। परन्तु देखो, आधुनिक काल में यह

विचारा जा रहा है कि ये जो प्रदूषण हो रहा है मानो उस प्रदूषण से कहीं वृष्टि हो रही है तो कहीं अनावृष्टि हो रही है। वायुमण्डल में जल का समय होता है तो जल नहीं होता और जब जल नहीं होने का समय होता है तो वहाँ जल उपस्थित हो जाता है। मानो ये प्रदूषण से ही हो रहा है। ये क्यों हो रहा है ?

इसके मूल में दो वाक्य है सर्व प्रथम तो विज्ञान है। क्योंकि विज्ञान प्रदूषण कर रहा है, शोधन नहीं कर रहा है। प्रदूषण करना अत्यन्त सहज है और शोधन करना आश्चर्य जनक है। जब मानव इसके शुद्ध रूप में प्रदूषण ''अव्रणां वृत्यो'' मानो इसके शोधन में लग जाता है, लगा नहीं है लेकिन प्रयास कर रहा है, विचार रहा है। परन्तु एक शब्द तो उन्हें प्राप्त हो गया है कि गौ के घृत में ऐसी विशेषता है कि अग्नि में प्रवेश करने से शुद्ध वायुमण्डल बन जाता है, ऐसा वे विचार रहे हैं।

परन्तु जब वे वैदिक साहित्य की आभा में रमण करने लगेंगे तो विचार आयेगा कि इस महायाग के होने से मानो यह जो शब्द है यह जब अन्तरिक्ष और द्यौ लोक में जाता है तो अशुद्धता को निगलता हुआ शुद्धता का प्रसार करता हुआ चला जाता है। तो इस प्रकार का विज्ञान वैज्ञानिक स्वीकार करने के लिए तत्पर होने जा रहा है। परन्तु देखो तरंगो को तो ये स्वीकार कर ही रहे हैं। विज्ञान को भी स्वीकार करने लगे हैं।

तरंगवाद

हमारे यहाँ तरङ्गवाद का जगत् परम्परागतों से विचित्र माना गया है। एक मानव एक स्थली पर विद्यमान है वह अपने शुद्ध शब्दों से अपने वायुमण्डल को पवित्र बना रहा है। मानो इसके शब्द महागति कर रहे हैं, उसका सूत्र गति कर रहा है, ये जो चित्रण हो रहा है वह भी महानता की ज्योति में रमण कर रहा है।

आधुनिक वैज्ञानिकों की अज्ञानता

परन्तु देखो, आधुनिक काल के वैज्ञानिकों में एक बड़ी मानो धूर्तता आ गयी है कि उन्होंने मानव को त्रास देना प्रारम्भ कर दिया है, मानव को मृत्यु का भय दे रहा है, जो कि वैज्ञानिकों को नहीं देना चाहिए। कुछ ही काल हुआ है वह सूर्य ग्रहण के द्वारा वह भय प्राप्त करा रहा है, यन्त्रों के द्वारा त्रास दे रहा है। मानो यह जो त्रास वैज्ञानिकों के द्वारा चलाया जा रहा है यह मानो अपने में आध्यात्मिकवाद से दूर होता चला जा रहा है। इसलिये वैज्ञानिकों को आत्मा से डर नहीं रहता। जब वैज्ञानिक जन विज्ञान के तत्वाधान में मानो अपनी आततायिता का प्रसार करते हैं, मृत्यु का प्रसार करते है, तो उससे देखो मानव की अन्तरात्मा का मानो ह्रस हो जाता है। अन्तरात्मा के ह्रस होने पर जितना बुद्धिजीवी प्राणी है वह मानो मृत्यु से भयभीत होता हुआ आधुनिक काल का मानव देखो, अपने से दूर होता चला जा रहा है।

मैं भी ये स्वीकार कर रहा हूँ क्योंकि जितना भी शिक्षालयों में प्रवेश करते हैं, तो शिक्षालयों में शिक्षा की जो ये प्रणाली है उस प्रणाली में दूषितपन आ गया है। शिक्षा प्रणाली में जब दूषितपन आ जाता है तो छात्र वर्ग मानो समाप्त हो जाता है। और जहाँ समाज का छात्र वर्ग

समाप्त हो गया, वह उदण्ड बन गया तो वहाँ शिक्षालयों में सदाचार की मान्यता समाप्त हो जाती है।

दूषित चित्रों का प्रभाव

परन्तु देखो, अब मैं इसमें दृष्टिपात कर रहा हूँ, विचारता जा रहा हूँ। अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय देने जा रहा हूँ। और वह परिचय क्या है कि देखो, आधुनिक समाज अपने से दूरी होता चला जा रहा है इसके मूल में कोई वाक्य है तो वह यह है कि विज्ञान का मुझे दुरूपयोग होता हुआ दृष्टिपात आ रहा है। विज्ञान का आधुनिक काल में दुरूपयोग हो रहा है। जिन चित्रावलियों में मेरी पुत्रियों के सदाचार की चर्चाएँ, महापुरुषों के

सदाचार की चर्चाएं और ऋषि-मुनियों के चरित्रों की चर्चाएँ आनी चाहिए थीं वहाँ मेरी पुत्रियों के अश्लील चित्रों का प्रदर्शन हो रहा है। परन्तु इसी से देखो, छात्र वर्गों का, मेरी पुत्रियों का मानो देखो ब्रह्मचर्य दूषित होता जा रहा है। और जब ब्रह्मचर्य दूषित होता जा रहा है तो चरित्र की कल्पना करना मानो एक इकाई में हमें दृष्टिपात हो रही हैं।

परन्तु देखो, इस आभा में मैं अपने पूज्यपाद गुरूदेव को ये परिचय देने जा रहा हूँ कि आज से बहुत पुरातन काल में मानो कई करोड़ों वर्ष पूर्व महर्षि भारद्वाज मुनि ने देखो, जब गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज की अध्यक्षता में एक सभा हुई थी तो उसमें ये वाक्य उन्होंने प्रगट किये थे कि विज्ञान का जब भी दुरूपयोग होगा उसी काल में समाज में देखो, अधिकार की पुकार हो जायेगी और जब अधिकार की पुकार हो जाती है तो वहाँ कर्तव्यवाद की अवहेलना हो जाती है और जहाँ कर्तव्यवाद की अवहेलना हो वहाँ रक्तभरी क्रान्ति के अवशेषों की उत्पति हो जाती है।

इसीलिये देखो, राष्ट्र और समाज में मुझे वर्तमान के काल में रक्तभरी क्रान्ति अवशेष दृष्टिपात आ रहे हैं। लाखो वर्ष पूर्व ऋषि- मुनियों ने अपना वक्तव्य दिया था और ये कहा था कि ये जो विज्ञान है, इस विज्ञान का सदैव सदुपयोग होना चाहिए और विज्ञान का सदुपयोग उस काल में होगा जब राजा ब्रह्मवेता होता है। राजा को ब्रह्म का ज्ञान हो। ब्रह्म क्या है? देखो, जितना साक्षर, बुद्धि जीवी प्राणी हैं, वह ब्रह्म की चर्चा को शिक्षालयों में, चरित्र की चर्चा और देखो जितनी भी चित्रावलियाँ है उनमें ऋषि-मुनियों का चरित्र और मानवीयता होनी चाहिए। जिससे मानो देखो, ये समाज पवित्र बनता चला जाये।

धर्म के नाम पर रूढियाँ

देखो, इसके पश्चात् मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये निर्णय कराते हुए कहा था कि आधुनिक काल में जहाँ आध्यात्मिकवाद का ह्रस हो जाता है उसके मूल में एक वाक्य और भी है कि धर्म के नाम पर जो नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बन रही हैं, ये जो नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं ये समाज के प्राणी को नष्ट करती जा रही हैं। जिसे हम देखो, आध्यात्मिकवाद कहते हैं उस आध्यात्मिकवाद का उसे ज्ञान नहीं है नाना प्रकार की रूढ़ियाँ हैं। गुरुजनों द्वारा गुरुडम की परम्परा बनायी जा रही है। ये दर्शन को जानते नहीं। तो उसका परिणाम यह होता है कि समाज अज्ञानता के क्षेत्र में रमण कर रहा है।

जैसे हमारे यहाँ नाना प्रकार की मान्यता वाले हैं जैसे मुहम्मद को मानने वाले हैं और भी देखो, नाना प्रकार की मान्यताएँ हैं संसार में। जैसे गुरु शिष्य की परम्परा है यह केवल देखो, साम्यवादी लालसा बन जाती है। और साम्यवादी लालसा बन करके समाज में अज्ञानता की प्रतिभा आ जाती है। अज्ञान आ रहा है मैं उसको दृष्टिपात कर रहा हूँ। हे मानव! हे शिक्षकं ब्रहे! ये अज्ञान नहीं आना चाहिए, ज्ञान आना चाहिए। क्योंकि ज्ञान ही प्रकाश है ज्ञान ही मानव को ऊँचा बनाता है।

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कहा था कि महाभारत काल के पश्चात् यह समाज इतनी रूढ़ियों में चला गया है कि ऋषि-मुनियों के नामोकरण के आधार पर उनके तथ्यों की कल्पना करने लगा। जैसे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व ये वाक्य प्रगट कर रहे थे कि भगवान् राम के यहाँ मानो देखो, विश्वामित्र की विज्ञानशाला में उनके यहाँ धनुर्याग में देखो, जब वे पहुँचे तो उन्होंने प्राण सूत्र की चर्चाएँ की, प्राणों की चर्चाएँ की, प्राणायाम की चर्चाएँ की।

रामायणकालीन पुरुषों का वास्तविक स्वरूप

परन्तु देखो, आधुनिक काल ऐसा मानो विचित्र बन गया है कि कागभुषुण्डी ऋषि को कागा पक्षी के नाम से

ज्ञान कर रहा है। ये कैसी धूर्तता इस समाज में आ गयी है। यह कैसा अज्ञान छा गया है। इस अज्ञान के मूल में क्या ? मैं नहीं जानता कि यह अज्ञान कैसे समाप्त हो। परन्तु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में प्रगट कराते हुए कहा था, अभी-अभी विज्ञान की चर्चा चल रही थी, इससे पूर्व शब्दों को सम्पाति, गरुड़ और जामवन्त इन सबके नामों को देखो, पक्षियों के नामों की संज्ञा दी जा रही है, विचारा नहीं जा रहा है।

मानो सम्पाति समुद्र के तट पर राज्य करते थे। रावण ने उनके राज्य को अपने राज्य में विलय कर लिया था और देखो, सम्पाति को बेटा! वहाँ से दूरी कर दिया था। और देखो, जो सुरसा नाम की बेटा! उनके एक वैज्ञानिक थे उनकी कन्या का नाम सुरसा था। सुरसा को वहाँ का अधिराज बनाया गया। वह वहाँ राज करने लगी थी। और सम्पाति को वहाँ से दूरी किया और गरुड़ भी उनके विधाता थे। वह चन्द्रमा की यात्रा में, यात्री बन गये थे। सूर्य की किरणों के साथ अपने यान को ले जाते थे और अपने यान को गति कराते रहते थे।

रूढ़ियों से धर्म परम्परा का ह्रस

परन्तु देखो, आधुनिक काल का भोला प्राणी यह कहता है कि ये सब पक्षी कहलाते हैं। मानो ये पक्षी कैसे कहलाते हैं। जब उनके यहाँ विज्ञान है, राष्ट्रीयता है, मानवता है। परन्तु देखो, यह समाज महाभारत काल के पश्चात् कितना रूढ़ियों में चला गया है। मैं प्रभु से यह प्रार्थना करता रहता हूँ। हे देव! तेरे राष्ट्र में यह क्या हो रहा है। हे प्रभु! तू इस समाज को सद्बुद्धि देकर, इसकी रूढ़ियों को समाप्त कर। यदि ये रूढ़ियाँ ज्यों की त्यों बनी रहीं तो धर्म का मर्म मानो धर्म की परम्परा समाप्त होती चली जायेगी। क्योंकि राजा का राष्ट्र पवित्र होना चाहिए। राजा, आचार्य ब्रह्मवेता होने चाहिए। मानो वेद ध्वनि का प्रचार होना चाहिए। जिसके साथ शिक्षा का प्रचार हो जायेगा। ऐसी रूढ़ियाँ हुई हैं। अहा-ऐसी रूढ़ियाँ जो मानव-मानव में रूढ़ि प्रणीत हो रही है वे रूढ़ियाँ ही समाज का, राष्ट्र का विनाश कर रही हैं। आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव का ज्यादा समय नहीं लेना चाहता हूँ।

विचार क्या है कि हमें विचारना है कि हम किसी भी साहित्य को ले करके उसके प्रसिद्ध रूप को हम जानते चले जाए। इसकी मानो रूढ़िता को समाप्त करते चले जायें। राजा के राष्ट्र में जब रूढ़ि आ जाती है तो राजा का राष्ट्र रूढ़ियों में परिणत हो जाता है, रूढ़ियों में विभक्त हो जाता है। और रूढ़ियों में विभक्त हो करके ही देखो, राजा का राष्ट्र नष्ट हो जाता है।

परन्तु देखो मै जो ये दृष्टिपात कर रहा हूँ, कि आधुनिक काल में राष्ट्र समाज की जो कृतियाँ रमण कर रही है ये देखो, केवल रूढ़ियों के कारण है। ये धर्म के नाम पर नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बनी हुई हैं। मानो वैदिकता पर विचार न करके, गलतियों पर विचार न करके देखो, यह अपने में अपने मन को न जान करके रूढ़ि बन करके राजा के राष्ट्र में नाना प्रकार की रक्त प्रविष्ट यों का जन्म हो रहा है। परन्तु यह नहीं होना चाहिए।

मेरे भोले प्राणियों! इन नाना प्रकार की रूढ़ियों को नष्ट करना चाहिए मैंने बहुत पुरातन काल में ये कहा था ''ब्रह्मे सुताः'' क्योंकि प्रभु का प्रकाश आते ही यह मानव अपने में महान बन जाता है। परमात्मा के अनुसार बन जाता है। ये अनुचरों की प्रविष्ट यॉं समाज में नहीं रहनी चाहिए जब तक समतुल्य मानो ये प्रविष्ट यॉं बनी रहेंगी, तो मुनिवरो! समाज ऊँचा कदापि नहीं बनेगा। न धर्म को जान सकेगा।

धर्म का स्वरूप

विचार आता है कि धर्म किसे कहते है? प्रत्येक मानव इस पिपासा में लगा रहता है कि धर्म क्या है? धर्म उसे कहते है जिसमें अन्तरात्मा की जो प्रतिभा है आत्मा की जो प्रतिभा है, उसको जानना, उसके अनुकूल कर्म करना ही उसका धर्म कहलाता है। विचार आता है कि बाह्य जगत् में जैसे याग करना है, वैदिकता मानो वेद मन्त्रों

की ध्वनि में और उसमें जो ज्ञान है, विज्ञान है उससे अपना साक्षात्कार लाना, अपने जीवन में उसे धारण करना है। बेटा! परमपिता परमात्मा को एक-एक कण-कण में स्वीकार करते हुए मुनिवरो! देखो, अपने में धारण करता है। मुनिवरो! देखो, वह धर्म के मर्म को जानता है।

आओ, देखो, पूज्यपाद गुरुदेव को मैंने ये सूक्ष्म परिचय कराया है। ये सूक्ष्म परिचय क्या है? कि वैज्ञानिकों को समाज को त्रास नहीं देना चाहिए। और विज्ञान में विज्ञान का सदुपयोग होना चाहिए। इसीलिये राजा को पवित्र होना चाहिए। नाना प्रकार की रूढ़ियाँ नहीं होनी चाहिए। इसीलिये राजा को ब्रह्मवेता होना चाहिए। जिससे वह ब्रह्म को जान सके, रूढ़ियों का निराकरण कर सके।

समाज की एक सूत्रता का आधार

हमारे यहाँ पुरातन काल में राजा देखो, समाज की रूढ़ियों को मुक्त करते रहते थे। सबसे प्रथम मानव संस्कृति का प्रसार वेदों की ध्वनियाँ उनके राष्ट्र में होती थीं, विद्यालयों में होतीं, विद्यालयों में ही देखो, आचार्यों के द्वारा समाज में, विद्यार्थी जीवन में वर्ण व्यवस्था का निर्माण होता था। जब तक वर्ण व्यवस्था का निर्माण विद्यालयों में नहीं होगा, राजा उसे स्वीकार नहीं करेगाँ तो समाज देखो, एक सूत्र में नहीं आयेगा।

आज का विचार मैं देने जा रहा हूँ कि परम्परागतों से ही भगवान् राम के काल में भी प्रायः ऐसा रहा है। रावण के राष्ट्र में भी विद्यालयों में निर्वाचन होता रहा है। परन्तु वह भी काल आया कि रावण का जो दुर्भाग्य आया, दूसरों पर अधिकार करने लगा जिससे लध का विनाश हो गया।

विद्यालयों में निर्वाचन

परन्तु इतना ही नहीं देखो, महाराजा अश्वपति के यहाँ विद्यालयों में निर्वाचन होता रहा है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहे हैं। परन्तु देखो, उनको वर्ण व्यवस्था में निर्माणित करने वाला विद्यालय में आचार्य है। आचार्य उनके मस्तिष्कों का अध्ययन करके, उनका क्रियाकलाप जिस प्रकार का होता वैसा ही निर्धारित करके मानो उनकी वर्ण व्यवस्था का निर्माण कर देते और जब उनका निर्माण इस प्रकार का होता तो राजा उसे स्वीकार करता है। राष्ट्र में पद्धति इसी प्रकार की होनी चाहिए।

आज का यह हमारा विचार क्या। कि इस समाज को ऊँचा बनाने के लिये यह प्रेरणा हमें प्राप्त हुई। वेद का मन्त्र कहता है, वेद से प्रेरणा प्राप्त होती है। पूज्यपाद गुरुदेव हमें नाना प्रकार की आध्यात्मिक विवेचना देते रहते हैं। इसलिये आज का ये वाक्य समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! ये आधुनिक काल का जो ये जगत् है, ये वर्तमान का जो काल है ये इस प्रकार का चल रहा है, जो मैंने सूक्ष्म से आपको विचार दिये परन्तु देखो, ये प्रभु से प्रार्थना है कि हे परमपिता परमात्मा! समाज को सद्बुद्धि दो। इसे देखो, हम अपनी आभा में ही समाज को दृष्टिपात करने वाले बनें। ऐसी मेरी प्रेरणा रहती है। ऐसा मेरा सदैव मन्तव्य है।

मैं पुनः उसी क्षेत्र में हे यजमान! तेरा सौभाग्य अखण्ड बना रहे। वे घर सौभाग्य शाली है जिन घरों में देखो, द्रव्यों का सदुपयोग होता है। इन्हीं वाक्यों के साथ अब मैं अपने वाक्यों को विराम दे रहा हूँ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हूँ।

मानव की चार संज्ञायें

पूज्यपाद गुरुदेव मेरे प्यारे! ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने बहुत ऊर्ध्वा में विचार दिये। जिस काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ राष्ट्रीय प्रणाली बनायी गयी क्योंकि समाज को जो ऊँचा बनाता है तो वह

राष्ट्र ही बनाता है। क्योंकि राजा स्वयम् ब्रह्मवेता, ब्रह्मयुक्त है। मुनिवरो! देखो प्रायः मानव की चार संज्ञा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कहलाती हैं। इन चारों संज्ञाओं का जो निर्माण है, निर्वाचन है ये विद्यालय में होता है। आचार्य ब्रह्मचारी का अध्ययन मात्र से ही उसकी वर्ण व्यवस्था का निर्माण कर देता है। ये प्रायः बेटा! होता रहा है। विद्यालय में बहुत अध्ययन कार्य करने का सौभाग्य मिला। परन्तु प्रायः ऐसा रहा है। और ऐसा जब तक राष्ट्र में नहीं होगा राजाओं के राष्ट्र की प्रणालियों मानो राष्ट्र में, विद्यालय में ब्रह्मचारी मानो देखो, आचार्यों के समीप विद्यमान होकर के ब्रह्म विद्या का अध्ययन नहीं करेंगे, तब तक समाज में रूढ़ियाँ बनी रहेंगी। क्योंकि ब्रह्म का अध्ययन किये बिना आत्मा की चर्चा करना, आत्मा-ज्ञान देना क्योंकि जहाँ लोग भौतिक विज्ञान और ज्ञान देते है वहाँ आध्यात्मिक विज्ञान भी देना चाहिए। क्योंकि विद्यालय का जो प्राण होता है वह ब्रह्मचारी होता है। देखो, ब्रह्मचारी आध्यात्मिकवाद के लिये अपने को स्वीकार करता है तो वह अपने में महान बनता है। परन्तु देखो, विद्यालय में ब्रह्मचर्य व्रत से ज्ञान और विज्ञान में गुँथ जाता है तो वह अपने में महान बन करके, ज्ञानी बनकर के परमात्मा के समीप जाने का प्रयास करता है। ज्ञान कहाँ प्राप्त होता है?

तप में जीवन

बेटा! देखो, ज्ञान विद्यालय में प्राप्त होता है, तपोनिष् आचार्यों के द्वारा जैसे याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के यहाँ बेटा! हमने दृष्टिपात किया। वहाँ विद्यालय में अध्ययन करते थे तो वहाँ उन्होंने एक-एक परमाणु के ऊपर, नाना प्रकार के अणुओं की चर्चाएँ होती रहती थीं। तथा यन्त्रों से परमाणुओं का मिलान किया जाता था वहाँ मानो आत्मा की चर्चा की कि हे ब्रह्मचारी! तपने वाले बनो, तपस्वी बनो। सूर्य तप रहा है तो प्रकाश हो रहा हैं चन्द्रमा तप रहा है, तो कान्ति दे रहा हैं पृथ्वी तप रही है तो मानो नाना प्रकार के पदार्थों को जन्म दे रही है। ब्रह्मचारी विद्यालय में तप रहा है तो आचार्य बन रहा है। माता तप रही है तो मातृत्व को प्राप्त हो रही है। ब्रह्मचारी जब तपता है तो ब्रह्मवर्चोसि बन करके परमात्मा को प्राप्त होता है। ब्रह्म की चरी को जानना हीं ब्रह्म की चरी क्या है? ब्रह्म नाम परमात्मा का है और चरी कहते है प्रकृति कों दोनों को जानना ही इस सृष्टि का चक्र जानना है और दोनों में गुँथा हुआ ब्रह्म कहलाता है। परन्तु चरी में पिरोया हुआ होने से देखो, माला बन करके ये ब्रह्मवेता बनने के लिये तत्पर हो जाता है। तो यही शिक्षा हमारे विद्यालयों में और आध्यात्मिकवाद और देखो, भौतिकवाद दोनों प्रकार की उड़ाने उड़नें वाला ब्रह्मचारी परम्परागतों से मुनिवरो! देखो, इस समाज में, परमात्मा के राष्ट्र में रहा है और रहना चाहिए। क्योंकि समाज को ऊँचा बनाना है। कहीं-कहीं तो इस प्रकार की आख्यायिका प्राप्त होती है, वैदिक साहित्य में कि जब मानव अपने कर्तव्य का पालन कर रहा है तो वहाँ राष्ट्र की अवहेलना हो जाती है तो राष्ट्र भी सुखी नहीं रह पाता।

परन्तु इस प्रकार का ज्ञान समाज में होना चाहिए। जिससे राष्ट्र में, ब्रह्मचारी जन, तपस्वी जन, राष्ट्र की अवेहलना करने वाले न हों। राष्ट्र को अपने में कुछ यूँ स्वीकार करते हों जैसे यह अपना शरीर है। इसके ऊपर उनका पूर्ण अनुशासन होना चाहिए।

तो इस प्रकार का ज्ञान विज्ञान हमारे यहाँ वैदिक साहित्य से प्राप्त होता रहता है। आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने अपने शब्द बहुत प्रियता में प्रगट किये हैं। आज का वाक्य अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय ये है कि मानव अपने को सौभाग्यशाली, महान बनाता हुआ एक दूसरे की प्रतिभा और एक दूसरे में ज्ञान और विज्ञान की चर्चा करना, ये मानव का कर्तव्य है। आज का वाक् अब समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन।

ओ३म् देवं रथाः आभ्यां वृहश्च मां रतम्। मा नाहं त्वाः ऋषिः आप्यां लोकं सर्वाः॥ ओ३म्, रथश्चाहं मधुर्वरुण प्राहम्,आ पा ऋषिः गायन्त्वा मानं।देवाः रथिश्च मां ब्रह्मणां वाः गायन्त्वाः॥ ओ३म् दधि रथश्चाः माः गच्छं रथम्। द्यौ वरुणं प्रा गृही मही॥ दिनांक, 15.5.83,कासिमपुर खेड़ी, बागपत

९ आहार शुद्धता की प्रभा ३१ ०३ १९८५

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही वेद वाणी का प्रसारण हो रहा था। जिस पवित्र वेद वाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुण गान गाया जा रहा था। क्योंकि उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जा रहा था। क्योंकि वह जो मेरा स्वरुप है परम देव है। वह आनन्दवत है। वह सर्वोपरि कहलाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा यज्ञमयी है जितना भी संसार का महान-सुकर्म है। मानो वह उस का आयतन माना गया है। वह उसमें निहित रहता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा विज्ञानमयी स्वरुप माने गये हैं क्योंकि विज्ञान ही उनका आयतन माना गया है।

अनुष्ठान में जीवन

आज का हमारा वेद मन्त्र जहाँ परमपिता परमात्मा को कहता है, यह उद्घोष कर रहा है कि परमपिता परमात्मा प्रजापति है और प्रजा का स्वामित्व करने वाले हैं क्योंकि वह जो यज्ञोसि परमपिता परमात्मा है वही संसार का नियमन कर रहे है। यह संसार का नियमबद्ध है, अपने में क्रियाशील है परन्तु ज्ञान से शून्य है। केवल सप्रिधान मात्र से क्रिया कलाप हो रहा है। तो हमें यह विचारना है कि हम अपने देव को किस रुप में स्वीकार करें, जिससे हमारा मानवत्व ऊँचा बने, मानवीय दर्शन अपने में अपनेवत को प्राप्त होते रहें। आज का हमारा वेद मन्त्र यज्ञोसि कह रहा है और उद्घोष कर रहा है कि हम याज्ञिक बनकर के अपने प्रभु का गुण गान गाते रहें, अपने में अनुषन करते रहें। क्योंकि अनुषन ही हमारा जीवन है।

तो हमारा वेद मन्त्र यह कह रहा है कि यहाँ प्रत्येक मानव प्रत्येक प्राणीमात्र मानो यह ध्वनित हो रहा है, अपने में ध्वनि कर रहा है। मेरे प्यारे! जब साधक उसके गर्भ में जाना चाहता है तो वह अपने में ध्वनित होता रहा है चाहे वह प्राण के द्वारा हो चाहे मनस्तव, प्राणस्तव को एकाग्र में, एक सूत्र में पिरोने वाला हो। परन्तु वह साधक अपने में ध्वनित होता हुआ, अपने आनन्दमयी रूपों को जानता रहता है।

परमात्मा का शिवमयी रूप

जैसा मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था कि नटवर ने बेटा! महाराजा शिव ने परमपिता परमात्मा का जो शिवोमयी रूप है, तो जब वह बेटा! सृष्टि का सर्जन करता है। तो मानो वह अपने में नृत्य करता है तो नृत्य करके उसमें ध्वनि उत्पन्न होती है और सर्वत्र ब्रह्माण्ड उसी में ध्वनित हो जाता है। मानों अपने में कटिबद्ध हो जाता है। जब वह कटिबद्ध हो जाता है तो संसार में मानो देखो, नटवर अपना एक नृत्य करता है। जब नृत्य होता है तो मानो देखो, नृत्य होते होते ये जो प्रकृति है ये अपने में गतिशील हो जाती है। भिन्न-भिन्न रूपों में नृत्य हो रहा है प्रकृति एक दूसरे में आभायित हो करके मानो देखो, यह परमात्मा का अनुपम बेटा! हमें यह जगत् दृष्टिपात हो रहा है। हम केसी आभा में अपने को ले जाना चाहते है। परन्तु देखो, सृष्टि के प्रारम्भ में सृष्टि के रचयिता ने देखो, शिव बन करके नृत्य किया था। किसी काल में जब वह नृत्य हो रहा था उसी नृत्य में देखो, बेटा! हम नृत्यित हो करके अपने प्रभु की महिमा को अपने में रत करके माँ सती और पार्वती बन करके मानो वह नृत्य हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा

था कि संसार जब अपने में संसार की आभाओं में रत हो जाता है तो अपने में अपनेपन को ही दृष्टिपात

करता है वह अपने में ध्वनित होता है, अपने प्रभु को अपने में ध्वनित होता हुआ दृष्टिपात करता है। तो मेरे प्यारे! देखो, ये मानो यज्ञ बन करके और व्यापक वाद में परिणत होकर के, स्वाहाः कह करके बेटा! अपनी आभा में रत हो जाता है।

देवासुर संग्राम

तो आज मैं विशेष विवेचना तो देने नहीं आया हुआ हूँ क्योंकि आज मेरे प्यारे महानन्दजी भी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे। आज का हमारा वाक् ये क्या कह रहा है कि साधक अपनी साधना में परिणत होता है तो उसी में से बेटा! अपने में ध्वनित होता रहता है। नाना प्रकार के शब्दों की ध्वनियाँ रहती हैं। परमाणु आन्तरिक जगत् में बेटा! देखो, संघर्ष करते रहते हैं और वहीं देवासुर संग्राम होता रहता है। उस देवासुर सघग्राम के लिये साधक अपनी साधना में रत हो करके मानो वे जो ध्वनियाँ आ रही हैं वह जो एक नृत्य हो रहा है उस नृत्य को अपने में धारण कर लेता है। तो आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेगें।

पूज्य महानन्द जी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! भद्र समाज। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी उस गम्भीर, मुद्रा में मुद्रित हो रहे थे। क्योंकि ये जो ध्वनियों का सन्बन्ध है। यह हमारे यहाँ परम्परागतों से ही ऋषि मुनियों ने अपने में ध्वनित हो करके और इस ब्रह्माण्ड को अपने में दृष्टिपात किया जैसा मेरे पुज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी प्रकट किया। क्योंकि इनका जो मनस्तव है वह बड़ा गम्भीर रहता है हम इनके वाक्यों को परम्परागतों से श्रवण करते रहे हैं। परन्तु वह इतनी गम्भीर मुद्रा में ले जाते हैं। जहाँ मानव अपनेपन की आभा को समाप्त कर देता है। प्रत्येक शब्द और परमाणु भी अपने में ध्वनित हो रहा है। पूज्यपाद गुरुदेव का ये वाक् है कि एक-एक परमाणु अपने में ध्वनित हो रहा है मानव जैसे यजमान यज्ञशाला में विद्यमान होकर के स्वाहा कहता है तो उसका अपने में ध्वनित होता हुआ और जहाँ तक वो परमाणुवाद जाता है वहाँ तक ध्वनित होता चला जाता है।

परन्तु आज मेरा वक्तव्य केवल ये नहीं है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ परिचय कराने के लिये आया हूँ और वह परिचय ये है कि जहाँ ये हमारी आकाशवाणी जा रही है वहाँ याग की रचना हुई। मैं जब यज्ञों को दृष्टिपात करता हूँ तो मेरा अन्तर्हृदय, अन्तरात्मा गद्-गद् हो जाता है। मैं यह कहा करता हूँ कि हे परमपिता परमात्मन तेरी महानता एक विचित्र है। परन्तु देखो, मानव के संस्कारों को तू कहाँ जाकर के उद्बुद्ध करता रहता है। मेरा तो सदैव यजमान के साथ विचार कटिबद्ध रहता है। हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे मानो जिस गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है उस गृह में परम्परागतों से ही स्वर्ग की कल्पना की जाती है। और द्रव्य की आभा में रत होता हुआ मानव मानो उसका सदुपयोग करता है। याग जैसा भव्य कर्म हमारे यहाँ परम्परागतों से ही विचित्र माना गया है। आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व काल में राम की चर्चा कर रहे थे। भगवान् राम की चर्चा करते इन्होंने कहा कि वह बाल्यकाल में शारीरिक विद्या में रत रहते थे। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे यह वर्णन कराया, इनका परिचय देते हुए कहा कि वे जब वशिष्ठ मुनि के आश्रम में अध्ययन करते थे तो उस समय उन्हें विष्णु की विवेचना मानव का बाह्य जगत् आन्तरिक जगत मानो दोनों में वे कुशल हो गये। जब कुशलता को प्राप्त हो गये, लेकिन राष्ट्रीयता में उनकी कोई निष नहीं थी। बाल्यकाल में भी राष्ट्रीयवाद की कोई निष नहीं थी जिसे अपने में स्वीकार करते थे। जब हम अपनी अन्तरात्मा अपनी इन्द्रियों पर संयम कर लेते हैं तो अपने में देखो, उस मानव के द्वारा राष्ट्र का अपना कोई अस्तित्व नहीं रहता। क्योंकि राष्ट्र की सीमा वहाँ तक रहती है जहाँ तक मानव अपने को अनुशासन में लेता हुआ, प्रजा को अनुशासन में लाता है।

राष्ट्र की भव्यता का आधार

मुझे स्मरण आता रहता है पूज्यपाद गुरुदेव ने भी मुझे वर्णन कराया कि भगवान् राम ने भी यह घोषणा कर दी थी कि प्रत्येक गृह में याग होना चाहिए। प्रत्येक गृह में जब याज्ञिक प्राणी होंगे तो राष्ट्र में रूढ़ि नहीं पनपेगी और जब राष्ट्र में रुढ़ि नहीं पनपेगी तो राष्ट्र वास्तव में भव्य बना रहेगा।

राम राज्य

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराया कि आधुनिक काल में राम राज्य की घोषणा तो हो रही है परन्तु ये नहीं विचारते कि राम आहार क्या करते थे। देखो, राम-राम कह रहा है परन्तु उनका बाहर केसा असभ्य है, केसा अशुद्ध है। जिससे मानो देखो, राम की प्रतिभा समाप्त हो जाती है। विचार आता रहता है राम जब चौदह वर्ष वन में रहे तो वनों के कन्दमूलों का आहार करते थे। परन्तु जब अयोध्या में आ गये। राष्ट्रपिता बन गये तो उस समय वे मानों प्रातः कालीन याग किये बिना आहार नहीं लेते थे। वह भी आहार केसा था कि वे अन्न को लेकर उसे जल में मानो विष्ट करके और उसका दुग्ध बनाकर के और उसे गोघृत के साथ में तपाकर के उसका पान करते थे और राष्ट्र का क्रिया कलाप करते थे।

आधुनिक क्रिया कलाप

आधुनिककाल का राष्ट्र प्रातःकाल जब तक पाँच, दस जीवों का आहार नहीं कर लेता तब तक राष्ट्र की उसे इच्छा नहीं होती। परन्तु इतना अन्तर्द्वन्द राम के जीवन में और आधुनिक काल के राष्ट्र नेताओं में मानो मुझे दृष्टिपात आता है। दूसरों के गर्भों को पान करने वाला यह कहता है कि मैं राष्ट्र को ऊँचा बनाऊँ, तो ये मुझे असम्भव प्रतीत होता है।

पवित्र आहार का प्रभाव

मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव से ये वाक्य निर्णय भी कराया है परन्तु मैं जब राम के जीवन को लेता हूँ। मुझे स्मरण है, मेरे पूज्यपाद जब अध्ययन करते थे तो मेरे पूज्यपाद समय-समय पर अयोध्या में जाते रहते थे। देखो, संकेत करते रहते आहार का कितना विशुद्ध है स्वरूप, उनके समीप रहता था। मानो देखो, राष्ट्र वह होता है, जिसका आहार पवित्र होता है, साधक वह होता है जिसका आहार पवित्र होता है, मानो साधु वह होता है जिसका आहार पवित्र होता है। जब आहार पवित्र होगा तो उसका व्यवहार स्वतः पवित्र होगा। राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा तब बना सकता है। जब राजा का आहार, व्यवहार पवित्र होगा तो प्रजा स्वतः व्यवहारिक बन जाती है। प्रजा उसके अनुसार वरतने लगती है।

अनुशासन के लिए राष्ट्र निर्वाचन

इसी प्रकार मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में कहा है कि किसी भी काल में राष्ट्र का जो निर्वाचन हुआ उसे भगवान् मनु ने किया। इसलिये कि प्रजा अनुशासन हीनता में न आ जाये। अनुशासन के लिए राष्ट्र का निर्वाचन होता है। और जब राजा स्वतः अनुशासन हीनता करेगा तो प्रजा कहाँ से अनुशासित हो सकती है। परन्तु देखो, मैंने आज अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये वाक् प्रकट कराना है कि आधुनिक जगत् और वर्तमान का काल कितना विचित्र रहा है। भगवान् राम महर्षि वशिष् मुनि महाराज के आश्रम में अध्ययन करते थे, तो उनका आहार यही रहता था। कि प्रातः कनक को लेकर के वे जल में वरुत करते हुए उसका प्रातः खरल किया जाता और खरल करके उसको गोघृत के द्वारा उसे पान कराया जाता। क्योंकि बुद्धि निर्मल रहती है। देखो, शरीर

में निर्मलता होती है, उतेजना की प्रतिभा का जन्म नहीं होता है। तो इसीलिये देखो, यहाँ आहार और व्यवहार जब पवित्र होगा तो व्यवहार भी पवित्र होगा। परन्तु आज मैं विशेष चर्चा नहीं दूँगा। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन करा रहा हूँ कि मैं भगवान् राम की चर्चाओं में चला जा रहा हूँ। भगवान राम ने देखो, अयोध्या को विजय कर लिया। विजय करने के पश्चात् देखो, अयोध्या अपने में अजय थी, अपने में विजय थी। क्योंकि ये जो शरीर रूपी अयोध्या है इसको राम नित्य प्रति देखो अजय बनाते रहते थे। वे अजय करते रहते थे ब्रह्मवर्चोसि का पालन करते रहते, वेदों का अध्ययन और याग का चलन करते रहते। प्रातः कालीन चारों विधाता, वशिष्ठ मुनि विद्यमान होकर के देखो, प्रातः कालीन याग करते। यागों में उपदेश मंजरी का उपदेश प्रारम्भ होता और उपदेश मंजरी जब प्रारम्भ होती तो वह यह कहा करते कि राष्ट्र में सुगन्धि होनी चाहिए, दुर्गन्ध नहीं होनी चाहिए।

सुगन्ध का अभिप्राय

मानो सुगन्ध क्या है? तो उन्होंने कहा की सुगन्ध है प्रत्येक ग्रह में जब याग होता है। मानो पुत्र अपने में ऋणी हो जाता है, माता पिता के ऋण से उऋण होना पितरों के ऋणों से उऋण होना। 'अप्रतं भविता ब्रह्म वाचाः' भगवान् राम ये कहा करते थे कि हे पुत्रो! तुम मेरे इस वाक्य को स्वीकार करो कि 'मङ्गलं ब्रीही वाचाः' हमारा राष्ट्र, समाज मङ्गलमय रहना चाहिए। मानो देखो, मङ्गलमय उस काल में रहेगा जब राष्ट्र के प्रत्येक ग्रह में देखो, राजा क्या, प्रजा क्या जब सब ऋणों से उऋण हो जायेंगे। ऋणों से उऋण होने के लिये राष्ट्र का निर्माण होता है ऋण कौन-से होते है मानो पुत्र पर माता-पिता का ऋण है पितरों में कौन-कौन आते है? आचार्यजन है, पितृजन हैं, देव जन है परम पिता परमात्मा आते हैं। वह जो परमपिता परमात्मा ''जन्म ब्रहे'' ऋणों से उऋण होने के लिये प्रातः कालीन प्रत्येक गृह में देखो, जब गृहपथ्य अग्नि प्रचण्ड हो जाती है, माता-पिता जब अपने गृह को पवित्र बनाते हैं तो मानो देखो, सब उनका अनुसरण करते हैं। समाज उसका अनुसरण करता रहता है। इसके पश्चात् वह मानो अध्ययन करते हैं।

शुद्धिकरण की अनिवार्यता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व काल में अध्ययन की चर्चा कर रहे थे। ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहा है, विद्यालय में अपने मानव दर्शन को ऊँचा बना रहा है। और देखो गृह में दर्शनों का अध्ययन हो रहा है। जब इस प्रकार का अध्ययन ब्रह्मवर्चोसि अपने को धारणा विष्ट यों में बना

हुआ है, तो मानो देखो, वह ब्रह्मचारी अपने में पवित्र होता हुआ, अपने आत्मबल को ऊँचा बनाता हुआ वह प्रायः ऋणों से उऋण हो रहा है। देव ऋणों से उऋण हो रहा है। याग कर रहा है, सुगन्धि दे रहा है। शब्द मार्मिक है, दर्शनों से गुथे हुए हैं। वेद मन्त्रों में लिपट कर जो शब्द अन्तरिक्ष में जाता है वह शब्द देखो, शुद्धि करण करता हुआ, चला जाता है। हमारे यहाँ वेदों का अध्ययन करने से ये प्रतीत होता है कि शुद्धि करण होना बहुत अनिवार्य है।

याज्ञिक भगवान् राम

तो इन ऋणों से उऋण होना ही हमारा कर्तव्य है। तो इसीलिए भगवान् राम प्रातः कालीन जब याग करते, तो ये उपदेश देते रहते। प्रत्येक गृह में यागों की घोषणा करते रहते। भगवान् राम स्वतः अपने राष्ट्र में भ्रमण करते। भ्रमण करते तो कोई रक्षक उनके समीप नहीं था। क्योंकि जो मानव ज्ञानी होता है, ब्रह्मज्ञान में रत रहता है उसका संसार में कोई शत्रु स्वीकार नहीं करता। क्योंकि प्रजा वहाँ अजय रहती है, प्रजा में सुखद रहता है। जब प्रजा में सुखद रहता है तो उस मानव को अस्त्रों से कौन नष्ट कर सकता है?

तो इसीलिये भगवान् राम का जीवन, जब मेरे पूज्यपाद गुरुदेव समय-समय पर दृष्टिपात कराते रहते थे। उनके जीवन में एक महानता की प्रतिभा थी, उनके पूर्वज भी इसी प्रकार का क्रिया कलाप करते रहे। महाराजा अज भी इसी प्रकार भ्रमण करते रहते थे। महाराजा दिलीप ने तो नन्दनी के पीछे देखो, अपने बारह वर्ष व्यतीत कर दिये थे। और ब्रह्म का चिन्तन करते हुए, ब्रह्म ज्ञान को लाते हुए अपने में महान बनने की वह कल्पना करते रहते थे।

विज्ञान की महानता

तो इस प्रकार आज मैं विशेष विवेचना नहीं पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन करा रहा हूँ कि जहाँ इस प्रकार के यांत्रिक क्रिया कलाप होते हो, वहाँ का विज्ञान भी ऊँचा होता है अयोध्या में विज्ञान महानता में रत रहता था क्योंकि भारद्वाज मुनि महाराज इनके यहाँ आकर के देखो, नाना प्रकार के विज्ञान की प्रतिभा में रत रहते और देखो, महाराजा विश्वामित्र महान वैज्ञानिक थे। उन्होंने धनुर्याग किया था। वे धुनर्यागी थे। संसार में जितना भी इस प्रकार की रचना, क्रियाकलाप है वह सर्वत्र एक यागों में परिणत रहीं है, वह यागो में निहित रही है।

दूषित वायुमण्डल से रावण का विनाश

आज मैं देखो, वर्तमान के काल को ले जाता हुआ देखो, वर्तमान का विज्ञान अपने में ये कहता है कि मानव को अपने में आत्मवत रहना चाहिए। आधुनिक काल का जो विज्ञान अब पनप रहा है मैं इस विज्ञान का द्रोही नहीं हूँ। न इसका विरोध करने के लिये आया हूँ। केवल मेरा तो एक ही मन्तव्य रहता है मैं पूज्यपाद गुरुदेव को वर्णन कराता रहता हूँ, कि भारद्वाज मुनि के यहाँ विज्ञान पनपा, राम-रावण के राष्ट्र में

विज्ञान पनपा। रावण के राष्ट्र में दूषित वायु मण्डल बना और उस दूषित वायु मण्डल का यह परिणाम बना की रावण का विनाश हो गया था।

परन्तु देखो, विज्ञान के दुरुपयोग की प्रतिभा है। जब मानव के, राजा के राष्ट्र में विज्ञान का दुरुपयोग होगा तो दुरुपयोग होने से देखो, विज्ञान ही विज्ञान की प्रतिभा को नष्ट कर सकता है।

भस्मासुर के विनाश का अलंकार

जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया था। एक समय महाराजा शिव हिमालय में रहते थे। एक बार देखो, महाराजा भस्मासुर उनके द्वार पर पहुँचे। महाराजा भस्मासुर ने कहा-कि प्रभु! मैं ये चाहता हूँ कि जिसके सिर के ऊपर मेरा भुज जाये, सिर के, मस्तिष्क के ऊपर वो भस्म हो जाये। उच्चारण करते ही महाराजा शिव ने कहा "बहुत प्रिय" मानो देखो, एक कृति प्रदान की गयी। तो महाराज शिव के यहाँ नृत्य होता रहा है। एक समय भस्मासुर देखो, माता पार्वती पर किसी कारण से मोह की प्रतिभा में जागरुक हो गये। जब मोह की प्रतिभा जागरूक हो गयी, तो उन्होंने ये विचारा कि मैं शिव को भस्म करूँ। जिससे पार्वती को अपनाने की मेरी प्रविष्ट बन जाये। मानो वह मुझे प्राप्त हो जाये। ऐसी उन्होंने धारणा बनायी। तो उन्होंने कहा कि भगवन्! या तो मुझे पार्वती प्रदान कीजिए अन्यथा मैं आपको भस्म करूँगा। तो उस समय देखो, जब यह वाक्य आया तो शिव ने विचारा, कि मैं क्या करूँ।

विज्ञान के दुरुपयोग से विनाश

महाराजा शिव भ्रमण करते हुए मानो देखो, भगवान विष्णु के द्वार पर पहुँचे। एक-एक अलधरिक रूपों में रत रहने वाला शब्द है मानो देखो, जब वह विष्णु के द्वार पर पहुँचे तो उन्होंने कहा-चलो, इसकी युक्ति ब्रह्माजी

उच्चारण करेंगे। वे ब्रह्माजी के द्वार पर पहुँचे। तो ब्रह्मा जी ने कहा कि महाराज! वह अपने में ही भस्म हो जायेगा। पार्वती और उनका दोनों का नृत्य कराओ और नृत्य में उसका भुज स्वतः ही मस्तिष्क के ऊपर जायेगा तो वह नष्ट हो जायेगा।

आधुनिक विज्ञान का भस्मासुर स्वरूप

मानो देखो, इस प्रकार की युक्ति उन्होंने प्रगट की। वे युक्तियाँ लेकर के मुनिवरो! देखो, मेरे पूज्यपाद गुरु देव ने मुझे वर्णन कराया कि जब मानो वह 'भ्रमणं प्रहे' दोनों का नृत्य होने लगा। दोनों का नृत्य हुआ तो जहाँ जहाँ पार्वती का भुज जाता वहीं भस्मासुर का जाता तो स्वतः उसने भुजों की प्रतिभा इसी प्रकार की जिससे वह स्वतः नष्ट हो गया।

तो यही आधुनिक काल की देखो, परम्परा है जब विज्ञान पनपता है तो विज्ञान एक भस्मासुर की भाँति रहता है। ये जो विज्ञान है ये भस्मासुर की भाँति रहता है। जैसे देखो, अपने में ही निर्माण करता, अपने में ही वह नष्ट हो जाता है। इसी प्रकार देखो, आधुनिक काल का जो विज्ञान है अथवा विज्ञानवेता है उसका देखो, ये भस्मासुर की भाँति एक नृत्य हो रहा है, प्रकृति का नृत्य हो रहा है वैज्ञानिक पनपता है गृह में और यही गृह विज्ञान की दूषिता से मानो देखो, दूषित होकर के अपने में नष्ट हो रहा है। अपने में कैसे नष्ट हो रहा है? देखो, चारित्रिक जीवन जिस समाज का समाप्त हो जाता है। जिस काल में विज्ञान का दुरुपयोग होता है उस काल में देखो, गृहों की चारित्रिकता जो प्रभु की देन है वह समाप्त हो जाती है। जिसके लिए परम्परागतों से अन्वेषण करता रहता है, अनुसन्धान करता रहा है मानव, परन्तु केवल एक चारित्रिक जीवन को चाहता है उसमें अपने को मृत्यु से पार होना चाहता है। जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे कई कालों से प्रगट कराते चले आ रहे है कि मृत्युंजयी बनना चाहता है तो इस प्रकार की प्रतिभा तो आज मुझे प्रतीत हो रही है। विज्ञान से प्रारम्भ हुआ है।

आधुनिक काल का विज्ञान मानो देखो, बा“य जगत् से अग्नि से प्रारम्भ हुआ है वह भी अग्नि का नृत्य है यह भी अग्नि का नृत्य है। परन्तु इस अग्नि के नृत्य में चित्रावली महान है। परन्तु देखो, दोनों की महानता एक सूत्र में आ जाती है। जब ये एक ही सूत्र में आ जाती है तो मुझे तो कुछ ऐसा दृष्टिपात प्रतीत होता है कि इसमें मानव का कोई देष नहीं है ये वैज्ञानिकों के राजा के राष्ट्र में जो विज्ञान का दुरुपयोग है, विज्ञान का जो त्रास है जो विज्ञान मानव को ये कहता है कि देखो, आज अगर वायु में एक यन्त्र को त्याग देते तो प्राणी नष्ट हो जायेगा। अरे, भोले प्राणियो! मैंने ये वाक् कई काल में वर्णन किया है कि ये जब प्राणी नष्ट होगा तो होकर रहेगा। परन्तु तुम उससे प्रथम ही मृत्यु को क्यों प्राप्त हो रहे हो, देखो आगे के वाक्यों को प्रभु जानता है, नियमन करने वाला जानता है।

विज्ञान, प्रभु की वैदिक देन

मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रगट कराया कि आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह अपने में त्रास दे रहा है। भस्मासुर की भाँति अपने को मृत्यु के आँगन में पहुँचा रहा है। परन्तु विज्ञान एक मानवीय तथ्य और मानव का जन्म सिद्ध अधिकार होता है। क्योंकि विज्ञान तो एक मानवीय देन कहलाती है। ये तो प्रभु की वैदिक देन है। मानो देखो, जो ज्ञान और विज्ञान में रत नहीं होना चाहता, उस प्राणी का जीवन अधूरे पन में रहता है। परन्तु विज्ञान अपने से पूर्णत्व होना चाहिए। विज्ञान अपने में धाराओं में होना चाहिए। अरे मानव! तू मृत्यु का त्रास तो दे रहा है। अरे, कहीं तुझे जीवन की धारा का भी उद्घोष करना चाहिए। कि मैंने विज्ञान से ऐसे यन्त्रों को निर्माणित किया जिससे जीवन प्राप्त होगा। परन्तु ये तो हम भी जानते हैं परम्परागतों से ही देखो, शरीर का प्राणान्त होना है। परन्तु

देखो, प्राणों को जीवन देने की भी तो कोई प्रतिक्रिया होनी चाहिए। ऐसा मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराया आज भी मुझे पुनः से वह वाक् स्मरण आ रहा है।

परन्तु मैं भगवान् राम की चर्चा कर रहा था। भगवान् राम जब प्रातः कालीन याग करते थे तो अपनी उपदेश मंजरी में ये कहा करते थे कि विज्ञान भी होना चाहिए। परन्तु विज्ञान में मानव का प्राण न चला जाये, विज्ञान में मानव का चारित्रिक जीवन न चला जाये। देखो, अयोध्या में जब यह घोषणा हुई कि चरित्र होना चाहिए। तो ये घोषणा होने लगी कि चरित्र उस काल में ऊँचा बनता है, चारित्रिक जीवन उस काल में निर्माणित होता है जब बुद्धिजीवी पुरुष होते हैं। बुद्धिजीवी कौन होता है? बुद्धि जीवी पुरुष वे होते हैं जो प्रभु का चिन्तन करते हुए चरित्र की घोषणा करने वाले हों। देखो, शिक्षा का अर्थ, विद्या का अर्थ केवल ये है कि हम उद्घोष करने वाले हों, हम अपने जीवन को बनाने वाले हों। जैसा मैंने अभी-अभी कहा है कि राष्ट्र अपने में ये वशिष्ठ है। राजा को इतना बुद्धिजीवी होना चाहिए जिससे उसे ब्रह्म ज्ञान हो, जिससे वह अपने में कला कौशल करके देखो, उदर की पूर्ति करने वाला हो देखो, प्रजा के ङाद्दार को अपने में हनन करने वाला न हो, दूसरे प्राणियों के रक्त को पान करने वाला न हो। दूसरों के गर्भ को पान करने वाला न हो। जो आहार मानव का है उसी आहार को पान करने वाला हो। तो वह राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बना सकता है। देखो, राम का जीवन जब मुझे स्मरण आता है मानो देखो, कन्दमूल इत्यादियों से जो अपने जीवन को व्यतीत करता उस मानव की मानवता कितनी विचित्र रहती है।

वर्तमानकाल की आहार अशुद्धता

आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ केवल अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये वर्णन करा रहा हूँ कि ये जो वर्तमान का काल है इस वर्तमान में ही हमारी वाणी का प्रसारण हो रहा है मानो ये वर्तमान का काल ऐसा है कि इसमें राम-राम उच्चारण तो है परन्तु देखो आहार उनका अशुद्ध है। इसीलिये राम का उच्चारण करना बहुत प्रियतम है राम को हम स्वीकार करें।

कर्तव्यवाद में प्रविष्ट

क्योंकि भगवान् राम का जीवन वास्तव में क्रियात्मक, कितना भव्य था, वे कितने पवित्र थे। उनके जीवन में एक अप्रीत व्यवस्था नहीं थी। वे ब्रह्म ज्ञान में रत रहने वाले थे। ब्रह्म ज्ञान उनमें एक प्रतिभाषित रहता। क्योंकि वे सदैव गायत्राणी छन्दों में रत रहते थे। जब वे रत रहते थे तो रात्रि का काल अपने में एक माधुर्य जीवन रहा है। चारों विधाता विद्यमान होकर नित्य प्रति अपने में गोष्ठीबद्ध रहते थे। विचार विनिमय करते थे कि भाई। ये राष्ट्र का कोई वाक् हमारे विचारों में नहीं आ रहा। भरत कहते कि महाराज, विधाता जी! मेरे विचारों में भी नहीं आ रहा है। मानो शत्रुघ्न कहते कि मेरे विचार में तो केवल अपनी उदर पूर्ति का एक साधन है।

परन्तु लक्ष्मण ये कहा करते कि नहीं, कर्तव्य पालन करने के लिये राष्ट्र का निर्वाचन होता है। हमारी प्रविष्ट कर्तव्यवाद में निहित रहनी चाहिए। जब राजा राष्ट्र में रहने वाला प्रत्येक प्राणी कर्तव्य का पालन करता है, दूसरों का शोषण नहीं कर रहा है, संग्रह नहीं कर रहा है। देखो, वह जो कर्तव्य का पालन है उसमें न राष्ट्र है न प्रजा है। उसमें तो केवल एक कर्तव्य का पालन है। माता अपने कर्तव्य का पालन कर रही बाल्य को अपनी लोरियों का पान कराती है, उसकी क्षुधा को शान्त कर देती है। उसकी क्षुधा जब शान्त हो जाती है तो खिलवाड़ करने लगता है। माता ने कर्तव्य का पालन किया। बाल्य जब देखो बलवती होता तो ये स्वीकार करती, कि इसमें मेरा अधिकार नहीं है। ये तो राष्ट्र की सम्पदा है सभी राष्ट्रीय हैं यह इसलिये स्वीकार करती है कि मैं राष्ट्र की सम्पदा हूँ। तो उसमें ममता और मोह नहीं वह कर्तव्यवाद में निहित हो जाती है और वह यह स्वीकार करती है कि मैं राष्ट्र का

क्रियाकलाप, मुझे क्रिया कलाप, कर्तव्य के लिये निहित किया गया है।

आहार की पवित्रता प्रथम

जब इस प्रकार का समाज बन जाता है तो संसार में ममता नहीं रहती, मोह नहीं रहता। जैसे परमपिता परमात्मा एक रस रहने वाले हैं और एक रसता में संसार को क्रियाशील बना रहे है। इसी प्रकार देखो, राजा अपने राष्ट्र को क्रियाशील बनाता रहता है। तो मैं आज अपने पूज्यपाद गुरुदेव से ये वर्णन करा रहा हूँ कि राजा भी उस काल में होगा जब उसका आहार और व्यवहार पवित्र बन जायेगा। सबसे प्रथम आहार पवित्र बने, अनुषन करने वाले हों।

एक समय भगवान् राम भ्रमण करते हुए प्रजापति के निमंत्रण पर उनके राष्ट्र में पहुँचे। प्रजापति ने कहा-राम तुम राष्ट्र के सन्बन्ध में क्या चिन्तन करते हो? भगवान् राम ने कहा-कि मेरा कोई विशेष चिन्तन नहीं। मैं तो अपने में यह चिन्तन करता हूँ कि मेरा शरीर रूपी राष्ट्र जो यह अयोध्या है, ये पवित्र रहेगी तो राष्ट्र स्वतः पवित्र बन जायेगा। तो उस समय महाराजा प्रजापति ने कहा-कि धन्य है, प्रभु! उन्होंने कहा-भगवन् आप प्रजा के आहार को केसे विशुद्ध बनाते हो? उन्होंने कहा-कि मुझे प्रजा के आहार को विशुद्ध बनाने की भी आवश्यकता नहीं है। जब मेरा आहार स्वतः पवित्र होगा तो मेरा गृह भी पवित्र होगा और राष्ट्र में पवित्रता होगी, तो प्रजा स्वतः अपने आहार और व्यवहार में कुशल बन जायेगी। राम ने ये कहा, तो प्रजापति को उतर नहीं प्राप्त हुआ। उन्होंने एक प्रश्न में ये कहा कि आपके राष्ट्र में विज्ञान की क्या स्थली है? उन्होंने कहा कि विज्ञान अपने में विज्ञान बनकर रहता है अपने में विज्ञान ये है कि देखो, ज्ञान के पश्चात् विज्ञान है और वह विज्ञान अपनी स्थलियों में विज्ञान रहना चाहिए।

भौतिक विज्ञान आध्यात्मिक विज्ञान में पिरोया हो

मैं ये जानना चाहता हूँ प्रजापति जी! कि आपके राष्ट्र में एक वैज्ञानिक चन्द्रमा की यात्रा कर रहा है, एक वैज्ञानिक मद्दल की यात्रा कर रहा है और आपके राष्ट्र में रक्तभरी क्रान्ति आ रही है तो आपके मद्दल में जाने से कोई लाभ प्राप्त नहीं होगा। तो इस प्रकार तुम्हारे यहाँ एक मानव मानव को नष्ट कर रहा है रक्तभरी क्रान्ति आ रही है। प्रजा का पालन नहीं हो रहा है, तो चन्द्रमा में जाने से तुम्हारा कल्याण नहीं हो सकेगा। तो भगवान् राम ने देखो, जब ऐसा कहा तो प्रजापति नतमस्तिष्क हो गये। उन्होंने कहा कि ये भी होना चाहिए और मद्दल में भी जाना चाहिए और चन्द्रमा में भी जाना चाहिए और सूर्य की

परिक्रमा, सूर्य की किरणों के साथ, जिस राजा के राष्ट्र में योगेश्वर होंगे आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों का समन्वय हो जायेगा।

तो इस प्रकार उन्होंने जब वाक्य प्रकट किये तो महाराजा प्रजापति, मौन हो गये। तो राम ने अपने में विज्ञान की यही धारणा बनायी कि विज्ञान भी होना चाहिए। परन्तु विज्ञान अपने में विज्ञान बनकर के रहना चाहिए। विज्ञान आध्यात्मिक वाद से पिरोया होना चाहिए और भौतिक विज्ञान में आध्यात्मिकवाद की प्रतिभा बनी रहे। जिससे सूर्य की किरणों के साथ योगेश्वर गति कर सकता रहे, जो मानो देखो, चन्द्रमा की किरणों के साथ गति कर सकता है। वह वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा उसमें आध्यात्मिकवाद और भौतिकवाद उसमें दोनों की पुट लगी हुई होती है।

रूढ़िवाद के कारण रक्तभरी क्रान्ति

तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे इन वाक्य को वर्णन कराते रहते हैं। परन्तु आधुनिक काल का विज्ञान ऐसा कोई विज्ञान नहीं है। आधुनिक काल का विज्ञान यन्त्रों को निर्माणित कर रहा है, नष्ट होने की प्रविष्ट उत्पन्न कर

रहा है, जीवन की प्रविष्ट को समाप्त कर रहा है। समय मानो वह निकट है जब रक्त भरी क्रान्तियाँ तो आ रही हैं आती रहेंगी। आधुनिक काल के राष्ट्र में यह विचारना चाहिए कि परम्परागतों में जब भी क्रान्ति आयी है पुरातन काल में तो वह मानो उस काल में आयी है जब विज्ञान की केवल विष्ट का बन गयी है। देखो, राजाओं में स्वार्थ की एक प्रतिभा आ गयी है। आधुनिक काल का जो मैं जगत् दृष्टिपात कर रहा हूँ इसमें जो रक्त भरी क्रान्ति के अवशेष हैं वह केवल प्रभु के नाम पर रूढ़िवाद बनी हुई है। और रूढ़िवादों में स्वार्थ है, उनमें राष्ट्रवाद है और राष्ट्रवाद भी हिंसा से पिरोया हुआ है। और वह जो हिंसा से पिरोया हुआ राष्ट्रवाद है वह राजा को देखो, दुषित कर रहा है राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा नहीं बना सकता। राजा को चाहिए कि अपने राष्ट्र में रूढ़ि नहीं रहने दे।

ये जो ईश्वर के, परमपिता परमात्मा के नामों पर रूढ़ियाँ बनी हुई हैं कोई मुहम्मद के मानने वाला है, कोई ईसा के मानने वाला है, कोई किसी प्रकार की मान्यताओं में रत हो रहा है। इस प्रकार की रूढ़ियाँ नहीं रहनी चाहिए। कोई महापुरुषों की रूढ़ि बनाना चाहता है। उनके मौलिक विचारों को लेकर के राष्ट्र, अपने समाज में रूढ़ियों को समाप्त कर सकता है और जब तक इस प्रकार की रूढ़ियाँ समाप्त नहीं होगी, एक वेद का प्रतिपादन, देखो, ज्ञान वेद के प्रकाश के रूप में रत नहीं रहेगा मानो देखो, अपने में अपनेपन की धारा को लेकर के सर्वाद्वां को लेकर के राष्ट्र जब तक नहीं चलेगा तब तक उसके राष्ट्र में रक्त भरी क्रान्ति के अवशेषों का जन्म होता रहेगा।

आधुनिक धर्म निरपेक्षता

तो मैंने बहुत बार पूज्यपाद गुरुदेव से वर्णन कराया कि हे भगवन्! आधुनिक काल का जो समाज और राष्ट्र है वह केवल देखो, रूढ़ियों से घिरा हुआ है, रूढ़ियों से ओत-प्रोत है। इसलिये धर्म की चर्चा नहीं कह रहा है, इसलिये वह कहता है कि मैं धर्मनिरपेक्ष बन गया हूँ। अरे, भोले राजन! तेरे द्वारा धर्म नहीं रहा तो तेरे द्वारा रह क्या गया। देखो, धर्म तो एकोकी वचन है और उस एकोकी वचन को उच्चारण करते हुए, तू लज्जित हो रहा है, नाना धर्म उच्चारण कर रहा है। साहित्य की अहवेलना कर रहा है, अपने ज्ञान की अवहेलना कर रहा है। तो इसलिये मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह वर्णन करा रहा हूँ कि हे ममतामयी माँ! हे राजन! हे प्रजाओं! तुम राष्ट्र में घोषणा करो, कि हमारा राष्ट्र विशुद्ध होना चाहिए। धर्म एकोकी वचन है, मानवीय धर्म होना चाहिए। देखो, वैदिक जो पवित्र धर्म, जो प्रकाश में ले जाने वाला हो, सुगन्धि में ले जाने वाला हो, विज्ञान में ले जाने वाला हो, विज्ञान भी धर्म से पिरोया हुआ रहना चाहिए। तो आज मैं अपने पूज्य पादगुरुदेव से आज्ञा भी पाऊँगा क्योंकि मैं विशेष विवेचन देने नहीं आया हूँ।

मैं ये उच्चारण कर रहा था कि भगवान् राम का जीवन मुझे स्मरण आता रहता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कई कालों में अयोध्या। शेष अनुपलब्ध दिनांक, 31,3.85, 3/55 जल विहार, नई दिल्ली

१० राजा ज्ञानश्रुति एवं गाड़ीवान रेवक मुनि का उपाख्यान ०८ ०४ १९८५

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव की महिमा का गुण-गान गाया जाता है। क्योंकि उस परमपिता परमात्मा के सन्बन्ध में, परम्परागतों से ही बेटा! मानव विचार-विनिमय करता चला आया है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक, नाना वैज्ञानिक हुए, नाना ऊर्ध्ववेता भी हुए हैं परन्तु कोई ऊर्ध्ववेता और कोई वैज्ञानिक ऐसा नहीं हुआ, जो उस परमपिता-परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके। तो इसलिये हमारे यहाँ ये वेद का मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है अथवा उसका गुणगान गा रहा है। इसलिए हमारे यहाँ ज्ञान और विज्ञान में रत रहने वाले ऋषि मुनि एक-एक वेद मन्त्र के ऊपर अन्वेषण करते रहे हैं। अथवा विचार विनिमय करते रहे हैं। और उनका एक ही मन्तव्य है कि वह परमपिता परमात्मा महानता में रत रहने वाले हैं।

अनुपम जगत्

तो मेरे प्यारे! हमारा वेद का मन्त्र जहाँ उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है वहाँ नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान में रत रहने वाले, ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ रहे हैं। प्रत्येक मानव को ज्ञान और विज्ञान में रत रहना चाहिए। क्योंकि हमारे यहाँ दो प्रकार का विज्ञान, परम्परागतों से ही माना गया है। एक वह विज्ञान है, जिसको हम भौतिक विज्ञान कहते है। द्वितीय हमारे यहां आध्यात्मिक विज्ञान है। परन्तु दोनो प्रकार के विज्ञानवेता परम्परागतों से ही बेटा! विज्ञान की ऊँची-ऊँची उड़ानें उड़ते रहे हैं। जहाँ तक मैं भौतिक विज्ञान के सन्बन्ध में विचार-विनिमय हम करते रहते हैं वहाँ भौतिक विज्ञान उसको आध्यात्मिकवाद से बेटा! उसका समन्वय करते रहते हैं। परन्तु किसी भी काल में जब दोनों प्रकार का विज्ञान बलवती होता है और दोनों प्रकार के विज्ञान का जब समन्वय हो जाता है, तो मानो बेटा! वह अनुपम जगत् कहलाया जाता है। क्योंकि राजा के राष्ट्र में जब तक दोनों प्रकार के विज्ञान का समन्वय नहीं होता, तब तक समाज में महानता की प्रतिपादितता नहीं हो पाती। समाज में एक महानता की स्थापना नहीं हो पाती।

तो हमें विचार-विनिमय करना है कि हमें महानता को लाना है जब हम वेद के एक-एक वेद मन्त्र के ऊपर प्रायः अन्वेषण करते हैं तो हमें प्रायः संसार का ज्ञान और विज्ञान बेटा एक-एक आभा में निहित होता हुआ दृष्टिपात आता है। एक-एक तरद्दवाद में इस ब्रह्माण्ड की नाना तरद्दें बेटा! उसमें निहित हो जाती हैं। तो आओ, मेरे प्यारे! आज तुम्हें मैं विशेष विवेचना न देता हुआ आज तुम्हें मैं उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि-मुनियों का समूह विद्यमान हो करके बेटा! नाना प्रकार की उड़ानें उड़ता रहा है। नाना प्रकार की धाराओं में रत रहा है। तो मेरे प्यारे! मुझे वह काल पुनः से स्मरण आ रहा है जिस काल में बेटा! राजा, ऋषियों के चरणों में ओत-प्रोत हो करके नाना प्रकार के ज्ञान और विज्ञान की उड़ानें उड़ते रहे हैं।

राजा ज्ञानश्रुति की जिज्ञासा

आज मैं तुम्हें बेटा! उस उड़ान में ले जाना चाहता हूँ जहाँ मुनिवरो! देखो, राजा ज्ञानश्रुति, जो महाराज मनुवंश में जिनका जन्म हुआ था। द्वितीय ऋषिवर गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज जो बेटा! गाड़ी के नीचे अपने जीवन को व्यतीत करते थे अथवा तपस्या में तल्लीन रहते। मेरे प्यारे! नाना ऋषिवर उनके समीप आते, उनके वाक्यों

को मुनिवरो! श्रवण करके उनका समाधान करते रहते थे। परन्तु देखो, महाराजा ज्ञानश्रुति जब बेटा! महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम से दोनों बेटा! अपने आश्रम में आ पहुँचे, तो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज से राजा ने यह कहा-प्रभु! मैंने आपके जीवन को जान लिया है। तुम्हारा जीवन एक महान और विचित्र माना गया है। जिस विज्ञान के ऊपर ऋषि-मुनि परम्परागतों से अनुसन्धान अथवा अन्वेषण करते रहते है तो उसी विज्ञान को आपने मुझे जनाया है और निर्णय कराया है कि यह विज्ञान है परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ भगवन्! कि यह जो आपने मुझे इस भौतिक विज्ञान का दिग्दर्शन कराया है। मैं शारीरिक विज्ञान के ऊपर जानना चाहता हूँ। प्रत्येक मानव, और हम भी अपने को यह चाहते हैं कि हमारी ध्रुवा गति न हो। हम केवल ऊर्ध्वा गति चाहते हैं। भगवन्! हम अपनी ऊर्ध्वा गति को केसे बना सकते हैं? हम ऊर्ध्ववेता केसे बन सकते हैं? जिससे हमारे परमाणुवाद, जिस परमाणु में ब्रह्मचर्य विद्यमान है, क्योंकि हमारे नाना ऋषियों के वक्तव्यों में मानो दो ही वाक् आते हैं ब्रह्म और चरी जब हम वैदिक साहित्य में प्रवेश करते हैं, तो वहाँ भी दो ही शब्दों का प्रतिपादन होता है! ब्रह्म और चरी का वर्णन आता है। तो भगवन!् हम ब्रह्म का चरी में समावेश करना चाहते हैं, और ब्रह्म को चरी में और चरी को ब्रह्म में समावेश, दृष्टिपात करना चाहते है। तो भगवन्! हम यह जानना चाहते हैं कि यह जो चरी है, हम इसको उर्ध्ववेता बनाना चाहते हैं। हम इसे केसे बना सकते हैं? वह हमारी कौन-सी विचित्र गति है। उस समय महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा कि जब अपने विद्यालय में बाल्य काल में अध्ययन करते थे तो उस समय हमें यह शिक्षा दी जाती कि हे ब्रह्मवर्चोसि! तुम ब्रह्मवेता बनो! मानो तुम गऊओं की रक्षा करो। वह गऊ कौन सी है भगवन्। जिससे मानव ऊर्ध्ववेता बनें और गऊओं की रक्षा करके ब्रह्मवर्चोसि बन जायें।

गौ-उपाख्यान

तो मेरे प्यारे! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा कि हे राजन्। यह तो अपना-अपना प्रकरण है यह प्रकरण की धाराएँ हैं यदि तुम्हें अपनी आभा में निहित रहना है, तो तुम्हें ब्रह्मवर्चोसि गऊओं की सेवा करनी होगी। गौ का क्या अभिप्रायः है? गौ कौन-सी? हमारे वैदिक साहित्य में यदि बेटा! हम कृषक को यह कहते हैं कि गऊओं की सेवा कर। राजा से कहते हैं कि तेरे राष्ट्र में गऊओं की सेवा होनी चाहिए, तो मानो वहाँ पशु का नामोकरण होगा। और जहाँ योगियों की सभा में और योग ऊर्ध्ववेताओं के द्वार पर, तुम यह प्रश्न करो और वह तुम्हें गऊ का उतर दें तो जानो कि गौ नामक इन्द्रियों का प्रतिपादन हो रहा है। गौ नामक इन्द्रियों का तुम पालन करें। गौ कहते हैं, जो पशु के तुल्य है इसी प्रकार देखो, जब इन्द्रियों का हमें ज्ञान और उसको हम अपने में विश्वसनीय नहीं बना सकते तब तक उन्हें गौ की उपाधि प्रदान की जाती है। गऊओं की सेवा करना हमारे लिए मानो देखो, अवर्चनीय एक शब्द बन जाता है।

सेवा का अभिप्राय

तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह कहा कि तुम योगियों की सभा में, तुम गऊओं की सेवा करो, गौ नाम इन्द्रियों का है। इन्द्रियों में पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ कहलाती है और पाँच कर्मेन्द्रियाँ हैं इनको मानो जानना चाहिए। सेवा का अभिप्राय यह है कि हमें इन्हें जानना है। मानो इन ज्ञानेन्द्रियों में क्रियाकलाप हो रहा है, उन ज्ञानेन्द्रियों को मानो जान करके, इसकी आभा में हमें रत रहना है।

ब्रह्म एवं चरी

तो मेरे प्यारे! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा हे राजन्! हमें देखो, इन इन्द्रियों को जानना है, गौ की रक्षा करनी है। गौ विष्ट यों में रत हो जाना है। रहा यह कि हम ब्रह्मवर्चोसि का पालन करना चाहते हैं। ब्रह्म और

चरी दो ही तो शब्द है जैसा शतपथ इत्यादि पोथियों में वर्णन आया है कि ''गौ ब्रह्मा वाचप्रविही ब्रह्मचरिष्यामि'' ये जो ब्रह्म और चरी है यह दो ही शब्द है। दोनों शब्दों में एक महानता की प्रतिभा रहती है। एक ब्रह्म है और एक चरी है। ब्रह्म नाम परमपिता परमात्मा का है और चरी नाम प्रकृति का है। मुनिवरो! देखो, दोनों को हम और उपाद्दां से जानने के लिये तत्पर ही जायें। तो जानो, कि बेटा! हम उस मार्ग के पथिक बन गये है। जहाँ मानव अपने ब्रह्म को, ब्रह्मचरिष्यामि को ऊर्ध्ववेता बनाता है। परमाणुवाद को ऊर्ध्ववेता बनाता है। जैसे बेटा! सूर्य में एक ऊर्ध्वा अपना कार्य कर रही है मानो वह द्यौ से ऊर्ध्वा को ले करके संसार को प्रकाश में पहुँचाता है। इसी प्रकार हे मानव! यदि तुझे ऊर्ध्ववेता बनना है और यदि तुझे उस महान ब्रह्मचरिष्यामि को अपने में धारण करना है तो तुझे अपने में उस ''मद्दलं ब्रह्म वाचा'' द्यौ की भाँति बनना होगा अथवा सूर्य की भाँति बनना होगा जो कि सूर्य प्रातः काल से प्रकाश देता हुआ, वह भासता रहता है। इसी प्रकार ज्ञान रूपी प्रकाश को ले करके मानव को भासना होगा और वह प्रकाश को देता रहेगा तो वह अपने जीवन को ऊर्ध्ववेता बना सकता है।

ऊर्ध्ववेता सम्बन्धी उपाख्यान

मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें बेटा! विष्णु शब्द की विवेचना की थी मानो ''योगश्चं ब्रह्मम्'' की विवेचना की थी कि मानव को योगी बनना चाहिए। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है ऊर्ध्ववेता कौन बनता है? एक समय बेटा! देखो, महर्षि समीप ऋषि महाराज बेटा! भ्रमण करते हुए वह मुनिवरो! देखो, त्रेता के काल में बेटा! एक समय कागभुषुण्ड जी के द्वार पर पहुंचे। कागभुषुण्ड जी मानो उस समय अनुषन कर रहे थे। बारह वर्ष का वह अनुषन था। जब मेरे प्यारे! उस क्रियाकलाप में लगे हुए थे। ऋषिवर जब उनके द्वार पर पहुँचे तो उन्होंने यह प्रश्न किया कि महाराज! मानव को ऊर्ध्ववेता बनने के लिये क्या-क्या क्रियाकलाप करना चाहिए? कौन-कौन सी क्रियाओं में रत रहने से ऊर्ध्ववेता अपने परमाणु, ऊर्जा जैसे सूर्य प्रकाश देता है।

तो मेरे प्यारे! उन्होंने कहा ''ज्ञानं ज्ञानाति जन्नं बह्मा वाचप्र्हे लोकाम्'' ऋषि ने कहा कि जो ज्ञान है, यही मानव को प्रकाश में ले जाता है। वह ज्ञान संसार में सिमट जाता है और ज्ञान को सिमट करके विवेक में परिणत कर देता है और जब विवेक प्रत्येक इन्द्रियों को जानने के लिये हम तीव्रता में परिणत हो जाते हैं तो वही तीव्रता इन्द्रियों की मेरे प्यारे! वह तीव्रता मानो हृदय रूपी गुपफा में एक अनुषन होने लगता है। जब हृदय रूपी गुपफा में अनुषन होने लगता है, तो वहाँ मानव के हृदय में घृणा नहीं होती। मानव के हृदय में द्वितीयता नहीं रह पाती। केवल एकोकीकरण बन करके, एकोकी में विचरण करता हुआँ मेरे पुत्रो! ऐसा कुछ अनुभव में आया है कि वह अपने प्राण सूत्र में, अपने प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों को पिरो करके, साकल्य बना करके, हृदय रूपी गुपफा में, यज्ञशाला में वह अप्रतम् यह उनका साकल्य का स्वाहा कहता है। तो मेरे पुत्रो! उस मानव की तीव्र गति बन करके, तीव्र इच्छा हो करके वह ऊर्ध्ववेता बन करके देखो, वह अपने परमाणुवाद को महान बना लेता है।

इन्द्रिय निग्रह उपाख्यान

जैसा बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है मेरे प्यारे! कागभुषुण्ड जी जब अनुषन में सामगान गाते, यज्ञो{सि में प्रवेश हो जाते। तो मेरे प्यारे! देखो, सर्पराज आ रहे हैं। वह सर्पराज मानो देखो, चरणों की वन्दना कर रहे हैं। मृगराज, सिंहराज आते हैं वह भी चरणों की वन्दना कर रहे हैं। वह क्यों कर रहे हैं? क्योंकि उनकी प्रत्येक इन्द्रियों का शोधन हो गया है। प्रत्येक इन्द्रियों के दृष्टिपात करने का माध्यम कुछ और बन गया है। तो मेरे प्यारे! 'योगश्चम्' चित विष्ट यों में रत हो करके एक साम्य, एक रसता में प्रवेश करना ही, मेरे पुत्रो! अपने को ऊर्ध्ववेता बनाना है। परमाणुवाद का ऊर्ध्वा बनना ही मेरे पुत्रो! देखो, योगी बनना है। और योगी मुनिवरो! 'योगश्चम्' अपने में

चरने वाला मेरे पुत्रो! देखो, योगी हो करके प्रभु की गोद में प्रवेश कर जाता है। प्रभु के आँगन में प्रवेश कर जाता है तो मेरे प्यारे! हमारे यहाँ यह आया है कि परम्परागतां से जैसे राजा जनक इत्यादियों की सभा में भी ऐसा आया है।

याग से मृत्यु की उपरामता

परन्तु महाराजा ज्ञानश्रुति ने भी मेरे पुत्रो! देखो, ऋषि से यह प्रश्न किया कि प्रभु! मैंने कहीं दर्शनों में, वेदों के मन्त्रों में यह अध्ययन किया है कि याग से मानव मृत्यु को पार हो जाता है। तो भगवन्! मैं उस याग को जानना चाहता हूँ, जिस याग के द्वारा मानव मृत्यु से पार हो जाता है।

मृत्युंजयी

तो मेरे पुत्रो! देखो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि ''यज्ञोमयी विष्णु यज्ञां भविते ब्रह्म मृत्यु ब्रह्म वाक् लोकाः'' याग करने वाला यजमान अपने को मृत्यु से पार होना चाहता है, याग के द्वारा मृत्यु से पार होना चाहता है। मेरे प्यारे! वास्तव में तो मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय भी दिया है। महाराजा ज्ञानश्रुति ने भी अपना निर्णय यही दिया कि वास्तव में मृत्यु का अभाव है संसार में, जब मृत्यु का अभाव है, तो उससे पार होने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। परन्तु विचार आता है अज्ञानां भविते देवाम् हम याग के द्वारा अन्धकार को नष्ट करना चाहते हैं, प्रकाश को लाना चाहते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वह प्रकाश, जिस प्रकार के लिए परम्परागतों से मानव अपना अनुसन्धान करता रहा है, विचारता रहा है कि हम मुनिवरो! देखो, याग करे।

तो मुनिवरो! देखो, महर्षि गाड़ीवान रेवक और राजा ज्ञानश्रुति दोनों मुनिवरो! देखो, प्रातः कालीन याग करते थे जब प्रातःकालीन याग करते थे तो उसके ऊपर विचार विनिमय होता रहता, कि याग से मृत्यु को पार होना है। मेरे प्यारे! देखो, वह केसे?

तो मुनिवरो! देखो, याग कहते है प्रकाश को और वह प्रकाश क्या? जितना भी मानव का सुकर्म है, विचित्र क्रियाकलाप है जितनी निःस्वार्थता होती है जिसमें निष्पन्नता होती है जब मानव इस क्रियाकलाप को करता है तो बेटा! मृत्यु से पार होने की, अन्धकार से प्रकाश में लाने वफी पगडण्डी को ग्रहण कर लेता है। वही पगडण्डी है जिस पगडण्डी को ग्रहण करके बेटा! मानव याज्ञिक बनता है।

नेत्रों का प्रकाश सूर्य

तो बेटा! एक समय महाराजा ज्ञानश्रुति और गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज का यह प्रसङ्ग आया जब वेदों का अध्ययन करते हुए मानो वह जब याग करने लगे तो याग करते-करते उन्होंने कहा ''वेदां भविते प्रकाशां रुद्रं भविता नेत्राणि गच्छतप प्रह्रे वाचप्रह्वा लोकां हिरण्यं रथाः'' उन्होंने कहा प्रभु! यह वेद का मन्त्र यह कहता है, कि यह प्रकाश कहा से आता है? यह प्रकाश का द्योतक क्या है? क्योंकि मानव के जो नेत्र हैं यह तो गोलक में बने हुए हैं। परन्तु यह तो आयतन बना हुआ विद्यमान है, उस आयतन के सन्म्बन्ध में मुझे व्याख्या कीजिए।

तो मेरे पुत्रो! गाड़ीवान रेवक ने राजा से कहा कि इन नेत्रों के पिछले विभाग में एक प्रकाश है, कोई तन्तु है। तन्तु के प्रकाश में तन्तु के पिछले विभाग में भी कोई प्रकाश है। महाराजा जानश्रुति ने कहा प्रभु! वही तो प्रकाश मुझे जानना है कि वह प्रकाश कौन-सा है? तो मेरे प्यारे! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा हे राजन! वह जो नेत्रों का प्रकाशक है वह सूर्य है। सूर्य से उस सूत्र का समन्वय लगा हुआ है। सूर्य प्रातः कालीन प्रकाश ले करके आता है। वह द्यौ से प्रकाश लेता रहता है और संसार को प्रकाशित बनाता रहता है। वही प्रकाश है जिसके प्रकाश में मानव के ये गोलक में अपने क्रियाकलाप कर रहे हैं। मानो अपने में रत रह रहे हैं।

वनस्पतियों द्वारा गुणों का प्रकटीकरण

तो मुनिवरो! देखो, माता अपने पुत्रों को प्रातःकाल में जागरूक कर देती है कि सूर्य उदय हो गया है, भास्कर आ गया है, उदयन आ गया है। आओ, हे पुत्रो! तुम जागरूक हो जाओ, पुत्र जागरूक हो जाते हैं। सूर्य के प्रकाश आते ही उषा और कान्ति तरंगो में आ करके मानव को प्रकाशवान बना देती है। यही प्रकाश है, मेरे पुत्रो! जब यह वनस्पतियों में प्रवेश करता है तो नाना प्रकार की वनस्पति ऊर्जा को प्राप्त हो जाती हैं। बेटा! जब वैद्यराजों के काल में अश्वनी कुमारों का, मुनिवरो! देखो, उनका काल स्मरण आता है महात्मा दधीचि का काल स्मरण आता है। तो वह 'वेदाहम्' जब वेद का अध्ययन करते हैं तो वनस्पति विज्ञान में वह सदैव रत रहते और वह वनस्पति विज्ञान इतना विशाल था मानो देखो, वह स्वप्रवत में आ करके अपने गुणों का गुणाधानम् करने लगती थीं। औषधियाँ कहतीं कि अमुक गुण हमारे में है।

तो मुनिवरो! देखो वह किसका प्रकाश है? वह सूर्य का प्रकाश है। उस सूर्य के प्रकाश में वनस्पतियाँ मानो स्थावर सृष्टि अपने में प्रकाशित हो करके मेरे पुत्रो! देखो, जीवन का गुणाधानम् वर्णन करने लगती हैं। जब आयुर्वेदाचार्य अपने स्थान से गति करता हुआ, सूर्य की किरणों के साथ में गति करता हैं वह वनस्पतियों के गर्भ में प्रवेश करता है तो नाना प्रकार की वनस्पतियाँ उसके समीप आ करके गुणों को वर्णन करने लगती हैं।

मेरे पुत्रो! मैंने बहत पुरातन काल में कहा ''गुडीत'' नामक एक औषध कहलाती है। एक अश्वाणी औषध होती है दोनों का खरल बना करके अग्नि से तपा करके जब उसका पान किया जाता है, तो मानो अश्व का जो मुखारविन्द है उसके अन्तःकरण में जो ज्ञान का प्रवाह बह रहा है उसको मुनिवरो! देखो, वह श्रवण करने लगता है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातन काल में कहा था कि जिस समय महाराजा इन्द्र ने यह विचार लिया था कि मैं महात्मा, दधीचि को समाप्त करूँगा। यदि वह अश्वनी कुमारों को ब्रह्म का उपदेश दें। तो मानो देखो, उन्होंने अश्व के मुखारविन्द से यह वाक् कहा और अश्व के मुखारविन्द से मानो देखो, उनके उद्गारों को श्रवण करने लगे।

हृदय का स्थान

हमारे आचार्यों ने दो प्रकार के हृदयों का समावेश विष्ट यों में वर्णन किया है। एक लघु मस्तिष्क में, हृदय माना गया है और एक हृदय नाभि के अग्रणीय भागों में, निचले भागों में स्वीकार किया गया है। परन्तु दो प्रकार के हृदयों का समावेश हमारे इस मानव के शरीर में रहता है। तो मेरे पुत्रो! देखो, जो हृदय में अध्ययन किया गया है उस हृदय का समन्वय मानो बाह्य चित के मण्डल से होता है और चित के मण्डल में जो भी कुछ क्रिया कलाप होता है वह हृदय में और हृदय की जो तरद्दें बन करके चलती हैं वह इन्द्रियों के साथ होते हुए वाणी में समावेश हो जाती हैं। तो वह वाणी मानो उद्गार गाने लगती है। मेरे पुत्रो! औषधियों का पान करने से ऋषि मुनियों ने मेरे प्यारे! अश्व के मुखारविन्द से ब्रह्म का उपदेश पान किया।

निष्पक्ष वाणी का प्रभाव

विचार क्या बेटा! प्रत्येक मानव के हृदय में शधएँ, मेरे हृदय में भी भिन्न-भिन्न प्रकार की धाराओं का जन्म होता रहा है। और वह जन्म क्या है? कि मानव के कण्ठ में वह ध्वनि नहीं है। जो ध्वनि अश्व के कण्ठ में है। मैंने यह कहा है कि उनकी जो प्रेरणा है वह प्रेरणादायक, अपने में अशुतो को प्राप्त होने लगता है। मानव के द्वारा प्रत्येक प्राणी को वहाँ का वायुमण्डल, जो उसे प्रभावी करता है। मेरे प्यारे! मुझे तो ऐसा भी स्मरण कहीं आया है कि मुनिवरो! देखो, जब महात्मा उद्गार गाते हैं निष्पक्ष हो करके, मेरे पुत्रो! देखो, उस उद्गार को श्रवण करने के लिये सिंहराज, मृगराज एक पघक्ति में विद्यमान हो करके उन वाक्यों को स्मरण करते है। मेरे प्यारे! सर्पराज एक

पंक्ति में विद्यमान हो जाते हैं, वह भी अंहिसा परमो धर्मः वाले शब्दों को श्रवण करते हैं। बेटा! यह तो अश्व है, बेटा! मुझे तो श्रवण आता रहता है। जब हम अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा जाते रहते तो मानो सिंहराज कोई मानव नहीं है। कौन है आश्रम में? सर्पराज है, मृगराज है, सिंहराज है परन्तु आचार्य की साम ध्वनि चल रही है। मेरे पुत्रो! देखो, वह जो सामगान हो रहा है, यज्ञोंसि गान हो रहा है, उद्गीत गाया जा रहा है। बेटा! देखो, वह निष्पक्ष वाला जो उपदेश है, उसको कौन? सर्पराज चरणों की वन्दना करके श्रवण कर रहा है। सिंहराज उसको अपने में श्रवण कर रहा है। मानो देखो, वहाँ का वायुमण्डल वहाँ की प्रतिभा उसको उसी प्रकार का देखो सूत्र प्रदान कर देती है।

इसी प्रकार आज मैं बेटा! विशेष विवेचना न देता हुआ केवल यह कि मेरे पुत्रो! देखो, अश्वनी कुमारों ने इस औषध-विज्ञान के द्वारा ही अश्व के मुखारविन्द से बेटा! उनकी ध्वनि को ब्रह्म ज्ञान में परिणत होने लगी क्योंकि ब्रह्मज्ञान की प्रतिभा तो मानव का जीवन बनाती है, मानव की निष्ठा बनाती है, उसका विवेक बनाती है उसका विवेक निर्णय कर देता है। तो इसी प्रकार मेरे पुत्रो! आज मैं तुम्हें विशेषता में ले जाना नहीं चाहता हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ केवल सूक्ष्म परिचय देने के लिये आया हूँ। और वह परिचय क्या है कि प्रत्येक मानव को बेटा! देखो, उस आभा में रत रहना है।

औषधियों का प्रभाव

आओ, मेरे प्यारे मैं विशेष वाक्यों में न जाता हुआ, केवल यह मुनिवरो! देखो, अश्व के मुखारविन्द से अश्वनी कुमार महात्मा दधीचि से ब्रह्म का उपदेश ले रहे है। मेरे पुत्रो! देखो, जब राजा इन्द्र ने उनके मस्तिष्क को दूरी कर दिया, तो उन्होंने औषधियों से कण्ठ सहित जो मस्तिष्क विद्यमान था उसका औषधियों से लेपन करके बेटा! उसे ज्यों का त्यों स्थिर कर दिया। वह वाणी कर उद्गार गाने लगा, उद्गीत गाने लगता। तो मेरे पुत्रो! देखो, उनका आयुर्वेद विज्ञान उनके समीप रहता है। अश्वनी कुमार क्या मेरे प्यारे! राजा रावण के राष्ट्र में सुधन्वा भी इसी प्रकार का वैज्ञानिक था। जो शारीरिक विज्ञान को विशेषता में जानते थे। तो आओ मेरे प्यारे! विचार क्या आज मैं विशेषता में नहीं जाना चाहता हूँ।

विचार विनिमय केवल यह है मेरे पुत्रो! क्या जब यह वाक् महात्मा गाड़ीवान रेवक ने महाराजा ज्ञानश्रुति से कहा कि हे राजन्! यह जो सूर्य का प्रकाश है। यह ऊर्जा ले रहा है द्यौ से और यह प्रकाश मानो भास्कर बन करके प्रकाश दे रहा है। मानो देखो, सूर्य सृष्टि के गर्भ में नाना प्रकार के खनिजों का निर्माण कर रहा है। खाद्यानों का निर्माण कर रहा है। जिससे मानव का जीवन संचारित हो रहा है। सर्वस्व संसार का प्रत्येक पदार्थ मानो औषध बना हुआ है औषधियों को उतना खरल किया जाये जितनी उसमें शक्ति और ऊर्जा एक महानता में परिणत हो जाती है। तो वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कह रहा है मेरे प्यारे! कि देखो, सूर्य प्रकाश देता रहता है। माता के गर्भ में जब शिशु होता है तो वहाँ भी यही प्रकाश देता है, अनुपमता का प्रकाश देता है।

शरीर-निर्माता

मेरे प्यारे! मैंने कई काल में वर्णन किया। वाह, रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानमयी है। जब मैं तेरे विज्ञान की चर्चा करता हूँ तो आश्चर्यचकित हो जाने लगता हूँ। माता के गर्भस्थल में निर्माणवेत्ता निर्माण कर रहा है। वह विश्वकर्मा निर्माण कर रहा है। मेरे प्यारे! देवता उसको सहायता दे रहे हैं। जैसे सूर्य द्यौ से प्रकाश ले करके शिशु को प्रकाश दे रहा है। चन्द्रमा सूर्य से कान्ति ले करके अपने में अमृत बनाकर के अमृत प्रदान कर रहा है। मेरे प्यारे! अग्नि तेजोमयी बना रही है और वायु प्राण दे रहा है और अन्तरिक्ष बेटा! अवकाश दे रहा है, आपो आसन

बना हुआ है। मेरे पुत्रो! देखो, उसी अभ्युदय में प्रभु उसका निर्माण कर रहा है। हमारे जैसे शरीरों का निर्माण करता है। परन्तु देवता माता के गर्भ में रक्षा कर रहे हैं। मेरे पुत्रो! माता के कितना निकट है प्रभु! मानो गर्भ में निर्माण कर रहा है माता ऐसी भोली कि उससे वंचित है, उससे दूरी है। तो हे राजन्! विचारना यह है कि मानो हम उस प्रभु का गुण-गान गाते रहें। प्रभु के विज्ञान की प्रतिभा में रत रहें। जिससे हमें यह प्रतीत हो कि प्रभु का विज्ञान कितना अनुपम है, कितना महान है, कितना विचित्रता में गति कर रहा है।

मस्तिष्क के प्रकार

मानव के शरीर में बेटा! नाना प्रकार की नस-नाड़ियों का प्रादुर्भाव मानो ।केत हो रहा है। इसके ऊपर विचारते रहते हैं किसी नाड़ी का सन्म्बन्ध बेटा! ब्रह्मरन्ध्रों से लगा हुआ है। मस्तिष्क केवल एक मस्तिष्क नहीं है। कहीं मानो देखो, मस्तिष्क का निर्माण, मस्तिष्क में से लघु मस्तिष्क का निर्माण, लघु मस्तिष्क से आभा वृतिका मस्तिष्कों का निर्माण बेटा! देखो ऋतम्भरा वाचक का निर्माण हो रहा है। यह नाना मस्तिष्क हैं, जिनका समन्वय मेरे प्यारे! देखो, योगाभ्यासी समाधि में प्रविष् हो करके लोक लोकान्तरों की यात्रा करने लगता है। मेरे प्यारे! लोकों को दृष्टिपात करने लगता है। एक सूर्य मण्डल नहीं है बेटा! सूर्य के अन्तर्गत तीस लाख पृथ्वियाँ गति कर रही हैं। वे परमाणु योगी के समीप बेटा! नृत करने लगता है। आज बेटा! मैं योग में जाना नहीं चाहता हूँ आज तो मानो देखो, जो अपने को ऊर्ध्ववेता बनाना चाहता है तो बेटा! देखो, उसे मस्तिष्क, लघु मस्तिष्क, ऋतम्भरा मस्तिष्क और मेधामयी मानो देखो, आभा मस्तिष्कों को जानना होगा। यह जाना केसे जाएगा? बेटा! समाधिष्ठ के द्वारा। जहाँ प्राण सूत्र को मन में और मन को प्राण सूत्र में पिरोना जान लेते हैंं उन दोनों की गति को एक प्राण में पिरो देते हैं। तो बेटा! एक माला बन करके वह मेरे पुत्रो! देखो, उसे ग्रहण करने वाला योगेश्वर, नाना प्रकार के ब्रह्माण्ड को अपने में धारण करके, ब्रह्माण्ड को अपने में दृष्टिपात करता हुआ, बेटा! इससे पार होने का प्रयास करता है। आज बेटा! मैं विशेष गम्भीर क्षेत्रों में चला गया हूँ। इतने गम्भीर क्षेत्रों में मुझे जाना नहीं है।

प्राणों का समावेश

परन्तु विचार क्या है आज बेटा! मैं तुम्हें यह उच्चारण कर रहा हूँ कि बेटा! मानव को अपने को ब्रह्मवेता, ऊर्ध्ववेता बनाना है। ऊर्ध्ववेता वह मानव बनता है जो प्राण और मन दोनों का समावेश जानता है। पाँचों प्राणों का समावेश जानता है। पाँच उपप्राणों का समावेश जानता है, बेटा! वह मानो देखो, अपने को ऊर्ध्ववेता बना सकता है ''अध्यनां भविते''मेरे पुत्रो! क्रियाकलाप अपने में धारण करना है। विचार-विनिमय क्या? आओ, मेरे पुत्रो! मैं कहाँ चला गया।

विचार यह गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा हे ज्ञानश्रुति!देखो, यह जो सूर्य है, यह जो ऊर्जा, यह प्रकाश का द्योतक है। यह प्रकाश का द्योतक मानव के नेत्रों को प्रकाशित कर देता है, प्रकाश में रत करा देता है।

योगी के द्वारा क्षुधा, पिपासा की पूर्ति

मेरे पुत्रो! देखो, उस समय गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज से ज्ञानश्रुति जी कहते हैं प्रभु! यह वाक् मैंने कई समय श्रवण किया है। मैं यह जानना चाहता हूँ कि जब यह सूर्य नहीं होता तो मानो प्रकाश का द्योतक कौन बना रहता है? कौन ऐसा अमृत बहाता है? उन्होंने कहा-वह चन्द्रमा है। वह चन्द्रमा ऐसा है जो अमृत को बहाता रहता है अमृत देता ही रहता है। मानो देखो, जैसे एक मानव को जल की पिपासा लग रही है। परन्तु योगी जन क्या करते हैं? कि शीलती प्राणायाम किया। मानो चन्द्रमा से समन्वय करके अपनी पिपासा को शान्त कर लेते है। मानो क्षुधा लग रही है तो देखो, खेचरी मुद्रा में शीतली प्राणायाम का मिलान करके जब वायुमण्डल से ऊर्ध्वामुख करके मानो

उसको अपने में धारण करते हैं तो क्षुधा समाप्त हो जाती है। पोषक तत्वों को वायुमण्डल से योगी अपने में ग्रहण कर लेता है। वह जो ऊर्ध्ववेता है उसे इस अन्नाद की आवश्यकता नहीं होती। बेटा! मैं योग में जाना नहीं चाहता हूँ यह बड़ा अनुभव का विषय रहा है। किसी काल में आज यह बेटा! अनुभव की प्रतिभा से दूरी चला गया है। परन्तु विचार केवल यह देना की चन्द्रमा प्रकाश का द्योतक है। बेटा! प्रभु का विज्ञान कितना नितान्त है, प्रभु की महती कितनी नितान्त है। मानो देखो, ब्रह्मरन्ध्र में जब पूर्णिमा वफो चन्द्रमा की किरणें मानो कान्ति इसमें प्रभावित होती है तो उषेश्वर बन करके मानव को अमृत प्रदान किया जाता है।

योगियों की प्रतिभा

बेटा! मुझे एक वाक् स्मरण आ रहा है। एक समय देखो, मेरे आचार्य सौमभानु ऋषिवर जब अध्ययन कराते थे बाल्यकाल में। तो एक समय वह बोले-चलो, आज मैं तुम्हें कुछ योगियों के दर्शन कराने जा रहा हूँ। तो भ्रमण करते हुए कजली वनों में जा पहुँचे। कजली वनों से भी जब ऊर्ध्वा वनों में पहुँचे तो एक व्रेतकेतु ऋषि महाराज वहाँ विद्यमान थे। व्रेतकेतु ऋषि महाराज शाण्डिल्य गोत्रीय कहलाते थे। व्रेतकेतु शाण्डिल्य के जब हम द्वार पर पहुँचे तो वह अपने में खेचरी मुद्रा का और शीतली प्राणायाम का अभ्यास कर रहे थे। अहिंसा परमोधर्मः'' की पुट लगा रहे थे। तो वहाँ देखो पाँच सिंहराज विराजमान है। मानो वे सिंहराज को उपदेश दे रहे थे कि तुम भी किसी काल में प्राणी थे। मानो यह उपदेश दे रहे थे कि तुम भी प्राणी हो। परमात्मा के राष्ट्र में विद्यमान हो। तुम भी आत्मा हो। तुम भी प्रभु के अमृतमयी पुत्र हो।

तो वह उपदेश दे रहे थे हम उन उपदेशो को श्रवण का रहे थे। तो सिंहराज शान्त मुद्रा में उन उपदेशों को अपने में ग्रहण कर रहे थे। जब ग्रहण कर रहे थे तो मानो जब हमारा ''गमनं ब्रहे'' तो वे सिंहराज हमारे लिए गमन करने लगे। तो ऋषि ने कहा यह अतिथि है। उन्होंने अतिथि कहते ही तो सिंहराजों ने हमारे चरणों की भी वन्दना की और वन्दना करके मानो देखो, हम उस आसन पर विद्यमान हो गये। विद्यमान हो करके ऋषि से कहा कि महाराज! हम यह जानना चाहते है कि यह जो चन्द्रमा भास रहा है, चन्द्रमा सूर्य से प्रकाश ले करके मानो अमृत को देता है। तो यह अमृत हमें केसे प्राप्त होता है? इस अमृत को हम केसे पान कर सकते है।

तो मुनिवरो! देखो, शाण्डिल्य गोत्र वाले ऋषि ने कहा कि महाराज! यह जो तुम्हारा ब्रह्मरन्ध्र है, इस ब्रह्मरन्ध में इंडा, पिङ्गला, सुषुम्ना का मिलान होता है। जब मानो कृतिक-वानन्दकेतु एक नाड़ी होती है। जो मानव के लघुमस्तिष्क से जिसका समन्वय होता है। उस नाड़ी का समन्वय चन्द्रमा की माधुर्य कान्ति से होता है। वहाँ से अमृत ले करके वह ब्रह्मरन्ध्र में प्रवेश करता है। ब्रह्मरन्ध्र में देता रहता है। जब मानो शीतली प्राणायाम करता है, खेचरी मुद्रा में परिणत होता है, दोनों का मिलान करता है। तो दोनों के समन्वय से वह चन्द्रमा से रस ले करके ब्रह्मरन्ध्र में उसकी समावेशता करा देता है। और समावेशता करा करके जितनी भी 'शीतलां भविते लोकाम्'' वेद के वाक् के अनुसार देखो, लोक लोकान्तरो में वह विष्टयाँ गति करने लगती है। और वह आत्मा जो प्राण के ऊपर अश्वस्थ हो गया है वह चित के मण्डल को ले करके नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में क्या, आकाशगंगा में क्या, अवन्तिका में क्या, निहारिका में क्या बेटा! देखो, उसके लिये ब्रह्मांण्ड खिलवाड़ बन जाता है।

चन्द्रमा के कार्य

उपाख्यान जब शाण्डिल्य ऋषि ने यह उपदेश हमें दिया, तो वहाँ से उपदेश को ले करके, हम पुनः अपने आश्रम में आ पहुँचे। तो हमने अपने ऋषि से कहा-प्रभु! शाण्डिल्य ऋषि ने तो ब्रह्माण्ड का बड़ा स्पष्टीकरण किया है। क्या चन्द्रमा इतना प्रकाश देता है? उन्होंने कहा-इससे भी विशेष देता है। यह चन्द्रमा ऐसा अनुपम प्रकाश देता

है कि जब हम माता के गर्भ में रहते है तो यह मानो आपो में प्रवेश करके समुद्रों से अमृत धारा को लेकर के बाल्य को नाभि के द्वारा प्रदान करता रहता है। मानो यह अनुपम चन्द्रमा है यह चन्द्रमा तो सेम कहलाता है। यह सोम है यह प्राण को नचाने वाला है। परन्तु देखो मेरे पुत्रों हम आश्चर्य चकित हो गये।

तो विचार आता है कि गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा कि यह जो चन्द्रमा है, यह सोम है। यह प्रकाश के देने वाला है, नेत्रों में ही प्रकाश नहीं यह आत्मप्रकाश, अभ्युदय हो करके प्रकाश का द्योतक बन जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, उस समय ऋषि ने कहा-कि महाराज यह चन्द्रमा तो एक अनुपम है। उन्होंने कहा-हाँ यह एक अनुपम है। यह चन्द्रमा सूर्य से सहायता लेता है और यह रात्रि का पति बन करके अन्धकार का पति बन करके यह प्रकाश देता है। तो इसीलिये मुनिवरो! देखो, मृत्यु से वह मानव पार हो सकता है, जो मानव अन्धकार को नष्ट कर देता है। अपने मानवीय हृदय से यह दूरी कर देता कि अन्धकार तो कोई वस्तु है ही नहीं। केवल संसार में प्रकाश ही प्रकाश है। मुनिवरों! यह प्रकाश है, मानो ज्ञान है। प्रत्येक वस्तु में तुम्हें ज्ञान की तरङ्गें दृष्टिपात आने लगेंगी। जब विवेक जागरूक हो जाता है, अन्धकार नहीं रहता और जब अन्धकार नहीं रहता तो बेटा! देखो, रात्रि नहीं होती और रात्रि नहीं होती तो आलस्य, प्रमाद समाप्त हो गया 'आलस्यं प्रमादं ब्रह्मवाचाः' देखो, जब आलस्य प्रमाद नहीं रहता, अन्धकार नहीं रहता तो रात्रि नहीं रहती और जब रात्रि नहीं रहती तो बेटा! मानव की मृत्यु क्यों होने लगी। मृत्यु भी नहीं होती क्योंकि मृत्यु तो अज्ञान में होती है, अभिमान भी अज्ञान में है। इसलिये प्रत्येक वस्तु को ज्ञान की दृष्टि से, विवेक में लाने का प्रयास करो।

मेरे पुत्रो! देखो, विचार विनिमय यह कह रह था कि हमारा जीवन ऊर्ध्ववेता केसे हो? ऊर्ध्ववेता तब बनेंगे जब हम प्रभु को प्रत्येक कण-कण में दृष्टिपात करेंगे और उस कण-कण में प्रभु का वास मानो उसका गृह हम एक-एक परमाणु को स्वीकार करेंगे। तो प्रभु का,

हमारी मानवीय तरंगो का मानो समावेश हो करके बेटा! हममें ज्ञान ही ज्ञान, प्रकाश ही प्रकाश दृष्टिपात आयेगा, तो अन्धकार रहेगा ही नहीं। बेटा! हमारा जीवन ऊर्ध्ववेता बन जाता है। ऊर्ध्वा क्या है? यह जो ब्रह्मचरिष्यामि है मानो दो ही शब्द है बेटा! संसार में ब्रह्म और चरी। ब्रह्म चरी का अभिप्रायः चरी नाम प्रकृति का, ब्रह्म नाम परमपिता परमात्मा का। बेटा! परमाणुओं का समावेश प्रकृति में होता है परमाणु ब्रह्म का आयतन माना गया है और वह आयतन होने से ही मेरे पुत्रो! चरी उसमें समावेश कर जाती है। और चरी में ब्रह्म समावेश कर जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, उन दोनों को जानना अंग और उपाङ्गों से जानना, प्राण सूत्र में इनको पिरोने का नाम ही। मेरे पुत्रो! देखो, ऊर्ध्ववेता बनना है। ब्रह्मचरिष्यामि बनना है, ब्रह्मवेता बनना है। बेटा! जो ब्रह्म को एक-एक कण-कण में दृष्टिपात करता है। अरे, मानव! जहाँ तेरा मन जाता है, वही तो ब्रह्म है, और जहाँ मानो वह प्राणी अपनी गतियाँ कर रहा है वहीं ब्रह्म है। जब यह स्वीकार करता है, तो बेटा! उस मानव की प्रवृतियाँ ऊर्ध्ववेता बन जाती है जो ''मम ब्रहा वाचन्नं ब्रह्म लोकाम्'' बेटा! देखो, वेद के प्रकाश में रत हो करके अन्धकार को नष्ट करके बेटा! अपने अन्तःकरण में प्रकाश में रत हो जाता है।

आओ मेरे पुत्रो! आज का विचार-विनिमय क्या, मेरे पुत्रो! देखो, प्रत्येक वेद के मन्त्र में 'यागां भविते लोकाम्' हृदय रूपी गुपफा में एक मानव याग कर रहा है, एक बाह्य जगत् में याग कर रहा है। मेरे पुत्रो! देखो, शुभ कर्मों में याग हो रहा है। याग ही याग दृष्टिपात आता है। याग जो है वह ब्रह्म का आयतन माना गया है। मानो वह तो उसका गृह है जब ये स्वीकार करता है तो बेटा! मानो ऊर्ध्ववेता बन करके, इस सागर से बेटा! वह पार हो जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! मैं विशेष विवेचना तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिये कि मेरे पुत्रो!

कि हम परमब्रह्म परमात्मा की उपासना करते हुए ब्रह्म को अपनी चरी बना करके और चरी को मानो ब्रह्म सूत्र में पिरो करके बेटा! जब हम गति करेंगे तो हमारा जीवन एक महान बनेगा, पवित्र बनेगा अभ्युदय हो जायेगा। तो बेटा! हमारा जीवन ब्रह्मचरिष्यामि, ऊर्ध्ववेता बन करके हम प्रभु को प्राप्त हो जायेंगे। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्रायः यह कि मानव को 'अंहिसा परमोधर्मः में रत रहना चाहिए। अपने मानव जीवन को महान बनाने के लिये प्रभु का चिन्तन करते हुए इस संसार सागर से पार होना है। यह है, बेटा! आज वाक्, समय मिलेगा तो मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन। दिनांक, 8.4.85, ए-332, सरोजनी नगर, नयी दिल्ली

११ राष्ट्रीय क्रियाकलाप याग ०९ ०४ १९८५

पूर्व का प्रवचन अनुपलब्ध है

गृह की पवित्रता का आधार

यह वाक् मैंने पुरातन काल में भी वर्णन कराया मेरे प्यारे! देखो, रेंगणी भारद्वाज अपने में नाना प्रकार के विचारों में तल्लीन रहते थे। वह प्रातः कालीन गृह स्वामिनी को ले करके प्रायः वह यागों में परिणत हो जाते और याग होता रहता और उसकी सुगन्ध आती रहती। मुनिवरो! देखो, विचारों का आह्वान भी होता रहता। विचार रूपी याग भी होता रहता। जब वह विचार करते कि हमारा याग क्या है? हमारा वास्तव में क्रियाकलाप क्या है? इस प्रकार का जब विचार विनिमय बेटा! प्रारम्भ होता तो गृह के परमाणुवाद वह मानो धाराएँ मिश्रित हो करके और वह गृह की आभाएँ बेटा? अनूठी बन जाती हैं, तो बेटा! गृह पवित्र बन जाता है। गृह में मुनिवरो! देखो, एक सुगन्ध आने लगती है।

मानव जीवन की पवित्रता

मुझे वह काल स्मरण है बेटा! जब ऋषि-मुनि अपने में विद्यमान हो करके अनुसन्धान करते रहे हैं और विचारों के ऊपर उनकी धाराएँ प्रारम्भ होती रही हैं। वायु मण्डल में देखो, विचारों के लिये याग करते हैं। एक मानव अपने में सुगन्धित करना चाहता है। वह सुगन्ध से अपने में सुगन्धित हो करके मेरे प्यारे! एक महानता की धारा बन करके, ओजस् बन करके रहती है। जिस आभा में मानव के जीवन की धारा, एक महानता में परिणत हो करके बेटा! मानों यागो का प्रारम्भ होता है। और वह दोनों प्रकार के विचारों का मानो समन्वय करते हुए मुनिवरो! देखो, वह वायु की धाराओं में, वायु की तरंगो में तरङ्गित हो करके ऐसे-ऐसे महापुरुष हमारे यहाँ पुरातन काल में बेटा! जगत् की धाराओं में परिणत होते रहे हैं। बेटा! सूर्य की किरणों के साथ अपना आह्वान करते रहे हैं। उनमें गति करते रहे हैं। जैसे परमाणु का वाहन बन करके निर्माणित हो करके बेटा! वायुमण्डल में किरणों के साथ उसकी ऊर्जा

के साथ में गति करता रहता है। इसी प्रकार हमारे यहाँ परम्परागतों से एक मानवीयता, विचित्रता में परिणत रही है। आज मैं विशेष विवेचना देना नहीं चाहता हूँ, विचारों की एक महानता में जा रहा था। प्राणों की एक आभा में रत होता हुआ, मनस्तव की आभा में रत होते हुए बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने याज्ञिक जीवन की धाराओं को उपलब्ध करते हुए मानवता को ऊँचा बनाने का प्रयास किया। तो मानव वही धारा बन करके एक मानव के जीवन की एक पवित्र आभा बन करके बेटा! द्यौ लोक को प्राप्त होती रही है।

यज्ञोमयी विष्णु

तो आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ आज मेरे प्यारे महानन्द जी अपने दो शब्दों की विवेचना प्रगट कर संकेगे। आज का हमारा विचार केवल यह है कि ''यज्ञोमयी विष्णु'' मानो वह पालन करने वाला उसका अमूल्य ये जगत् है संसार में जितना विज्ञान, सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके अब तक विज्ञान को जाना है जिस भी प्राणी ने, वह परमात्मा की सृष्टि के ऊपर मानो अन्वेषण होता रहा है। उसी सृष्टि के आधार पर जीवन की धाराओं का निर्माण होता है। कोई वैज्ञानिक ऐसा नहीं हुआ जिसने अपने द्वार से किसी वस्तु को जान लिया हो। क्योंकि यह मानव शरीर जहाँ लघु मस्तिष्क की चर्चाएँ मैंने इससे पूर्व काल में प्रगट कीं। यहाँ से भी जो जन्म होता है धाराओं का, वह भी परमात्मा का बिखरा हुआ ज्ञान, विज्ञान है। वायुमण्डल से बाह्य जगत् में किरणों से ले करके पार्थिव

तत्वों तक पंच महाभौतिक जो आधार है इसके अन्तिम छोर से और प्रारम्भ तक मानो अब तक कोई वैज्ञानिक ऐसा नहीं हुआ है जो सर्वत्र मानो सृष्टि के अन्तर्गत भ्रमण करता रहा हो। अथवा इसकी परिक्रमा करता रहा हो। तो आज अब मैं अपने विचारों को विराम देना चाहता हूँ। मेरे प्यारे महानन्द जी अपने कुछ शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जी का प्रवचन ओ३म् यशो स्वंजनाः मां धेनु रथौ सर्वं भद्रा मनुः। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी-अभी मेरे पूज्यपाद गुरूदेव कुछ विज्ञान की चर्चा कर रहे थे। कुछ तरंगो की चर्चा कर रहे थे। परन्तु मैं विज्ञान के ऊपर तो अपनी कुछ विवेचना नहीं दे सकूंगा। केवल आज मैं अपने पूज्यपाद गुरूदेव को कुछ परिचय देने के लिये चला आता हूँ। यह जो संसार है, आधुनिक काल में जहाँ यह हमारी आकाशवाणी जा रही है। यहाँ मानो देखो, यागो की रचनाएँ, यागों की प्रतिपादिता, मैं अपने में दृष्टिपात कर रहा हूँ। मैं अपने में दृष्टिपात करता हुआ अनुभव कर रहा था कि यह मानवीयत्व केसा और वायुमण्डल केसी दशा वाला बन गया है। परन्तु मैं अपने यजमान के लिये, मेरी सदैव यह कामना रहती है कि हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। क्योंकि जीवन संसार का एक महानतम शब्द कहा जाता है। जिसमें जीवन की धाराएँ आती रहती हैं।

याग से वायुमण्डल का शोधन

जैसा मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी-अभी कुछ धाराओं के सन्म्बन्ध में अपनी कुछ चर्चाएँ की हैं, मैं भी उसी सन्दर्भ में अपने को ले जाना चाहता हूँ, और हम यह उच्चारण करना चाहते हैं कि हे यजमान! तेरे जीवन की धारा सदैव पवित्र बनी रहे। परन्तु यागों का चलन हमारे यहाँ परम्परागतों से ही माना है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो उसकी विवेचना बड़े विस्तार पूर्वक प्रगट किया करते हैं। उन्होंने भी यह माना है जितना भी संसार का सुकर्म है, मानव का जितना भी सुकर्म है वह सर्वत्र एक याग है।

परन्तु जब सुकर्म याग है तो यह अग्निहोत्र क्या है? मानो उसका उतर यह प्राप्त होता है कि यह भी सुकर्म है। देवताओं का पूजन है, देवताओं का भोज्य है। देवताओं का आहार और साकल्य बन करके वायु को पवित्र, वायुमण्डल को महान बना रहा है। क्योंकि जिस वायुमण्डल में मानव श्वास लेता है, जिस वायुमण्डल में प्रत्येक अपना क्रियाकलाप कर रहा है, उस वायुमण्डल का यह शोधन करने वाला है, परन्तु जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह कहा करता हूँ कि महान से महान जो क्रियाकलाप है वह यागों में परिणत होता रहा है। वह मानो एक यज्ञोमयी स्वरूप है। जिसका वर्णन करते हुए मानव अपने जीवन को महान और पवित्र बनाता रहता है परन्तु जब मैं यह विचारता रहता हूँ कि यह संसार कहाँ चला गया है?

वैदिक काल की गरिमा

परन्तु देखो, सु-क्रियाकलापो में मानव का विचार इतना क्षीण हो गया है कि उसके ऊपर पुनः से विचार विनिमय करने की आवश्यकता है। क्योंकि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जितना भी समाज का क्रियाकलाप है, उसका जो सन्म्बन्ध है वह राष्ट्र से पिरोया हुआ है क्योंकि राष्ट्र में जो भी क्रियाकलाप होते रहे हैं, वह पर्यावरणार्थी के अनुसार अपने जीवन को बनाती रहती है। यदि विज्ञान की धारा राष्ट्र के वाङ्मय में प्रवेश कर गयी है अथवा उसके गृह में गृह स्थली बन गयी है, तो प्रजा, उसी के अनुसार विज्ञान का उपयोग करना प्रारम्भ कर देती है। यदि वह विज्ञान राष्ट्र में उसको प्रोत्साहन, राष्ट्रीय धारा प्राप्त नहीं होगी तो उसे प्रत्येक समाज अपनाने के लिये उसे जिस भी स्वरूप में हो, राष्ट्रीयकरण होते ही उसको अपनाना प्रारम्भ कर देता है। तो इससे मुझे यह सिद्ध हुआ, यह प्रतीत हुआ कि राजा के राष्ट्र में ऊँचा क्रियाकलाप होना चाहिए। जिससे मानो यह दृष्टिपात किया गया है, कि जिस भी काल में, राष्ट्र में राजा ने ऊँचा क्रियाकलाप अपनाया है, समाज उसी के अनुसार बरतने लगा है। जब

राष्ट्र ने यागों की अवहेलनाएँ कीं, राष्ट्र में देखो, शुद्ध विचारों को ले करके जब उनकी अवहेलना की तो समाज में उसको मानो देखो, एक प्रतिशोध स्वीकार कर लिया। उसकी प्रतिभा में इतना ओजस्तव नहीं रहा। परन्तु देखो, इससे हमें यह सिद्ध हुआ, प्रतीत हुआ है कि राजा को चाहिए कि अपनी महान क्रिया, अपनी महान जीवन को बनाता हुआ और उसका क्रियाकलाप ऐसा होना चाहिए। जो वैदिक साहित्य में मानो एक बलवती आ जाये। वैदिक साहित्य में पुनः से प्राण आ जाये।

रूढ़ियाँ

क्योंकि वैदिक साहित्य का बहुत समय हो गया, जब से ह्रस होता चला आ रहा है। मैंने अपने पूज्यपाद गुरूदेव को ये प्रगट कराते हुए कहा कि मानो इसका ह्रस होते हुए बहुत समय व्यतीत हो गया है। महाभारत काल के पश्चात् इसका ह्रस होता रहा। परन्तु देखो, कोई भी सम्प्रदाय बन करके आया, उसने भी यागों के ऊपर आक्रमण किया, कोई भी मानव, चाहे वह बौद्ध रूप में आया हो, चाहे वह जैन रूप में आया हो वह सर्वत्र इस याग और वैदिकता के ऊपर आक्रमण करता चला आया है। तो इसलिये मैं तो यह कहा करता हूँ अपने पूज्यपाद गुरुदेव को भी मैंने कई काल में यह परिचय कराया, यह विचार दिया कि राष्ट्र को चाहिए पुनः से अपने याग और वैदिकता को अपनाने वाला बने। परन्तु अपनाना यह इसलिये नहीं चाहता क्योंकि उसके हृदयों में रूढ़ि का स्थान बन गया है। समाज में, राष्ट्रवाद में रूढ़ि का स्थान बन गया है। और वह जो रूढ़ियाँ है, भिन्न-भिन्न प्रकार की वह राष्ट्र को विनाश के मार्ग पर ले जाना चाहती हैं। परन्तु मैंने बहुत पुरातन काल में, अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यही प्रार्थना की कि राजा को चाहिए कि अपने राष्ट्र में रूढ़ियों को न पनपने दे। चाहे वह विज्ञान की रूढ़ि है, चाहे वह धर्म और परमात्मा के नामो की रूढ़ि कहलाती है, चाहे वह मानो जातीयता की रूढ़ि है यह सर्वत्र रूढ़ियाँ देखो, राष्ट्र का जो प्राण है, उस प्राण को सहायक न बन करके वह प्राण को अप्राण में परिवर्तित करती रहती हैं।

विज्ञान की त्रासदी

तो विचार क्या मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव वफो कई काल में प्रगट कराया कि आधुनिक काल का जो विज्ञानवेता है वह विज्ञानवेता समाज को त्रास देता रहता है। मृत्यु के आँगन में, मृत्यु की चर्चा करता रहता है। जीवन की चर्चा नहीं करता। यदि वह जीवन की चर्चा करने लगे, तो विज्ञान सार्थक बन जाता है। मानो देखो, जैसा पुरातन काल में मैंने बहुत पुरातन काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव को प्रतीत कराया था, परन्तु इन्हें तो पूर्व ही इसका प्रतीत है। मैं पुनः से यह स्मरण कराता रहता हूँ कि महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों समुद्रों के तटों पर विद्यमान हो, करके विज्ञान की ऊँची से ऊँची उड़ान उड़ते रहते थे। सोम के ऊपर, सूर्य की धाराओं के ऊपर नाना प्रकार का विज्ञान, नाना प्रकार की धाराओं में वह परिणत होते रहते। वह अपने में इसलिये सुसज्जित और यत्रों के निर्माण करते जहाँ उनको प्राण की धाराएँ प्राप्त होती हैं।

विज्ञान की दिशाहीनता

जैसा मैंने भारद्वाज मुनि के सन्म्बन्ध में, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने भी कई काल में वर्णन कराया। परन्तु विज्ञान अपनी स्थलियों में सदैव नृत करता रहा है। एक काल में नहीं, दो काल में नहीं परन्तु सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके जब मानव संसार में आता है तो विज्ञान के वांड्मय में अपने को ले जाता है। विज्ञान की तरंगो में तरड्डित होता हुआ, इस विज्ञान को मानव देखो, सार्थक बनाता रहा है। किसी काल में अग्नि के परमाणुओं को अग्रणीय बनाता रहा है, किसी काल में जल के परमाणुओं को और पृथ्वी के परमाणुओं का समन्वय करता रहा है, परन्तु देखो, किसी काल में त्रिगुणावाचक परमाणु को ले करके वह विज्ञान में रत होता रहा है।

परन्तु देखो, आधुनिक काल का जो विज्ञान है वह ऐसी-ऐसी तरंगो को ले करके गति कर रहा है, ऐसी तरंगो से परिणत हो रहा है। मानो देखो, उसका आह्वान अशुद्ध रूपों में परिणत हो रहा है।

चित्रावलियों की दुरुपयोगिता

मैंने बहुत पुरातन काल में पूज्यपाद गुरुदेव को कहा था, कि पुरातन काल में नाना प्रकार की चित्रावलियाँ मानव के चित्रों में रत रही हैं। संसार में है या नहीं उनके भी चित्रों का आह्वान भी उन चित्रावलियों में रहा है। आधुनिक काल की जो चित्रावलीवाद है उसमें मानो नृत्यिका नृत्य कर रही है और उस नृत्यिका के नृत्य से मानव का हृदय इतना संकुचित बन गया है उन धाराओं में, अपने में धारित बन गया है। वह यह नहीं विचार रहा है कि यह विज्ञान का दुरुपयोग है। तेरे ब्रह्मचर्य का ह्रस हो रहा है। तेरे ब्रह्मचर्य का विनाश हो रहा है। परन्तु इसके ऊपर विचार-विनिमय नहीं रहा है।

महर्षि भारद्वाज का विज्ञान

परन्तु पुरातन काल में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने स्मरण कराया था कई कालों से मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गाड़ीवान रेवक मुनि की चर्चा करते रहते हैं। भारद्वाज मुनि की चर्चा तो प्रायः करते ही रहते हैं। परन्तु जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के मानो इस कथन पर विचार विनिमय करता हूँ, कि जहाँ मानो विज्ञान देखो, अपनी स्थलियों में कितना विशाल रहा है। भारद्वाज मुनि के यहाँ मानो एक रक्त के बिन्दु से ही चित्रों का चित्रण हो रहा है। वह यन्त्रवाद, वह चित्रावलीवाद वर्तमान काल में नहीं है। उसका ह्रस हो रहा है। उसके ऊपर विचार नहीं हो रहा है। एक रक्त का बिन्दु है, एक मानव मानो एक स्थलियों पर विद्यमान है और उसके विद्यमान होने पर उसके प्रस्थान करने के पश्चात् भी वह जो अपने श्वासों के, वह जो अपने एक-एक श्वास के साथ में चित्रों को वायुमण्डल में प्रवेश कर गया है। आह ढाई घड़ी के पश्चात् मानव उन श्वासों के, उन प्राणत्व के ऊपर यन्त्रों में ले करके वह चित्र दृष्टिपात आते रहे हैं। एक मानव मानो यहाँ विद्यमान है। मैं यह विचारता रहता था।

ऋषियों के तपे हुए परमाणुओं का प्रभाव

मैंने बहुत पुरातन काल में एक समय ब्रह्मचारी कवन्धी से यह प्रश्न भी किया था। मैं अपने पूज्यपाद गुरूदेव से भी यह प्रश्न करता रहा कि अमृतम् जैसे एक मानव कोई एक महापुरुष मानो तपस्या कर रहा है। तो मानव उस स्थली के लिये गमन करता है, कि यहाँ ऋषि आये थे, यहाँ किसी काल में महात्मा जैमिनी ने तपस्या की थी, कोई कहता है, कि यहाँ किसी काल में गौतम ने तपस्या की, कोई कहता है कि यहाँ ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु और विभाण्डक मुनि ने तपस्या की, यहाँ वशिष्ठ जी का वास रहा है, वायु मण्डल अब तक पवित्र बना रहा है। परन्तु देखो, मैंने यह कहा था पूज्यपाद से, कि हे प्रभु! इसके मूल में क्या है? इसके मूल में कोई न कोई रहस्य अवश्य होगा। तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे वर्णन कराते रहते। कि इसके गर्भ में यह है, इसमें एक रहस्य यह विद्यमान है कि उस मानव के जो विचार हैं, उस मानव के जो तपे हुए परमाणु हैं, वह परमाणु उस स्थलियों पर भ्रमण करते रहते है।

तरंगवाद

तो हमारे यहाँ भारद्वाज मुनि महाराज के आश्रम में एक समय मैंने यह कहा कि हे ऋषि के पुत्र! हे कवन्धि! इसके मूल में क्या है? तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने इस वाक् को इसी प्रकार वर्णन किया। उन्होंने कहा-कि महापुरूषों के जो तपे हुए विचार हैं अथवा उनके गृह में जो तरङ्गवाद गति कर रहा है, वे तरङ्गें मानो तरङ्गित होती

हुई और मानव के लिये सुखद बन करके, आनन्दित बन करके जैसे मानो देखो, ऋषि भारद्वाज के यहाँ ऐसे परमाणुवाद, एक यन्त्र का निर्माण हुआ था। और वह यन्त्र इसी प्रकार का था कि उस यन्त्र में मानव के चित्र आते। वह वहाँ है या नहीं परन्तु श्वासो के साथ में परमाणुवाद जो उतने आकार का, मानव के आकार का परमाणुवाद रूपों में गति कर रहा है। वह मानो उनके शब्द गतियाँ कर रहे हैं। उनके चित्र उस यन्त्र में प्रवेश हो जाते हैं। इस परमाणुवाद से आधुनिक काल का वैज्ञानिक मानो उससे वंचित हैं।

महाराजा हनुमान एवम् गणेश का विज्ञान

मुझे वह काल स्मरण है एक समय महाराजा हनुमान की चर्चाएँ मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई कालों में की है। हनुमान और गणेश जी दोनों समुद्र के तट पर एक समय एक यन्त्र का निर्माण कर रहे थे। कि यह जो चन्द्रमा है यह समुद्रों से सोम को अपने में ग्रहण करता है। और सोम को ले करके उसे कुछ परमाणु वत्रासुर को अर्पित कर देते है, और कुछ वही देखो, रात्रि में पृथ्वी में प्रदान कर देते हैं। कुछ तरङ्गो में तरङ्गित हो जाते हैं। तो वह उस परमाणु के ऊपर एक यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे। उन यन्त्रों की छाया, उन यन्त्रों का आकार उन परमाणुओं का आकार यन्त्रों में दृष्टिपात आता था। विचार आता था आधुनिक काल का विज्ञान उस यन्त्रवाद से विंचत है। परन्तु देखो, जब यह विचार कि हमारे पूर्वज, वायुमण्डल में जो शब्दों के रूप में गति कर रहे हैं। मानो उनका क्रियाकलाप जो वहाँ निर्णायक बना हुआ है। तो उनके चित्र, उनके शब्दों के चित्र, चित्रों के साथ में उनका क्रियाकलाप मुझे प्रायः दृष्टिपात होता रहा। इस प्रकार का विज्ञान परम्परागतों से इस मानवीय वांङ्मय में, विज्ञान के वांङ्मय में प्रायः प्रगट होता रहा है। विश्वसनीय बना हुआ है।

राष्ट्रोन्नति के लिए पवित्र आहार

तो विचार विनिमय क्या, मैं कोई विवेचना देने नहीं आया हूँ। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह वर्णन कराने के लिये आया था। कि यह जो राष्ट्रवाद है, इसको चाहिए कि वह इस प्रकार के परमाणु विज्ञान को ले करके और यागों में परिणत हो करके अपने राष्ट्र को महान बनाना चाहिए। यह राष्ट्र उस काल में उतम बनता है जब यह सुगन्धित हो जाता है। इस प्रकार के विचारों की सुगन्धि जैसे मेरे पूज्यपाद गुरूदेव भी अभी-अभी प्रगट करा रहे थे। पूज्यपाद गुरुदेव के विचारों में इतनी गम्भीरता, यौगिकता रहती है कि उसका वर्णन करने के लिये मैं सदैव मौन रहता हूँ। परन्तु केवल विचार यह देने के लिये, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को परिचय देने के लिये आया हूँ कि यदि राजा अपने राष्ट्रवाद को ऊँचा बनाना चाहता है, तो उसका आहार पवित्र होना चाहिए। आहारों में जब पवित्रता होती है, तो विचारों में सुगन्धि आनी प्रारम्भ हो जाती है। इसीलिये जहाँ राष्ट्र का आहार अशुद्ध बना हुआ है, तो प्रजा के आहारों को केसे पवित्र, उनकी आचार संहिता केसे पवित्र बन सकती है। मुझे आश्चर्य आता रहता है मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से उच्चारण करता रहता हूँ,

राजा सोमतीति द्वारा कृषि उद्यम

देखो, मुझे कई काल में अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा राजाओं के यहाँ जाने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव बोले एक समय कि चलो, आज भ्रमण करने। देखो, भ्रमण करते हुए एक समय राजा सोमतीति राजा के यहाँ पहुँचे। तो सोमतीति राजा अपने में विद्यमान थे। जब उनके द्वार पर पहुँचे तो राजा ने पूज्यपाद के लिये अपनी राज्यस्थली को त्याग दिया, और यह कहा-कि आईये, भगवन्! पधारिये वह विराजमान हो गये। राजा ने अपनी गृह लक्ष्मी को आह्वान करके कहा-ऋषि वर्फो कुछ आहार के लिये प्रार्थना करो। उन्होंने प्रार्थना की कि महाराज! कुछ आहार कीजिये। उन्होंने कहा, पूज्यपाद ने कहा-कि मैं तुम्हारे राष्ट्र का अन्न ग्रहण

नहीं करूँगा। क्योंकि राष्ट्र के अन्न में दूषितपना होता है। मानो उसमें रजोगुण गुथा हुआ होता है, इसलिये मैं ग्रहण नहीं करूँगा। परन्तु दोनों पति-पत्नी राज लक्ष्मी और राजा देखो, नतमस्तिष्क हो गये और उन्होंने कहा-प्रभु! मेरे गृह में राष्ट्रीय अन्न नहीं है। मेरे भोजनालय में मेरी पत्नी भोजन को पकाती है हम स्वयं कृषि का उद्यम करते है। हम स्वयं अपने में कृषि उद्यम करके उसके द्वारा जो अन्न की उपलब्धि होती है, अन्न उत्पन्न होता है। उसको हम पान करते हैं और उसको पान करके अपने राष्ट्र का क्रियाकलाप करते हैं।

प्रत्येक गृह में याग

तो उस समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मानो इस वाक् को स्वीकार कर लिया और स्वीकार करके जब राष्ट्र गृह में पहुँचे तो वहाँ एक स्थान बना हुआ था। जिसमें वे भोजन करते थे। वह बहुत साधारणत्व स्थली थी। कृषि उद्यमं से जो अन्न प्राप्त होता उनका वह भोजन बना करके, तपा करके, अपने में पान करते और राष्ट्र का क्रियाकलाप करते थे। प्रातः कालीन राजलक्ष्मी राजा और उनके गृह में जो बाल्य थे प्रत्येक गृहपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करते। गृहपथ्य नाम की अग्नि के पूजन का अभिप्रायः यह है कि गृह में माता पिता अग्नि का प्रकाश करते रहते थे। मानो देव पूजा करते रहते थे। देव पूजा ऐसी थी कि राजा के राष्ट्र में प्रत्येक गृह में याग होता रहा है। प्रत्येक गृह सुगन्धित रहा है। तो मानो जब हम देवपूजा करेंगे, तो हमारे शरीरों में जो देवता क्रियाकलाप कर रहे हैं जैसे पृथ्वी जल, अग्नि, वायु, पंच महाभौतिक है। सूर्य अपना प्रकाश दे रहा है, चन्द्रमा अपना अमृत दे रहा है, वायु प्राण दे रहा हैं अग्नि उष्ण बना रहा है। मानो पृथ्वी गुरुत्व दे रही हैं और यह अन्तरिक्ष अवकाश दे रहा है। यह परमाणु वादय अपने में भरण कर जाते हैं। जब याग की अग्नि उद्बुध होती है, शाकल्य प्रदान किया जाता है। तो वह शाकल्य शरीरों में परमाणुवाद बन करके देवता को प्रसन्न करता है। तो यहाँ दो देवता जड़वत् और चैतन्य वत्। इसलिये बुद्धिमान अपने उद्गार देता है। अपने उद्गार दे करके केवल उनके हृदय में यह भावना रहती है कि मेरा राष्ट्र पवित्र बन जाये। धर्म और मानवीयता की रक्षा होते हुए राजा का राष्ट्र पवित्र बन जाता है।

आधुनिक काल में जब मैं राष्ट्र के ऊपर चिन्तन करने लगता हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव! एक राष्ट्रवाद तो वह राजा के राष्ट्र में याग हो रहा है, अन्न को पान किया जा रहा है। जो स्वयं देखो, कृषि उद्यम करके, अन्न को ले करके राष्ट्र का क्रियाकलाप कर रहा है। और आधुनिक काल का राष्ट्र ऐसा है। कि प्रजा के श्रंगार को हनन करके राष्ट्र का क्रियाकलाप विशुद्ध रूप से नहीं कर पाता। जब मैं यह विचारता रहता हूँ। कि पुरातन काल की वार्ताएँ आधुनिक जगत् में जब मानो देखो, समाज में उन दोनों का समन्वय करता हूँ तो आश्चर्यमय जीवन की धाराएँ प्रतिपादित होने लगती हैं।

यथा राजा तथा प्रजा

परन्तु जब मैं यह विचारता रहता हूँ कि वास्तव में राष्ट्रवाद को पवित्र बनना है और प्रजा को महान बनना है क्योंकि देखो, प्रजा राष्ट्र के आधारित हो करके ही महान बनेगी। विज्ञान का दुरूपयोग नहीं होना चाहिए। विज्ञान के दुरुपयोग में देखो, समाज का ह्रस होता है, निष्क्रियता आती है। प्रमाद आता है, आलस्य आ जाता है, ब्रह्मचर्य दूषित हो जाता है। देखो, प्रत्येक प्राणी को चाहिए कि इन चित्रावलियों में ऋषि-मुनियों के चित्र होने चाहिए। ऋषि-मुनियों के यागों का क्रियाकलाप होना चाहिए। धर्म और मर्यादा की वार्ता होनी चाहिए। परन्तु नाना प्रकार के सम्प्रदायों में जो त्रुटियाँ है उनका ह्रस होना चाहिए।

राष्ट्र विनाशक कारण

जो राजा के राष्ट्र में धर्म एकोकी वचन में रहना चाहिए। जब मैं विचारता हूँ कि रूढ़ियों के रहने से समाज

में एकोकी धर्म नहीं, नाना धर्म की चर्चा करता है प्राणी। तो मैं यह कहता हूँ कि हे भोले प्राणी! नाना धर्म तो होते ही नहीं, धर्म तो एकोकी वचन होता है। तू नाना धर्म कहाँ से उच्चारण कर रहा है। परन्तु देखो, क्योंकि वह रूढ़ियाँ हैं। उन रूढ़ियों को जब राजा धर्म स्वीकार करता है तो राजा के राष्ट्र का विनाश तो अवश्य होना है। परन्तु देखो, किसी भी काल में ऐसा नहीं हुआ जब विनाश नहीं हुआ हो। रूढ़ियों के आने पर जब यहाँ एकोकीकरण होता है, एकोकी वचन होता है एकोकी क्रिया कलाप होता है तो राजा के राष्ट्र में महानता की प्रतिपादितता रहती है। देखो, रक्तभरी क्रान्ति के अवशेषों का मैंने पुरातन काल में मेरे पूज्यपाद गुरूदेव ने यह वर्णन कराया था कि रक्तभरी क्रान्तियाँ, समाज में उसी काल में आती हैं जब नाना रूपों में अपने आपको प्रतिपादन करने लगता है। एकोकी वचन नहीं होता, एकोकी का वर्गीकरण भी नहीं हो पाताँ तो समाज की प्रतिभा समाप्त हो जाती है। राजा के राष्ट्र में यदि चरित्र नहीं तो प्राण चला जाता है मानव के द्वारा चरित्र नहीं है तो मानव का प्राण चला जाता है। उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है। विज्ञान में जब जीवन की धाराएँ देखो, प्रीति में प रह करके भयभीतता में परिणत हो जाती हैं, परास्त में परिणत हो जाती हैं तो विज्ञान मृत्यु बन करके रहता है।

कर्तव्यवाद

आज मैं विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को कुछ परिचय कराने के लिये आया हूँ। आज का विचार यह क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, विज्ञान के ऊपर अपना एकोकीकरण धर्म और मानवता की रक्षा में सदैव तत्पर रहें। वह रक्षा उसी काल में होगी, जब प्रत्येक प्राणी अपने कर्तव्यवाद का पालन करता रहेगा। तो जब मानव की धारा पवित्र बन करके और वह स्वाहा को द्यौ लोक में पहुँचाने के लिये तत्पर हो जायेंगे। तो आज मैं विचार न देता हुआ, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय करा रहा था कि हे यजमान! मेरा हृदय यजमान के साथ रहता है। इनके जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, इसके पश्चात् मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊंगा।

मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में, एक बड़ी विडम्बना रहती है। मानो इनके हृदय में एक दाह रहती है। प्रभु! सदैव इनके वाक्यों की पूर्ति करते रहें। आज का विचार मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक याग के सन्म्बन्ध में, यजमान के सन्म्बन्ध में कुछ वाक् कहा। परन्तु विचार क्या, हमारा भी यह विचार रहता है कि यजमान के जीवन की धाराएँ, सौभाग्य, सदैव अखण्ड बना रहे। आज के विचार उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम अपने गृह में, राष्ट्र में महानता का प्रतिपादन करते रहें। विज्ञान का सदुपयोग होता रहे, क्योंकि जिससे वायुमण्डल पवित्र बन जाये। वायुमण्डल में पवित्रता तब ही आती है जब विज्ञान का सदुपयोग हो। मानव अपने विचारों में महान बना रहे तो इसके साथ आज का विचार अब हमारा समाप्त होने जा रहा है शेष चर्चाएँ कल प्रगट करेंगे अब वेदों का पठन-पाठन। ओ३म् रथं आभ्यां गतौ सर्वं आपाः रथं ब्रह्मः दिनांक, 9.4.85 ओ३म् यनिता मानौ सर्वा रथं वाचाः। ए-332, सरोजनी नगर नयी दिल्ली, ओ३म् चन्द्रमः दिव्यां रथं मया।

१२ महर्षि वशिष्ठ एवम् महर्षि सोमकेतु का सम्वाद ११ ०४ १९८५

जीते रहो, देखो, मुनिवरो, आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में, उस महामना देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे सर्वेश्वर है मानो उसी की प्रतिभा इस सर्वत्र ब्रह्मांड में ओत-प्रोत है। वह अनुपम है। क्योंक प्रत्येक वेद मन्त्र, उस परमपिता परमात्मा के गुणों का गुणवादन कर रहा है। क्योंकि उसके गुणों का गुणवादन प्रायः मानवीय मस्तिष्कों में निहित रहता है।

ब्रह्मवेता ही मृत्युंजयी

तो परम्परागतों से ही मानव इस सन्म्बन्ध में उड़ान उड़ता रहा है, कि वह परमपिता परमात्मा अनुपम है अथवा उसका ज्ञान और विज्ञान भी अनुपम माना गया है। तो इसी की उपासना, इसी में रत रहने वाला प्राणी, अपने में यह स्वीकार करता रहा है, कि मैं मृत्यु से पार होना चाहता हूँ। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकाङ्क्षा लगी हुई है, और विचारता रहता है कि मैं अपने को मृत्युंजयी बनना चाहता हूँ और वह किसी का आश्रय लेता है तो उस परमपिता परमात्मा का आश्रित बन करके ही, उसके हृदय में यह विडम्बना है कि मैं उसका आश्रय ले करके ही मृत्यु से पार हो जाऊँगा। परन्तु यह एक बड़ा विचारणीय और गम्भीरतम एक रहस्यतम माना गया है। जिसके ऊपर परम्परागतों से ही, मानव अपने में अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि मैं मृत्युंजयी कैसे बनूँगा। वह नाना आचार्यों के समीप जाता रहा है और अपने में यह धारणा बना लेता है कि मानो मैं मृत्युंजयी बनना चाहता हूँ। तो प्रभु के द्वार पर जाये बिना तू मृत्युंजयी नहीं बन सकता। वह मृत्यु मानो आँगन का एक रूप धारण कर ही लेती है। जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही बेटा! अपने में अनुसन्धान करता रहा है। एक मानव ब्रह्मवेता बन करके, अपने में निर्णय कर लेता है कि मैं ब्रह्मवेता हूँ। परन्तु द्वितीय प्राणी उसे उपाधि भी प्रदान कर देते हैं ब्रह्मवेता वही मानव कहलाता है जो मानव मृत्यु के मूल कारण को जान लेता है। उसको उसके आचार्यजन उसे ब्रह्मवेता की उपाधि प्रदान कर देते हैं।

परन्तु आओ, मुनिवरो! आज मैं कुछ ऋषि-मुनियों के क्षेत्र में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ। कुछ ब्रह्म विचारकों के समीप मानो हम जाना चाहते हैं। जहाँ वह मृत्यु से, पार होने के लिये विवेचना प्रगट करते रहे हैं। हमने तुम्हें कई कालों में वह चर्चाएँ की हैं। परन्तु आज भी मुझे पुनः से स्मरण आती रहती हैं कि वास्तव में हम मृत्युंजयी बनना चाहते हैं। आओ, मेरे प्यारे! जब महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज की चर्चाएँ स्मरण आती रहती है। उनका जो क्रियाकलाप रहा है वह बड़ा विचित्र रहा है। दोनों प्रकार के विज्ञान में रत रहने वाला प्राणी यह विचारता है कि दोनों विज्ञान एक-दूसरे के पूरक कहलाते हैं। एक-दूसरे में आभाहित रहते हैं, जिसके ऊपर मानव को अपने में गौरव होता है कि मैं इसके मार्ग से हो करके, मुझे मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त होगी। मानव देखो, उसी पगडण्डी को अपनाना चाहता है। मेरे प्यारे! वह पगडण्डी क्या है? कि जो मोक्ष 'सम्भवं सम्भवाः'।

मृत्युंजयी बनने की पात्रता

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूँ। जहाँ महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते। ''ब्रह्मे ब्रह्म वाचाः'' मुनिवरो! देखो, एक समय कुछ ब्रह्मचारियों ने कहा-कि प्रभु! आज हम यह जानना चाहते है कि हम मृत्युंजयी कैसे बनेंगे? मेरे प्यारे! महर्षि

वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा-कि जब तक तुम्हारे हृदयों में अन्धकार की प्रतीति रहेगी, अज्ञानमयी यह जगत् तुम्हारा शरीर बना रहेगा तब तक मानो तुम मृत्युंजयी नहीं बन पाओगे। मेरे प्यारे! देखो उन्होंने उसके मूल कारणों की उत्कट इच्छा प्रगट की और यह कहा कि प्रभु! आप हमें निर्णय दीजिये कि हम मानो अन्धकार से केसे पार हो सकते हैं?

मृत्युंजयी बनने का सहज उपाय

तो मुनिवरो! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि तुम अपनी साधना में परिणत हो जाओ। क्योंकि साधक बन करके ही तुम प्रभु को प्राप्त कर सकोगे। उन्होंने कहा-कि भगवन्! हम तो मोक्ष की पगडण्डी को जानना चाहते हैं। यह मोक्ष की पगडण्डी मानव को केसे प्राप्त होगी? हम उस निर्णय को आपके द्वार से, आपके मुखारविन्द से पान करना चाहते हैं। उन्होंने कहा-कि मोक्ष की पगडण्डी तुम क्यों जानना चाहते हो? ब्रह्मचारियों ने कहा-प्रभु! प्रत्येक मानव अन्धकार को अपने से शान्त और प्रकाश में रत रहना चाहता है। इसलिये हम प्रकाश में रत, रहना चाहते हैं।

मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा कि मोक्ष की पगडण्डी उस काल में मानव को प्राप्त होती है जबकि अपनी ज्ञानेन्द्रियों को अपने में रत हो करके अपने में रहस्यतम गम्भीर वाक्यों में रत होता हुआ उसकी गम्भीरता में प्रवेश करके उसके मार्ग से ही वह गमन करता है। उन्होंने कहा-प्रभु! इस रहस्य को हम नहीं जान पायेंगे कि वह प्रकृतिवाद के मार्ग से हो करके जाना ही हमारा मानो प्रकाश में रत होना है। ऐसा आप उच्चारण करना चाहते हैं तो भगवन! आप हमें निर्णय दीजिये कि हम प्रकृति के मार्ग से केसे हो करके जायें ?

इन्द्रियों के विषयों का साकल्य

तो महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में जहाँ नाना ब्रह्मचारी शिक्षा का अध्ययन करते थे। ज्ञान, कर्म, उपासना के क्षेत्रों में वह मानो रत रहे हैं। और उसमें रत रह करके उसकी प्रतिभा को उन्होंने जाना। परन्तु देखो, जहाँ इस प्रकार की प्रतिभा विद्यालय में ज्ञान, कर्म, उपासना के सन्म्बन्ध में, शिक्षार्थी बने हुए हों आचार्य उनको शिक्षा देने वाले हों। उनके यहाँ जहाँ इस प्रकार की शिक्षा थी वहीं देखो, इन्द्रियों के ऊपर अनुशासन की चर्चा होती रहती है। और मानो वह साधक साधना में रत होते। तो मुनिवरो! देखो, महाराजा वशिष्ठ मुनि महाराज के यहाँ जहाँ शिक्षालय में शिक्षा का सदुपयोग और उसकी प्रतिभा ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ी जाती है, वहीं उनके यहाँ मानो साधकों का एक समूह विद्यमान हो करके साधना में रत हो जाते और साधना वह क्या थी कि प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों को जानना है, मानो उनके देवताओं को जानना है। और उसको जान करके उसका एक साकल्य बनाया जाता है। रूप, रस, गन्ध इत्यादियों का एक मुनिवरो! देखो, साकल्य बना करके वह जो हृदय रूपी मानव गुपफा में, जो याग हो रहा है, हृदय रूपी गुपफा में, जो एक अनुपम क्रियाकलाप हो रहा है, वहाँ प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों का एकत्रित करके, उस साकल्य के द्वारा ही तो हमें याग करना है। और वह याग मुनिवरो! देखो, आध्यात्मिक रूपों में रत रहने वाला है। वह आध्यात्मिकवाद कहलाता है। मानो उसे जब हम हृदय रूपी यज्ञशाला में जो अग्नि प्रदीप्त होती है। वह अग्नि कौन सी है? बेटा! जिस अग्नि के ऊपर ऋषि-मुनियो ने बड़ा अनुसन्धान किया है। आचार्यों ने कहा है कि एक-दूसरे में रत रहना ही ऊर्ध्वा में रत होने वाली प्रतिभा कहलाती है। जिसके ऊपर प्रत्येक मानव अपने में अनुशासन की प्रतिक्रिया को जान लेता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा कि हे साधको! तुम्हें यह निर्णय कराना चाहता हूँ कि प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों का साकल्य बनाओ। साकल्य केसे बनाया जाता है? बेटा! एक ध्वनि हो रही है। यह

संसार अपने में ध्वनित हो रहा है। वाणी ध्वनित होती हुई वह दिशाओं की प्रतिभा बन जाती है। और प्रतिभा बन करके वही श्रोत्रों में रत हो जाती है वही श्रोत्रों में प्रवेश करके वही शब्द, उसी ध्वनि के साथ में रूप का, शब्दों का मानो सबका एक समन्वय रहता है। जब एक दूसरे का समन्वय एक दूसरे में मानो प्रतिपादितता दृष्टिपात आती है तो मानो देखो, वही तो एक साकल्य बन करके रहता है। मेरे प्यारे! देखो, घ्राण से सुगन्ध को ले लिया जाता है। श्रोत्रों से शब्दों को, दिशाओं को ले लिया जाता है और नेत्रों से रूप की ज्योति आ जाती है। रसना से रसों की ज्योति आ जाती है। मेरे प्यारे! त्वचा से प्रीति, ''प्रेया ब्रहो वाचम्'' मुनिवरो! देखो, सर्वत्र इन्द्रियों का यह एक व्यापार हमारे समीप आ जाता है। यही व्यापार मानो देवताओं से सम्बन्धित है। मेरे प्यारे! देखो, किन्ही से पृथ्वी का समन्वय है तो किसी का चन्द्रमा से समन्वय है, किसी का मानो सूर्य से समन्वय है। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार दिशाओं का अप्रतम शब्दों की धाराओं में रत होने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, यह सर्वत्र इन्द्रियों का एक समूह उनका देवता और सब मानो देखो, हमें एक साकल्य के रूप में ही दृष्टिपात आने लगता है। वही साकल्य बन करके मेरे पुत्रो! देखो, हृदय रूपी यज्ञशाला में जब योगेश्वर याग करता है, तो मेरे पुत्रो! देखो, याग करता-करता वह अपने में अनुभव करने लगता है कि मैं तो प्रकाश में रत हो गया हूँ मैं अपने में मौन हो गया हूँ ''मोक्षं ब्रह्म वाचन्नमम्'' जब तक मानव की ज्ञानेन्द्रियों के विषय मानो व्यापक रूप से बाह्य जगत् में बने रहेंगे, तब तक मुनिवरो! देखो, वह मानव मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण नहीं कर सकता। उसे मोक्ष की पगडण्डी प्राप्त नहीं हो सकती है। मेरे प्यारे! देखो, जहाँ हृदय से हृदय का समन्वय हुआ तो बेटा! सर्वत्र जगत इसमें समाहित हो जाता है।

ब्रह्म की प्रतिष्ठा

जैसा मुझे स्मरण है बेटा! मैंने तुम्हें कई काल में प्रगट करते हुए यह कहा था। मेरे प्यारे! देखो, मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूँ जहाँ ऋषि मुनि अपने में अन्वेषण करते रहे हैं। बेटा! एक समय वशिष्ठ मुनि महाराज के द्वार सोमकेतु मुनि महाराज का पदार्पण हुआ और सोमकेतु ऋषि ने कहा-कि महाराज! हमने यह श्रवण कर लिया है कि आप ब्रह्मवेता है। आपको ब्रह्मवेता की उपाधि प्राप्त हो गयी है। वास्तव में आप ब्रह्मनिष् कहलाते हैं। परन्तु हम यह जानना चाहते हैं कि जब इस ब्रह्म की प्रतिष मानो महत् तत्व में प्रवेश कर जाती है तो पुनः से गति का प्रादुर्भाव केसे होता है? मैं यह जानना चाहता हूँ कि आत्मीयता में इसकी जो प्रतिभा का जन्म होता है वह केसे होता है?

तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज बोले कि इसके दो प्रकार के चरण, दो चरणीय वाक् कहलाता है। तुम कौन से चरण को जानना चाहते हो? मेरे प्यारे! सोमकेतु ऋषि ने यह कहा कि मैं उस चरण को जानना चाहता हूँ जिस चरण का समन्वय मानव की अन्तरात्मा से रहता है बाह्य प्रकृति से भी उसका व्यापक रुप से समन्वय होता है। तो मेरे प्यारे! देखो, जब उन्होंने यह वाक् श्रवण किया तो ''ब्रह्म वाचः लोकं प्रह्वाम्'' उन्होंने कहा प्रभु! अब आप श्रवण करके इसको अपने में ''श्रवणा वाचं ब्रह्म वाः'' तुम श्रवण करते रहो, जितना मैं जानता हूँ पूर्ण रूपेण तो आपको निर्णय नहीं दे सवूँफगाँ क्योंकि आप तो महान तपस्वी रहे है, विज्ञान भी आपका विशाल रहा है। सोमकेतु ऋषि! मैंने आपके किसी काल में दर्शन किये थे। जब मैं अपने पूज्य पिता जी के साथ में पितर के साथ में, भ्रमण करते हुए आपके आश्रम में पहुँचे थे। उस समय आप मानो देखो, यन्त्रों में विद्यमान हो करके लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ते थे।

परन्तु देखो, वह काल मुझे स्मरण है, मैं यह जानता हूँ कि लेक लोकान्तरो में भौतिक विज्ञान के ऊपर

तुम्हारा आधिपथ्य रहा है। परन्तु मुझे वहाँ यह भी स्मरण है कि तुम आत्मा की उड़ान भी उड़ना जानते हो। आत्मवेता बन करके तुम ऐसे आनन्द को ग्रहण कर चुके हो, जिसको मैं बहुत पुरातन से जानता हूँ। परन्तु देखो, मेरा अन्तर्हृदय यह कहता है कि तुम्हारा प्रसङ्ग है मानो देखो, उसकी एक गति ध्रुवा रहती है एक ऊर्ध्वा में रहती है और यही प्रश्न किसी काल में अश्वेत ऋषि महाराज से किया था। आज मैं पुनः से तुम्हें उसी प्रसङ्ग में ले जाना चाहता हूँ। यह प्रसङ्ग हमारे समीप कई काल में आया है। परन्तु इसका अभिप्राय इस प्रसङ्ग का ''ब्रीहि वाचं ब्रह्मा वाचनोति घृणां ब्रहे वाचो ब्रह्मा सम्माति लोकाम्'' मानो देखो, मैं तुम्हें बहुत सूक्ष्म-सी चर्चा करूँगा और वह विवेचना क्या है।

चन्द्रमा की व्यापकता

वशिष्ठ मुनि बोले चन्द्रमा से महत् तत्व की उग्र गति का जो प्रादुर्भाव होता है इस संसार की आत्मा की ध्वनि के साथ में, तो मुझे तो कुछ ऐसा प्राप्त हुआ है कि मानो उस ध्वनि का प्रादुर्भाव एक रूपों से अभ्योगति से होना प्रारम्भ हो जाता है। जिसकी धाराएँ मानो विचित्र मानी जाती हैं। सबसे प्रथम यह चन्द्र लोकों से प्रारम्भ होता है। चन्द्र लोको से प्रारम्भ इसलिये होता है क्योंकि चन्द्रमा सोम की वृष्टि करने वाला है यह जो महत् तत्व का, प्राण जो यह आत्मा के साथ में तीव्रता से गमन करता है। तो मानो सबसे प्रथम चन्द्रमा की प्रतिभा आती है, यह चन्द्रमा सोम की वृष्टि करने वाला है, यह चन्द्रमा सोम कहलाता है। यही चन्द्रमा है, जो अमृत बहाता रहता है। यही चन्द्रमा है, जो मानव को एक अमृतमयी बना करके, मानव को आनन्द की प्रतीति प्रदान कर देता है। यह चन्द्रमा अपने में देखो, व्यापक रूपों से रत रहता हुआ, यह सोम कहलाता है।

अमृतदाता चन्द्रमा

एक समय कुछ देवताओं का एक समूह एकत्रित हुआ। तो देवताओं के समाज में भी यह प्रश्न आया। देवताओं ने कहा-कि अमृत को देने वाला कौन है? उन्होंने कहा-चन्द्रमा है। मानो चन्द्रमा का समन्वय महत् तत्व से ले करके समुद्रों तक रहता है। वह समुद्रों से जलों का उत्थान करके मानो मेघों तक रहता है मेघो से जब उसका रसिका स्वरूप में मानो वह चन्द्रमा बन जाता है। तो वह पृथ्वी को नाना प्रकार का सोम प्रदान कर देता है। वही सोम सोमवृतिका बन करके मानव के जीवन में एक रसोमयी बन करके देखो, एक अश्तो बन जाता है। जैसा पुरातन काल के आचार्यो ने वर्णन करते हुए कहा है कि यह चन्द्रमा सोम है। यह चन्द्रमा ही माता के गर्भ स्थल में सोम की स्थापना करने वाला है। यही चन्द्रमा है जो पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार के सोम को स्थापित कर देता है। यही सोम है जो मानो देखो, दिशाओं में वायु रूप में परिणत हो करके इसकी आभा में रत हो जाता है। यह सोम ही सोम कहलाता है।

सोमलता

बेटा! जब मैं यह विचारता हूँ कि सोम की एक रुवाणित नामक कान्ति कहलाती है, एक किरण देखो, आभा कहलाती है। जिसका सन्बन्ध हिमालय के पर्वतों से होता है। हिमालय के ऊर्ध्वा भाग में एक सोमलता का जन्म होता है। उस सोमलता का जन्म पूर्णिमा के दिवस उस कान्ति का देखो, उस आभा में उसका जन्म हो गया। पूर्णिमा के दिवस उसका जन्म होता है। उसको आयुर्वेदाचार्य जानते हैं। उस सोमवृतिका औषध को ला करके, जब उसको स्वर्णिवानकेतु औषधियों से उसका समन्वय कर देते हैं तो जीवन की धारा उज्ज्वल बन करके देखो, उस सोम को योगेश्वर पान करते हैं। उसी को पान करते हुए उसको अपने में धारण करते हुए ब्रह्मरन्ध्र का अनूठा एक प्रकाश, प्राण के द्वारा उन्हें प्राप्त होने लगता है। आज बेटा! मैं इस विज्ञान में जाना नहीं चाहता हूँ।

तो मैं यह वाक् प्रगट कर रहा हूँ कि यह चन्द्रमा सोम के देने वाला है यह सोमवृतिका कहलाता है। परन्तु देखो, उस समय सोमकेतु ऋषि ने कहा वशिष्ठ से हे प्रभु! यह तो मैं जब बाल्यकाल में अध्ययन करता रहता था, तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इसको मुझे प्रगट कराते रहते थे, निर्णय देते रहते थे। मैं उस निर्णय को जो मेरे पिता पितरों ने प्रगट किया है मैं उसको जानना नहीं चाहता हूँ। मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह चन्द्रमा सोम को देने वाला है, तो चन्द्रमा को प्रकाश कौन देने वाला है?

मेरे प्यारे! देखो, इसमें 'प्रकाशां भविते' मानो सूर्य की गणना प्राप्त होने लगी कि यह जो सूर्य है, जिस तरह यह चन्द्रमा सहायता को अपने में ग्रहण करने लगता है। मानो देखो, चन्द्रमा सूर्य की नाना प्रकार की कान्तियाँ आ रही है किरणें आ रही है उनमें सोम भी है। उनमें विष्ट का भी है मानो देखो, सर्वशः रचना का एक विज्ञान विद्यमान है। तो वह जो एक आभा में रत हो रहा है वही तो मानो देखो, देवत्व को प्राप्त हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन कराया कि यह सूर्य प्रकाश के देने वाला मानो चन्द्रमा को सोम, चन्द्रमा को प्रकाश दे करके यह स्वतः सोम बन जाता है। मानो यही सूर्य है जो प्रकाश दे रहा है। यह सूर्य अपने में मानो अदिति कहलाता है।

मुनिवरो! देखो, एक समय महाराजा ज्ञानश्रुति, सोमकेतु ऋषि, अवरेत ऋषि, अर्धमाग जैसे ऋषि एक समय महाराजा अश्वपति के अश्वमेघ याग में पहुँचे। वे अश्वेमघ याग करा रहे थे। तो मानो देखो, यह जा करके उद्गाता, परिणत हो गये। उस समय ऋषि अर्धमाग यजमान ने कहा, राजा अश्वपति ने कहा कि तुम इस याग में विद्यमान हो गये हो। मैं यह जानना चाहता हूँ कि जिस याग के तुम उद्गाता बने हो। उस याग का देवता कौन है? तो उस समय उन्होंने कहा कि उस याग का देवता सूर्य कहलाता है। उन्होंने कहा-कि जब जिस याग में तुम विद्यमान हो, जिस याग के उद्गाता बने हो मानो उसका उद्गीत गाने वाला देवता कौन है ? उन्होंने कहा-उसका उद्गीत गाने वाला वायु कहलाता है। उन्होंने कहा हे अर्धमाग! जिस याग में मानो देखो तुम विद्यमान हो गये हो देखो मैं जानना चाहता हूँ कि उस याग का देखो, अध्वर्यु कौन है ? और अध्वर्यु बन करके उसका देवता कौन है उन्होंन कहा अध्वर्यु का देवता वरुण कहलाता है। जो याग में 'अन्नपते' बन करके याग को पूर्ण करा रहा है। मेरे प्यारे! देखो, जिस प्रकार के उतर देते रहे तो उससे यह सिद्ध हो गया कि अब यह उदगाता के सुयोग्य है।

तो भगवन्! मैं यह जानना चाहता हूँ कि जब उन्होंने अप्रतम् अर्धमाग ने यह कहा कि देवता सूर्य है तो क्या भगवन्! मैं यह जानना चाहता हूँ कि चन्द्रमा का देवता सूर्य कहलाता है, यह सूर्य अपने में सोम की वृष्टि करता है या प्रकाश की करता है ? उन्होंने कहा हे ऋषिवर सोमकेतु! आप तो जानते है कि यह सूर्य सोम और प्रकाश दोनों का देने वाला है। जब इसी की कान्ति बन करके समुद्रों से मिलान करके चन्द्रमा में उस समय सद्वतिकरण हो जाता है तो उस समय सोम देता है। जब यही मानो देखो, प्रकाश पृथ्वी से समन्वय करता हुआ रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है, तो यही सूर्य मानो प्रकाश का द्योतक कहलाता है।

मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वाक् प्रगट किये तो मानो देखो, सोमकेतु मुनि मौन होने लगे। उन्होंने कहा-हे ऋषिवर! मानो देखो, एक-एक देवता अपना अपना क्रियाकलाप कर रहा है। मैं उसके सन्म्बन्ध में कोई विवेचना नहीं दूँगा। परन्तु यह सूर्य अदिति कहलाता है। यह अदिति इसलिये कहलाता है क्योंकि आदित्य है। यह ब्रह्मचर्य का, ब्रह्मचारियों का ।केत्र है। मानो यही तो उज्ज्वल प्रकाश देता है। इसी की रक्षा करने वाला मानो प्रकाश में रत हो जाता है।

चाक्राणी-गार्गी का ब्रह्मचर्य पर उद्बोधन

मेरे प्यारे! देखो, मुझे इस सन्दर्भ एक वाक् स्मरण आ गया है समय बेटा! देखो, चाक्राणी गार्गी अपने ब्रह्मचर्य व्रतों से अपने में गान गा रही थी। मानो देखो, ब्रह्मचर्य व्रतों का अभिप्राय यह है कि प्रत्येक श्वास के साथ में उसको किसी सूत्र में पिरो रही थी, जब वह सूत्र में पिरो रही थी तो एक समय उनके द्वारा हरितत ऋषि महाराज उनके समीप आये हरितत पारेश्वर ऋषि महाराज जब उनके, समीप आये तो उन्होंने कहा-कि यह तुम क्या कर रही हो ? उन्होंने कहा देखो, मैंने उस सूर्य का, उस अदिति का व्रत लिया है और अदिति के व्रत को ले करके मैं प्रत्येक श्वास को किसी सूत्र में पिरो रही हूँ। किसी सूत्र में पिरोना चाहती हूँ। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि हे देवी मातेश्वरी! यह तो दो प्रसङ्ग हो गये हैं। कि मैं सूत्र में पिरोना चाहती हूँ और पिरो रही हूँ तो इसके दो स्वरूप बन गये हैं। उन्होंने कहा-भगवन! दो नहीं हैं, एक ही कहलाता हैं। जब मैं इस सूत्र को बना करके एक-एक श्वास को सूत्र में परिणत करती, मनके में मनके का रूप धारण करा करके, मानो मैं ब्रह्म सूत्र में अपने को पिरोना चाहती हूँ। मैं ब्रह्मवर्चोसि उसी काल में बन सकती हूँ। जबकि मेरा यह सूत्र अपने में सूत्रित हो करके और मनके का रूप अपने में धारण करके एक विश्वसनीय रूप आभा में रत हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा-इसकी उदाहरणता ?

नाभि व हृदय के मध्य अमृत

उन्होंने कहा-एक समय जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के समीप, भ्रमण करते-करते मानो मैं एक समय ब्रह्मा के द्वार पर पहुँची थी। उस समय ब्रह्म जी रावण को शिक्षा दे रहे थे। रावण को नाभि केन्द्र की चर्चा प्रगट करा रहे थे कि नाभि जो केन्द्र है इसमें मानो एक अमृत की स्थली होती है, जिस अमृत को वह जान लेता है वह मृत्यु से पार होने का प्रयास कर लेता है। वह मृत्युंजयी बन जाता है। परन्तु देखो, वह उसको नाभि चक्र की विशेषता का वर्णन करा रहे थे। जब उसका वर्णन करा रहे थे तो मैंने भी ब्रह्मा जी से यह वार्ता प्रगट की थी। यह देखो, त्रेता के काल से अब तक यह ब्रह्मा की एक उपाधि चली आ रही थी। तो उस समय, ''ब्रह्मवाचा वाचन्नम् ब्रह्माकृति लोकम्'' मैंने जब उनसे चर्चाएँ कीं, तो उन्होंने मेरे प्रश्नों का उतर दिया और यह कहा कि वास्तव में देखो, हृदय से निचले स्थान में मानो जो नाभि केन्द्र है, उसका हृदय से समन्वय होता है। और हृदय और नाभि के मध्य में मानो एक स्थलि है, उसको अमृतमयी कहते है। उस अमृतयमी नाभि केन्द्र से मानो जो उत्थान होता है हृदय से उसका समन्वय होता है या हृदय से नाभि तक उसका समन्वय होता है। जो भी मानव मृत्युंजय बनना चाहता है वह नाभि केन्द्र वाले अमृत के रूप को जानता चला जाये। उसको अपने में धारण करता चला जाये, तो वह जो अमृतमयी धारा है उसके मनके बना करके ब्रह्मसूत्र में प्रवेश करना चाहता है। यह ब्रह्म ने यह वाक् प्रगट किये। वही उनको शिक्षा देते थे।

बेटा! उस समय उनके द्वारा कुछ ही ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे। एक तो रावण था, एक सुखवेक्तर ऋषि महाराज थे। जो पारा ऋषि के महापिता कहलाते थे। एक श्वंजनिकेतु ऋषि महाराज अध्ययन करते थे, देखो, जो उद्दालक गोत्रीय ऋषि कहलाते थे। यह तीन ब्रह्मचारी अध्ययन करते थे उस काल में। जब यह वरुण, वृतिका सोमविष्ट अश्व में मानो देखो, नाभि केन्द्र को जानने के लिए।

तो उन्होंने कहा-कि इसलिये मेरे दो स्वरूप बने हैं एक मैं मनके पिरोना चाहती हूँ, एक मानो पिरो रही हूँ। देखो, पिरोना तो यह चाहती हूँ कि मैं अपने अन्तःकरण की प्रविष्ट यों को जान करके मन की आभा को प्राण में पिरोना जानती हूँ। और एक यह है कि मैं मन और प्राण दोनों का समन्वय करती हुई मानो मैं ब्रह्मसूत्र में पिरोना चाहती हूँ ये भिन्न-भिन्न दो स्वरूप बन गये है। वाक्यों के, यह ध्वनित हो रहा है।

आदित्य की बृहद् विवेचना

तो सोमकेतु ऋषि महाराज ने वशिष्ठ मुनि महाराज से कहा-कि महाराज जब मैंने यह अपने में जानने की उत्कृष्ट इच्छा कीं तो उस समय यह प्रतीत हो गया ''ब्रह्म वाचो देवाः'' अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह जो अदिति है। वह अदिति तो वह सूर्य है। परन्तु देखो, वह जो सूत्र है, वह क्या है? तो मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा-कि अदिति तो उसे कहते हैं जो नियमबद्ध है प्रातः काल उदय हुआ, सायघ्काल को अस्त हो गया। पृथ्वी की आभा में रत होता हुआ पुनः क्योंकि वह सदैव प्रकाश देता रहता है। क्योंकि जब मानव यह जानता है कि सूर्य की प्रतिक्रियाएँ, किस प्रकार उसका क्रियाकलाप हो रहा है तो उस क्रियाकलाप के आधार पर यह सूर्य अपने में ध्वनित हो रहा है। अपने में ही प्रतिक्रिया रूपों में रत हो रहा है।

तो उस समय सूर्य को अदिति कहते है, यह अदिति है जो नियमबद्ध है जैसे वृष्टि व्रतो को धारण कर लेता है, व्रती बन जाता है इसी प्रकार यह अदिति कहलाता है, यह भासता, प्रकाश देता रहता है। ब्रह्मवर्चोसि को अपने में धारण करता हुआ उसका देवता कौन ? आदित्य कहलाता है। इस अदिति का देवता आदित्य मानो देखो, उसका द्यौ ही देवता कहलाया गया हैं। द्यौ ''अम ब्रह्मा वाचन्नमं ब्रह्म लोकाम्'' उस अदिति का देवता मुनिवरो! देखो, द्यौ कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, द्यौ से वह एक व्रत द्यौ में प्रवेश कर जाता है। उसी में व्रत को धारण करता है। उसी व्रत को ले करके, यह प्रकाश का द्योतक बन करके, अमृत को बहाता रहता है। यह अमृत का भी द्योतक है और प्रकाश का भी द्योतक है। क्योंकि प्रकाश ही अमृत है, अमृत ही प्रकाश है। मेरे प्यारे! दोनों एक ही सूत्र की प्रतिभा कहलाते हैं।'

लोक-लोकान्तरों की विशालता

तो बेटा! मैं इन वाक्यों को गम्भीर न बनाता चला जाऊँ विचार केवल यह है कि देखो, ''ब्रह्मवाचं ब्रह्म लोकां वायु सम्भवाः देवाः लोकाः'' जब वेद के ऋषि ने इस प्रकार वर्णन कराया तो उस समय पुनः यह कहा-कि महाराज अदिति का, सूर्य का देवता कौन हैं ? उन्होंने कहा-इसका देवता मानो-ऊर्ध्वा में जानना चाहते हो, या ध्रुवा में। उन्होंने कहा-मैं ऊर्ध्वा में जानना चाहता हूँ? तो ऊर्ध्वा में तो इसका देवता गन्धर्व कहलाता है। वह गन्धर्व क्यों देवता है ? जबकि इसका देवता पूर्व ही द्यौ बन गया है। तो यह केसे देवता बना ? तो बेटा! यह बड़ा गम्भीर रहस्यतम एक विचार है क्योंकि यह जो गन्धर्व है। मैंने कई काल में तुम्हें वर्णन कराते हुए कहा था कि यह गन्धर्व मानो ऐसा देवता है इस अदिति का मुनिवरो! देखो, जिसमें एक सौर मण्डल का अधिपति मानो यह अदिति है यह अदिति क्या? ''ब्रणीवाचम्'' मानो इसमें अरबों, खरबों अदिति समाहित हो जाते हैं। मैंने कई काल में कहा था कि जितना विशाल यह सूर्य है इतने विशाल एक सह।क् सूर्य बृहस्पति इनका विष्ट कहलाता है। और देखो, एक सह।क् बृहस्पतियों का अरूण देखो, वह ''अप्रतं मंगला ब्रहे वासं भविते देवाम्'' देखो इसको हम भयवास्ति कहते हैं। वह आरुणि में प्रतिभा समाहित हो जाता है एक सह।क् आरुणि जो मानो देखो, ध्रुव एक उसकी अवन्ति रूपों में अवन्तिका कहलाती है। मानो देखो, एक सह।क् धुरवों की मानो एक मूल नक्षत्र अवन्तिका बन जाती है और एक सह।क् मूल नक्षत्रों की मानो देखो, यह जो स्वाति है यह उसकी अवन्तिका बन जाती है। और इसी प्रकार देखो, जो ''गन्धमानि वाचक लोके'' मानो वह उसकी अवन्तिका बनती है। अचंगलोक अवन्तिवृतियों की मानो अवन्तिका बन जाती है। इसी प्रकार मानो देखो, बनते-बनते एक गन्धर्व अवन्तिका बन जाती है। गन्धर्व अवन्तिका बनते ही तो मानो देखो, इसकी ऊर्ध्वा गति को ले जाने वाला है। जो मानो देखो, उस गन्धर्व के ऊपर, जब मानव ने चिन्तन करना प्रारम्भ किया, और चिन्तन करते-करते बेटा! अरबों-खरबों सूर्य नहीं मानो देखो, अगणित सूर्यों की

उसमें समाहित होने की देखो, वृतियाँ बन गयी। मानो बेटा! चिन्तन करता-करता समाधिष्ट हो गया और समाधि में जब गन्धर्व के आँगन में पहुँचा तो गन्धर्व के क्षेत्र में जा करके बेटा! एक नवीन ब्रह्माण्ड इसके समीप आ गया। जब यह ब्रह्माण्ड एक नवीन बन गया तो मानो देखो, लघु मस्तिष्क और ओम्केतु मस्तिष्क में जा करके बेटा! उसको अपने में समाहित किया और ब्रह्माण्ड को अपने में दृष्टिपात करने लगा। तो मानो यह साधकों की प्रतिभा कहलाती है।

इन्द्र की विशद व्याख्या

मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के अध्ययन करने की कोई सीमा तो नहीं थी, वह अध्ययन करते रहते थे। परन्तु देखो, महाराजा सोमकेतु ऋषि महाराज ने कहा-ऋषिवर! आप तो ब्रह्मवेता है मैं यह जानना चाहता हूँ कि अवन्तिका इसकी बनती है। तो यह मानो जो गन्धर्व वृणी कहलाता है इसकी भी कोई अवन्तिका है ? उन्होंने कहा-इन्द्र है। वह इन्द्र मानो देखो, भिन्न-भिन्न रूपों में रहता है। एक इन्द्र बाह्य जगत् में, राजा को इन्द्र कहते है, जो राजाओं का भी अधिराज कहलाया जाता है। एक हमारे यहाँ प्रायः देखो, परम्परागतों से ही एक उपाधि मानी जाती है। जिसको हमारे यहाँ इन्द्र उपाधि कहते हैं। वह इन्द्र उपाधि इसलिये है क्योंकि राजाओं के ऊपर एक अधिराज की उपाधि प्रदान की जाती है। जो एक सौ एक अश्वमेघ याग करने वाला है उसको इन्द्र कहते हैं। एक तो वह राजाओं में विशिष्ठ राजा कहलाता है। एक परमपिता परमात्मा को इन्द्र कहते हैं। एक आत्मा को भी इन्द्र कहा जाता हैं जो इन्द्रियों को अजय, जो इन्द्रियों को अपने वशीभूत करने वाली, जो इन्द्रियों का स्वामीत्व करने वाली है, वह आत्मा है। वह ''जानाति जन्म ब्रह्म'' वह ज्ञान की कुंज कहलाती है।

अनुपम ब्रह्माण्ड

इसी प्रकार आगे वेद के ऋषि ने बेटा! बहुत ऊँची वार्ता प्रगट की उन्होंने कहा यह जो इन्द्र है यह इन्द्र भिन्न - भिन्न रूपों में परिणत रहने वाला है। यह इन्द्र जो अपने में अनुसन्धान करता हुआ, आत्मा को भी इन्द्र कहते है क्योंकि वह इन्द्रियों का स्वामी है। इसी प्रकार परमात्मा को इन्द्र कहते है, क्योंकि वह प्रकृति का स्वामीत्व करने वाला है। मेरे प्यारे! देखो, यह प्रकृति का जो स्वामीत्व करने वाला है, इसी को इन्द्र कहते है। हे इन्द्र! एक इन्द्र मण्डल होता है। जिसमें गन्धर्व भी समाहित हो जाता है, वह इन्द्र कहलाता है। परमात्मा का जगत्, परमात्मा का ब्रह्माण्ड जो बड़ा एक अनुपम कहलाता है। एक आश्चर्य चकित होने वाला यह ब्रह्माण्ड हमें प्रतीत होता है। जिसके ऊपर हम चिन्तन और मनन करना प्रारम्भ करते हैं। जब हम मनन करने लगते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है, कि अनुपम ब्रह्माण्ड उस मेरे देव का एक अनन्तमयी मुझे दृष्टिपात आता है। इसी प्रकार एक-एक लोक में रचना अथवा उसकी प्रतिभा के ऊपर चिन्तन करना प्रारम्भ करते हैं तो बेटा! एक अनुपम ब्रह्माण्ड हमारे समीप आ जाता है।

मैं विचारता रहता हूँ मैंने बहुत पुरातन काल में मुनिवरो! देखो, हमें ऋषि-मुनियों के क्षेत्रों में जाने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा। विचारणीय एक-एक वाक् थे, निर्णय जिसके ऊपर बेटा! देखो, इन्द्र की उपाधियाँ प्रदान की जाती हैं। क्योंकि इन्द्र नाम सूर्य का भी है। क्योंकि यह रात्रि का पति है इसलिये इसे इन्द्र कहते हैं। इसी प्रकार यहाँ पर्याय शब्दों में मानो प्रातःकाल जब इन्द्र की धाराओं का जन्म होता है, तो मानव अपने में प्रकाशित हो जाता है। वह प्रकाश का द्योतक कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो यह जो इन्द्र है, एक सौ एक याग करने वाला, अश्वमेघ याग करने वाला इन्द्र है। यही तो मानो देखो, अधिराज का, स्वामीत्व करने वाला है।

अश्वमेघ याग

आत्म उत्थान

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है कई कालों में बेटा! अश्वमेघ याग कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अश्वमेघ याग वह कहलाता है मानो राजा एक अश्व को त्यागता है स्वर्णों से उसवफो ङाद्दगारित करके और जब वह भ्रमण करता है और जब उसको कोई ग्रहण करने वाला न रहे मानो देखो, उस राजा को अवश्मेघ याग करने का अधिकार होता है। वह अश्वमेघ याग करता है इसी प्रकार मानो देखो, ''अश्व अमृतं ब्रह्म वाचा'' अवश्मेघ याग एक सौ एक करके वह राजाओं का धिराज बनता है। वह राजाओं को भी मानो अपनी शिक्षा अपनी प्रणाली नियुक्त करा देता है। इसी प्रकार ये तपस्यिं का एक प्रकरण आ गया है।

परन्तु विचार क्या मानो वैद्यराज इन सब तत्वों को जान करके अपने में परीक्षण करके उसको प्रयोग में लाता है परन्तु वह विज्ञान उस मेरे देव का है, उस इन्द्र का है, उस इन्द्र की यह प्रतिभा है जो उसको नियम में नियमित कर रहा है, नियन्त्रण में चला रहा है, गति दे रहा है तो मेरे प्यारे! वह केसा! अनुपम अधिराज इन्द्र है जो मेरे पुत्रो! देखो, प्रत्येक लोक एक दूसरे में समाहित हो रहा है, एक दूसरे को सहायता दे रहा है, एक दूसरे का सद्दतिकरण बना हुआ है। मेरे प्यारे! वही संगतिकरण ही तो ब्रह्माण्ड की प्रतिभा को स्थिर करने वाला है तो मेरे प्यारे! देखो, वह इन्द्र है। वह इन्द्र बनकर के ही इन्द्रेश्वर कहलाता । मेरे प्यारे! देखो, इन्द्र बन करके अपनी धाराओं में मानव को रत करा रहा है। इस ब्रह्माण्ड को अपने में ब्रह्माण्डित कर रहा है। इसके ऊपर मानव चकित हो जाता है।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष विवेचना तो देने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह कि मैं महर्षि सोमकेतु और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनो का सम्वाद, मैं उस सम्वाद में चला गया था। देखो जिस सम्वाद में महान आचार्य विद्यमान होकर के अपने निर्णय एक आभा में रत हो जाते थे। तो मेरे पुत्रो! देखो, ये गन्धर्व, इन्द्र में देखो, इन्द्र ही उसकी अवन्तिका कहलाती है वह उसमें समाहित हो जाता है। उसमें समाहित होकर के इन्द्र एक मण्डल भी कहलाता है। जहाँ इन्द्र राजा है जहाँ आत्मा है, जहाँ प्रभु है वहाँ एक मण्डल का नाम भी इन्द्र कहलाता है। इन्द्र लोक भी कहलाता है। जैसे बेटा! गन्धर्व लोक है इसी प्रकार इन्द्र भी एक लोक कहलाता है। मानो देखो, एक अवन्तिका का अन्तिम छोर कहलाता है। एक आकाशग्ांगा का एक मूलक कहलाता है। मानो उसे हमारे यहाँ इन्द्र कहते हैं। वह जो इन्द्र है वही तो मानो धिराज बनकर के हमारा पालन कर रहा है। हे देव! तू केसा अनुपम है। हे देव! तू केसा वैज्ञानिक है। हे देव! तू कितना महान है। हे देव तू कितना विशाल है जो मानव तपस्या करते-करते तेरी प्रतिभा को जानने में असमर्थ हो जाते है। तू ऐसा महान है।

तो मेरे पुत्रो! इस प्रकार की विवेचना हमारे प्रायः ऋषि मुनियों में ब्रह्मवेताओं में रही है। तो मुनिवरो! ब्रह्मवेताओं की चर्चा तो मैं कल ही प्रगट करूँगा। आज तो केवल मैंने एक भूमिका ही बनायी है। परन्तु शेष वाक् तो कल ही प्रगट करूँगा। आज का विचार तो केवल ये कि आज मुनिवरो! देखो, मैं इन्द्र की विवेचना कर रहा था। एक मानो देखो, गन्धर्व देखो, एक शून्य बिन्दु से, मानो देखो, जिसे महत् तत्व कहते हैं उससे गति उत्पन्न हुई, वह गति कहाँ तक पहुँची है ? मानो देखो, अमृतः प्रकाशः वही मानो देखो, गन्धर्व धाराओं में प्रतिभा और मानो देखो, इन्द्र तक पहुँची। उसके आगे की शेष चर्चायँ तो मैं कल ही प्रकट कर सकूंगा। बेटा! आज का विचार हमारा क्या कह रहा है आज के विचार उच्चारण करने का अभिप्राय हमारा क्या? कि हम परम पिता परमात्मा की आराधना करते हुए मानो साधक बनें, हम साधना करने वाले हो, और साधना ऐसी-पाँच ज्ञानेन्द्रियों का जो विषय है, उनका जो स्वरुप है उसका एक साकल्य बनाया जाये। और ज्ञान रूपी अग्निमें मानो उसका स्वाहा कहकर के हम आध्यात्मिक याग में परिणत हो जाये। ये है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा तो मैं तुम्हें आगे की शेष चर्चा कल प्रगट करूँगा। कल बेटा! महर्षि सोमकेतु और वशिष्ठ का जो सम्वाद है गम्भीरतम वे वाक्य कल

प्रगट कर सकेगें। आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा। दिनांक, 11-4-85, 61/9, पंजाबी बाग, नयी दिल्ली।